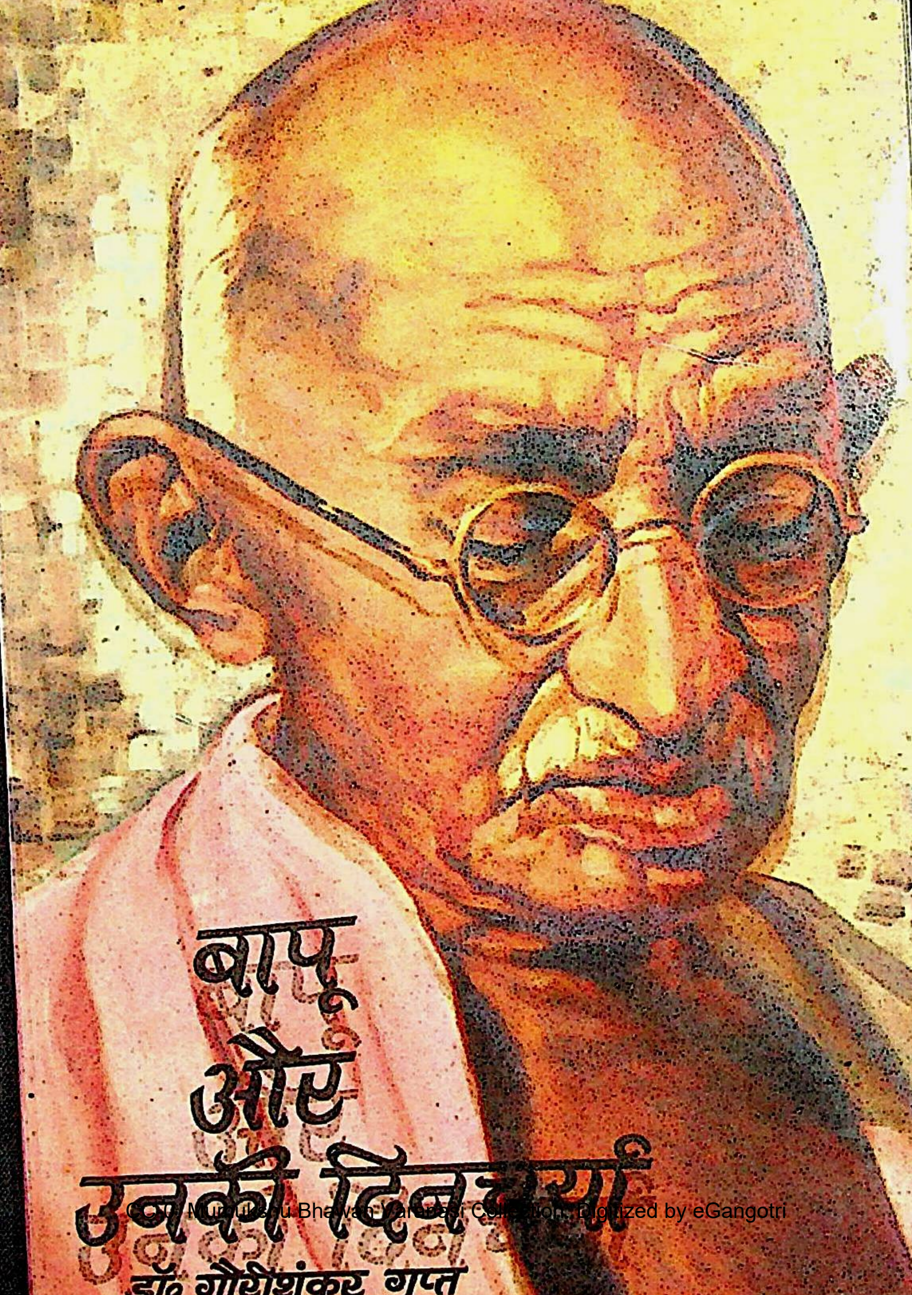

बापू और उनकी दिनचर्या

डॉ॰ गौरीशंकर गुप्त

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

क्र० सं०............
दिनांक...............
अस्सी, वाराणसी।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बापू और उनकी दिनचर्या

•

मेरे जीवन का चित्र

मेरी दिनचर्या बताये बिना

अधूरा ही रह जायगा ——बापू

•

लेखक

डॉ० गौरीशंकर गुप्त

प्रकाशक

राष्ट्रपिता प्रकाशन

गायघाट, वाराणसी-१

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रकाशक :

राष्ट्रपिता प्रकाशन

गायघाट, वाराणसी-२२१००१

विशेष संस्करण

१२५वीं गांधी-जयंती : १९९४-९५ ई० (सं० २०५१-'५२ वि०)

© सर्वाधिकार सुरक्षित

मूल्य : अस्सी रुपये

मुद्रक :

जीवनशिक्षा मुद्रणालय (प्रा०) लि०

गोलघर, वाराणसी-१

फोन नं. ३३३२४२, ३३३८६७

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

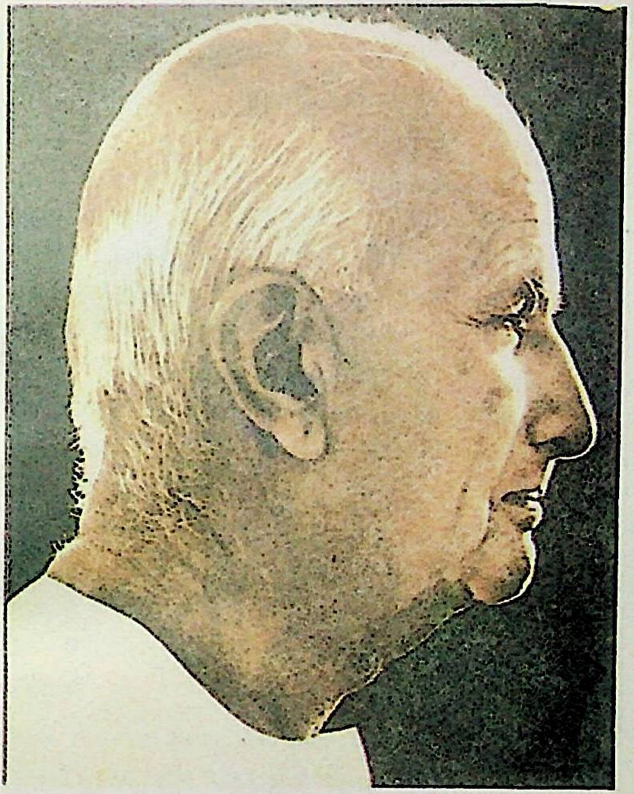

गांधीवादी विचारधारा के अग्रदूत,
कर्मवीर और यशस्वी अर्थवेत्ता
घनश्यामदासजी बिड़ला
को जन्मशती वर्ष के अवसर पर
उनकी पुण्य स्मृति में
श्रद्धापूर्वक समर्पित

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

—गौरीशंकर गुप्त

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सत्यमेव जयते

प्राक्कथन

साहित्य व्यक्तित्व का दर्पण है। कोई कलाकार या लेखक किसी विशिष्ट व्यक्ति या महापुरुष के सम्पूर्ण जीवन को अपनी कलम से लिपिवद्ध करते समय उसके जीवन में घटित मुख्य-मुख्य घटनाओं का ही विषय चयन करता है और इस प्रकार नई पीढ़ी के लिए अपनी रचना प्रस्तुत करता है। यह रचना लोकमानस के लिए मार्गदर्शक सिद्ध होती है ; क्योंकि उसमें उस महापुरुष के गुणों तथा श्रेष्ठ कार्यों का वर्णन रहता है। इसके अतिरिक्त, उसके निजी जीवन में प्रति दिन की कोई-न-कोई बात या घटना ऐसी अप्रतिम और उत्प्रेरक होती है कि उसके विषय में यदि लोगों को जानकारी करा दें तो ऐसा महसूस होगा कि वह पुरुष या आत्मा आँखों के सामने प्रत्यक्ष रूप से मूर्त्तिमंत है।

महात्मा गांधीजी के विषय में प्रकाशित सारा साहित्य लोगों को मुख्य तौर से उनके वाह्य स्वरूप का ही दर्शन कराता है। गांधीजी के दैनंदिन जीवन के कार्यों या उनकी दिनचर्या में अनेक ऐसी नई, रोचक और अनुकरणीय बातें हैं, जिन्हें अपने निजी जीवन में उतारकर कोई भी मनुष्य अपने जीवन को शांतिमय या साधुमय बना सकता है।

'बापू और उनकी दिनचर्या' पुस्तक में गांधीजी की प्रामाणिक दैनंदिन प्रवृत्तियों को अति सुंदर ढंग से प्रस्तुत किया गया है। इस पुस्तक के लेखक श्री गौरीशंकर गुप्त ने अपने दीर्घकालीन अध्ययन और विविध अनुभवों के द्वारा गांधीजी की सुबह से लेकर रात तक की हर रोज की बिखरी-फैली प्रवृत्तियों तथा सामग्री को इकट्ठा करके अनेक प्रसंग यहाँ प्रस्तुत किये हैं, जिनसे पाठक गांधीजी के जीवन के निकटतम सामीप्य और सान्निध्य में आ सकेंगे तथा अनेक प्रेरणाएँ ग्रहण करके अपने जीवन में उतार सकेंगे।

श्री गुप्त की उपर्युक्त पुस्तक का विविध भाषा-भाषियों में प्रचार होगा और उनको यह रुचिकर सिद्ध होगी, ऐसा मेरा विश्वास है।

मोरारजी देसाई

(मोरारजी देसाई)
प्रधान मंत्री, भारत

नई दिल्ली
३० अगस्त १९७८

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एक सत्कार्य !

श्रीराम

जिन पर हमारी प्रीति अथवा श्रद्धा होती है, उनके विषय में हमारी जिज्ञासा स्वाभाविक है। फिर राष्ट्रपिता बापू के विषय में कहना ही क्या ! बड़प्पन छोटी-छोटी बातों की भी उपेक्षा नहीं करता। सच पूछिए तो उन्हीं में वह निखरता है। बापू की दिनचर्या के विषय में यह पोथी लिखकर गौरीशंकरजी ने एक सत्कार्य किया है, इसमें सन्देह नहीं।

चिरगाँव (झाँसी) —राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त

२६-२-२०११

आशीर्वाद

श्रीगौरीशंकरजी,

'बापू और उनकी दिनचर्या' मिली। आपके धीरज और आपकी लगन की आखिर जीत हुई। आपके धैर्य और आपकी अथक प्रयत्नशीलता के आगे मेरा सिर झुकता है। पुस्तक मैं रसपूर्वक पढ़ गया। मुझे वह बहुत अच्छी लगी—आशातीत अच्छी लगी, ऐसा कहूँ तो अतिशयोक्ति न होगी। यह आम जनता, विशेषकर हमारे विद्यार्थी और युवक वर्ग के लिए बहुत उपयोगी होगी।....अगर एक लाख प्रतियाँ खपायी जा सकें तो करने जैसी चीज होगी।

नई दिल्ली विनीत,

७-४-१९७० —प्यारेलाल नैयर

निजी सचिव, बापू

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दिनक्रम का भाष्य

मुझे खयाल नहीं था कि गांधीजी की दिनचर्या को लेकर इतनी बड़ी किताब बन सकेगी। जब लोग गांधीजी के बारे में कुछ भी लिखते हैं, तब कभी-कभी इधर-उधर की सुनी-सुनाई बातें इकट्ठा करते हैं, कुछ अपने मन का भी जोड़ देते हैं। ऐसा अनुभव होने के कारण मैंने इस किताब के लेखक श्री गौरीशंकरजी को किसी समय लिखा था कि सत्य के उपासक महात्मा गांधी के बारे में हम जो-कुछ लिखें, पूरी जानकारी प्राप्त करके सही-सही लिखने की हमारी कोशिश होनी चाहिए। श्री गौरीशंकरजी ने मुझे तुरन्त लिखा कि वही आदर्श नजर के सामने रखकर वे सब जानकारी इकट्ठा करते आए हैं। इससे तो मुझे संतोष हुआ, लेकिन गौरीशंकरजी ने एक कदम आगे जाकर मुझसे अनुरोध किया कि मैं उनकी किताब की पांडुलिपि पढ़ जाऊँ। तथ्य की गलती कहीं हो तो मैं उसे बताऊँ और बाद में किताब के लिए भूमिका लिख दूँ। काम आसान नहीं था, लेकिन लेखक के आग्रह के वश होकर मैंने स्वीकार कर लिया।

गांधीजी की दिनचर्या में दिलचस्पी होने के कारण श्री गौरीशंकरजी की किताब मैं देख गया। संतोष हुआ। मेरे लिए इतना काफी था कि लेखक मेहनत करने से डरते नहीं। जानकारी इकट्ठा करने की पूरी-पूरी कोशिश करते हैं और सच्ची हकीकत इकट्ठा करने के आग्रह से ही प्रेरित हुए हैं।

पाठक देखेंगे कि गांधीजी की दिनचर्या देने के बहाने लेखक ने गांधी-जीवन के अनेकानेक प्रसंग इकट्ठा करके अपने बयान में बुन दिए हैं। इसलिए ग्रंथ की उपयोगिता और रोचकता बढ़ी है।

एक रोमन महिला ने अपने एक युवान शिष्य को नसीहत देते लिखा था—जो-कुछ भी लिखो , वह सब बोध-गर्भ हो—याने जो-कुछ लिखो, उसके पेट में सीखने लायक चीजें और लेने लायक बोध ठूँस-ठूँसकर भरा हो। उच्च कोटि की साहित्य-कला की सफलता इसी में है।

लेखक ने दिनचर्या के अलावा गांधीजी की प्रवृत्ति के कुछ क्षेत्र भी बताए हैं, जिसके अन्दर गांधीजी का व्यक्तित्त्व प्रकट होता है।

गांधीजी के जीवन का रहस्य बताने वाले ग्रंथ बहुत हैं और इनसे भी हजार गुना अधिक ग्रंथ आयन्दा लिखे जाएँगे, लेकिन केवल 'गांधीजी की दिनचर्या और

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उनकी प्रवृत्तियाँ' इतना ही विषय लेकर कुछ लिखा गया है, ऐसा साहित्य मेरे देखने में नहीं आया।

डर है कि जो बात बड़े लोगों के बारे में होती है, वह गांधीजी के बारे में भी आयन्दा होगी। लोग माहात्म्य लिखते-लिखते सत्य से दूर जाकर काल्पनिक वस्तुएँ भी जोड़ देंगे और गांधीजी के जीवन-प्रसंगों का रहस्य अपनी शक्ति और मनोवृत्ति के अनुसार समझकर उसी को जाहिर करेंगे। इसलिए पाठक भी मन के साथ निश्चय करेंगे कि गांधीजी के जीते-जी जो लिखा गया हो, वही शुद्ध रूप से प्रामाणिक गिना जाय। गांधीजी को जिन्होंने देखा था, उनके हाथ-नीचे अथवा उनके साथ काम करने का सौभाग्य जिन्हें प्राप्त हुआ था, ऐसे लोगों के जीते-जी जो लिखा जाएगा, वह भी काफी हद तक विश्वासपात्र माना जाय। जो बातें बाद में लिखी गईं, प्रामाणिक तौर पर स्वीकार करते हुए लोग दस बार सोचें। इस दृष्टि से भी इस ग्रंथ का महत्त्व है।

लेखक ने बड़ी मेहनत से इतनी जानकारी इकट्ठा करके और रोचक रूप में तैयार करके दी है। इसके लिए गांधी-प्रेमी लोग उनके प्रति कृतज्ञ ही होंगे।

नई दिल्ली
३०-५-६४

—काका कालेलकर

बधाई !

प्रिय गौरीशंकरजी

'बापू की दिनचर्या' देखने को मिली। गांधीजी का व्यक्तित्त्व धरती के लिए भगवान् का अनूठा वरदान था। उनके विषय में सारे जगत् को जिज्ञासा रही है। जब वह पृथ्वी को सुशोभित कर रहे थे तब भी और धरातल को छोड़कर उनके चले जाने के बाद भी समस्त मानव समाज को उनके विषय में जानने की इच्छा उत्तरोत्तर प्रबल ही होती गयी। उनके विषय में इसी कारण बहुत-कुछ लिखा गया है। 'बापू की दिनचर्या' के लिए इसी कारण मैं आपको बधाई देता हूँ। पुस्तक गांधी-साहित्य में उत्कृष्ट स्थान प्राप्त करने के योग्य है।

आशा है, आप प्रसन्न हैं।

लखनऊ

आपका,

अगस्त २२, १९५८

—कमलापति त्रिपाठी
शिक्षा मंत्री, उ० प्र०

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बापू की दिनचर्या

महापुरुष कैसे रहते, क्या भोजन तथा व्यायाम करते, कब सोते, कब उठते, कैसे बातचीत तथा व्यवहार करते इत्यादि प्रश्नों के विषय में जनसाधारण की उत्कंठा निरंतर बनी रहती है।

भगवान् महावीर तथा भगवान् गौतम बुद्ध की दिनचर्या पर हमने लेख पढ़े थे और उन्हें सहेजकर रख भी लिया था। बुद्ध भगवान् दिन में सोने के विरुद्ध थे, पर एक बार उन्हें झपकी आ गई और भगवान् महावीर सोने के पहले टहल लिया करते। टहलने का नाम उन दिनों था 'जंघा चक्रमण'।

चर्चिल ने भोजन के बाद विश्राम का नियम ही बना लिया था। उसका आदेश था– यदि बकिंघम महल पर बम गिरे तो मुझे जगाना, नहीं तो हर्गिज नहीं। बम पेरिस पर गिरा, इसलिए चर्चिल के अधिकारी बड़े पशोपेश में पड़ गए ; फिर भी उन्हें जगा दिया गया।

बंधुवर डॉ० गौरीशंकर गुप्त (संस्थापक-संचालक : राष्ट्रपिता प्रकाशन, गायघाट, वाराणसी) ने बापू और उनकी दिनचर्या पर एक पुस्तक तैयार की है और इस विषय का अनुशीलन करते हुए उनके जीवन के कई महत्त्वपूर्ण वर्ष व्यतीत हो गए। यह बात ध्यान देने योग्य है कि गुजराती में भी इस विषय पर ऐसा कोई ग्रंथ अब तक तैयार न हो सका।

चूँकि मुझे चार वर्ष तक महात्मा गांधीजी के साबरमती आश्रम में रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था, इसलिए यह ग्रंथ मेरे लिए तो स्वाध्याय ग्रंथ ही बन गया। फिर भी एक बात यहाँ स्पष्ट कर देनी चाहिए। महात्मा गांधी जीवनभर प्रयोग करते रहे और हम लोगों को भी प्रयोग करने के बाद ही अपनी दिनचर्या बनानी चाहिए। महात्माजी की अथवा किसी दूसरे की नकल करना ठीक नहीं। बकौल एमर्सन–नकल करना आत्मघात है। उदाहरण के लिए– शौचालय में कुछ पढ़ने की बात अनुकरणीय नहीं। फिर भी, महात्माजी की अनेक बातें ऐसी थीं, जिनका अनुकरण हम सबके लिए लाभदायक ही होगा–जैसे समय की पाबन्दी और नियमपूर्वक व्यायाम।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समय की पाबन्दी का सबक मुझे एक बार सन् १९२० में मिला। बापू ने प्रातःकाल सात और सवा सात बजे के बीच का समय मुझे दिया था, पर मैं सवा सात बजे पहुँचा। बापू ने कहा—तुम्हारा वक्त तो निकल गया, अब भाग जाओ; फिर समय तय करके आना। उसके बाद तो मैं उनकी सेवा में कभी देर से नहीं पहुँचा, चाहे मुझे भागना ही पड़ा हो।

एक बार बापू ने मुझे सबेरे टहलने के समय बुलाया, पर इस बीच मि० पोलक, जो द० अफ्रीका में उनके साथ रह चुके थे, बम्बई से आ पहुँचे और उन्होंने वही वक्त उनसे माँगा। बापू ने उनसे साफ कह दिया—यह वक्त तो मैं बनारसीदास को दे चुका हूँ। वह तुम्हें दे दे तो तुमसे बात हो सकती है। मैंने सहर्ष अपना वक्त पोलक साहब को दे दिया, पर साथ में मैं भी टहलता रहा।

बापू टहलने को 'कसरतों की रानी' कहा करते और दिन में वक्त न मिलता तो रात को बारह-एक बजे टहलने लगते। दक्षिण अफ्रीका में तो वे इक्कीस मील टहलकर आफिस पहुँचते और उधर से रेल द्वारा लौटते। शनिवार को तो वे लौटते भी पैदल ही।

श्रद्धेय काका साहब कालेलकर ने लिखा है—गांधीजी अनिश्चितता, अव्यवस्था और ढीलेपन को बिलकुल बर्दाश्त नहीं कर सकते थे। कर्त्तव्य-पालन में उनकी ओर से कभी प्रमाद नहीं होता था। सब व्यक्तियों के प्रति क्षमासागर होते हुए भी उन्होंने अपने प्रति तनिक भी क्षमावृत्ति नहीं धारण की। वे कहते कि मनुष्य का सारा जीवन हर समय विचारमय होना चाहिए।

पत्रव्यवहार के विषय में तो बापू अत्यंत जागरूक थे और जहाँ तक बन सकता, वे खुद ही चिट्ठियाँ लिखते। जीवन में उन्होंने कम-से-कम एक लाख पत्र लिखे होंगे। उनमें से बीस हजार का पता लग चुका है और आठ-दस हजार सुरक्षित भी कर लिये गये हैं। स्वयं मेरे संग्रहालय में उनके हाथ के लिखे सौ से ऊपर पत्र थे, जो अब नई दिल्ली के 'राष्ट्रीय अभिलेखागार' में सुरक्षित हैं।

टाइपराइटर का प्रयोग बापू को पसंद नहीं था और साबरमती आश्रम में सबसे पहले टाइपराइटर मैंने ही मँगाया था, क्योंकि मेरा काम बिना टाइपराइटर के चल नहीं सकता था।

महात्मा गांधी के गुरु राजर्षि गोखले कहा करते—वयोवृद्धों तथा गरीबों का सदैव सम्मान करो। Always respect age & Poverty. 'आलवेज रिस्पेक्ट एज एण्ड पावर्टी।' महात्माजी ने इस मंत्र को हृदयंगम कर लिया था। जब मेरे पूज्य पिताजी उनसे मिलने गए तो बापू ने आसन से उठकर उनका स्वागत किया

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

और कक्का इस बात को जिन्दगी भर नहीं भूले ! और, जब गुरुदेव उनसे मिलने पूना गए, बापू ने उनका चरण-स्पर्श किया था।

बापू का सबसे बड़ा गुण था—दूसरों के हृदय को ग्रहण करना। इसके लिये वे निरंतर प्रयत्नशील रहते। छोटे-बड़े का भेद उनके मन में आता ही नहीं था। त्यागमूर्त्ति पं० मोतीलाल नेहरू से लगाकर छोटे-से-छोटे कार्यकर्त्ता की सुख-सुविधा का वे खयाल रखते।

श्री गौरीशंकर जी गुप्त ने अपने इस ग्रंथ में बापू के अनुकरणीय गुणों के बीसियों दृष्टांत उपस्थित कर दिये हैं। बापू के वचनामृत-समुद्र में गोते लगाकर प्रत्येक श्रद्धालु अपनी रुचि के मोती निकाल सकता है। बापू के राजनीतिक अथवा सामाजिक विचारों से भले ही किसी का मतभेद हो, पर उनके आत्मनियंत्रित जीवन से सभी शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं।

इस ग्रंथ की विचारपूर्ण भूमिका श्रद्धेय काका साहब कालेलकर ने लिखी है, जिसमें उन्होंने पाठकों को सावधान कर दिया है कि बापू के विषय में कपोलकल्पित बातों पर यकीन न करें। सन्तोष की बात है कि लेखक ने जो-कुछ लिखा है, उसे खूब सोच-समझकर लिखा है और इसलिए पुस्तक सर्वथा सुपाठ्य बन पड़ी है।

फिरोजाबाद (आगरा, उ० प्र०) —बनारसीदास चतुर्वेदी

६ जून, १९७०

शुभकामना

भाई श्री गौरीशंकर गुप्त ने 'बापू और उनकी दिनचर्या' नामक पुस्तक कई साल पहले लिखी थी। उन्होंने पुस्तक को काफी रुचिकर बना दिया है। बापूजी के सुबह से शाम तक के कार्यक्रम का उल्लेख प्रेरणादायी ढंग से किया है। उसका संशोधित संस्करण निकलने जा रहा है, यह जानकर प्रसन्नता हुई। उनके प्रयास की सफलता के लिए शुभकामनाएँ भेजती हूँ।

सेवाग्राम (वर्धा) —डॉ० सुशीला नैयर

१२.१२.१९९०

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शुभाशीष

श्री गुप्तजी,

....पुस्तक मिली। ....किसी भी शुभ काम के लिए आशीर्वाद है ही।

राँची (बिहार)

—वि

१४-९-६९

हृदय से....

प्रिय श्री गुप्तजी,

....आपकी इस कृति की मैं हृदय से सराहना करता हूँ और चाहता हूँ इसका प्रचार-प्रसार हो।....

गोरखपुर

भवदीय,

२७-११-१९६९

—भाईजी हनुमानप्रसाद पोद्द

सम्पादक : 'कल्याण'

भगीरथ प्रयास !

प्रिय श्री गुप्तजी,

मुझे यह जानकर बेहद खुशी हुई कि आपकी शोध कृति 'बापू और उन दिनचर्या' का प्रकाशन संभव हो सका।

पुस्तक का प्रकाशन सचमुच भगीरथ प्रयास है।

लखनऊ

जनवरी १५, १९९५

आपका,

—मोतीलाल वो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

राज्यपाल, उ.

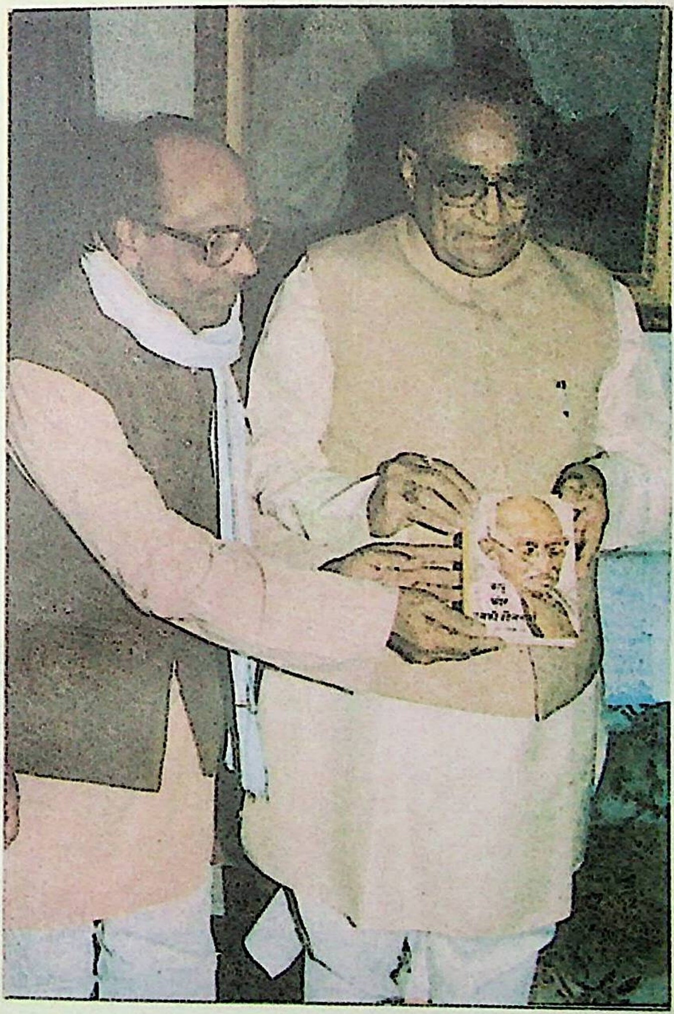

३० जनवरी, १९९५ को राजभवन (लखनऊ) में 'बापू और उनकी दिनचर्या' का लोकार्पण करते हुए उ० प्र० के राज्यपाल महामहिम श्री मोतीलालजी वोरा और लेखक डॉ० गौरीशंकर गुप्त

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अदृष्ट ऋणानुबन्ध

राष्ट्र और राष्ट्रभाषा एवं स्वतंत्र पत्रकारिता की सेवा में पूर्णतः समर्पित मेरे जीवन का यह सातवाँ दशक बीत रहा है। जीवन की यह संध्या है और मेरे साहित्यिक एवं पत्रकार-जीवन की अर्धशती का यह अवसर है।

बापू आरंभ से मेरे प्रेरणास्रोत रहे हैं और उनकी दिनचर्या मेरे शोध-अनुसंधान का प्रिय विषय रहा है। बापू का हार्दिक आशीर्वाद मेरा सम्बल रहा है और न केवल इतना, अपितु उनसे अदृष्ट ऋणानुबन्ध भी मुझे बराबर भासित होता रहा है।

बापू का यह १२५वाँ जयंती वर्ष है। चूँकि उन्होंने १२५ साल जीवित रहने की कामना की थी, इस दृष्टि से इस वर्ष का विशेष महत्त्व है। संयोगवश राष्ट्रमाता कस्तूरबा का भी यह १२५वाँ जयंती वर्ष है। विनोबा – जन्मशती भी इस वर्ष मनायी जा रही है। बापू के जन्मशती वर्ष सन् १९६९ ई० में स्थापित 'राष्ट्रपिता प्रकाशन' का यह रजत जयंती वर्ष है। ऐसे अवसर यदा-कदा मिलते हैं और इसी कारण इस अवसर पर अपनी यह पुस्तक राष्ट्र को समर्पित करते हुए मुझे हार्दिक सुख-संतोष का अनुभव हो रहा है।

पुस्तक को पूर्णतः प्रामाणिक एवं अधिकृत बनाने का हर संभव प्रयास किया गया है। प्रभु की अहैतुकी-असीम कृपा से यह अनुष्ठान सम्पन्न हो पाया है और इसे मैं अपने जीवन की एक महत्त्वपूर्ण घटना मानता हूँ।

इस पुस्तक के कई रूप बने और बदले हैं और इसके प्रकटीकरण में अप्रत्याशित विलम्ब हुआ है। पू० काका साहब कालेलकर ने एक बार प्रसंगवश मुझे बिलकुल सही लिखा था कि हर पुस्तक का भी अपना भाग्य होता है।

इस अनुष्ठान में अपना मूल्यवान सहयोग प्रदान करने वाले सभी महानुभावों तथा पुस्तक-प्रकाशन के व्ययभार वहनकर्त्ता श्री राधाकिशन धानुका चैरिटी ट्रस्ट, कलकत्ता के प्रति मैं अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हूँ।

अंत में अपनी सभी भूलों, त्रुटियों तथा अपने प्रमाद के लिए विनम्रतापूर्वक क्षमायाचना करते हुए सबके मूल्यवान सहयोग तथा आशीर्वाद की मैं कामना करता हूँ। जय राष्ट्र! जय राष्ट्रपिता !!

वाराणसी — विनीत,

बापू की ४७ वीं पुण्य तिथि — –गौरीशंकर गुप्त

३० जनवरी, १९९५

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अनुक्रम

विषय	पृष्ठ सं०
प्राक्कथन	
एक सत्कार्य !	
आशीर्वाद	
दिनक्रम का भाष्य	
बधाई !	
बापू की दिनचर्या	
शुभकामना	
शुभाशीष	
हृदय से	
भगीरथ प्रयास !	
अदृष्ट ऋणानुबन्ध	
विषय-प्रवेश	१
निद्रा-त्याग	१५
दाँतों और आँतों की सफाई	१७
प्रातःकालीन प्रार्थना	१९
शौच	३१
जलपान	३५
प्रातःकालीन वायु-सेवन	३९
रोगी-सेवा और चिकित्सा	४३
मालिश, हजामत और स्नान	५३
स्वाध्याय और लेखन	५९
स्वावलम्बन एवं शारीरिक श्रम	६९
दिन का भोजन	७३
समाचारपत्रावलोकन	९२
विश्राम	९६
मिट्टी और जल-चिकित्सा	९९
सूत्र-यज्ञ	१०३
भेंट-वार्त्ता	१०७
सायंकालीन आहार	११०
सायंकालीन वायु-सेवन	११३
सायंकालीन प्रार्थना	११६
प्रवचन और हरिजन-सेवा	१२१
डायरी-लेखन और माला-जप	१२५
शयन	१३०
मौन	१३६
उपवास	१३९
आचार और व्यवहार	१४३
प्रार्थना	१५२
प्रिय भजन	१५८
एकादश व्रत	१६०
जीवन-क्रम	१६२

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

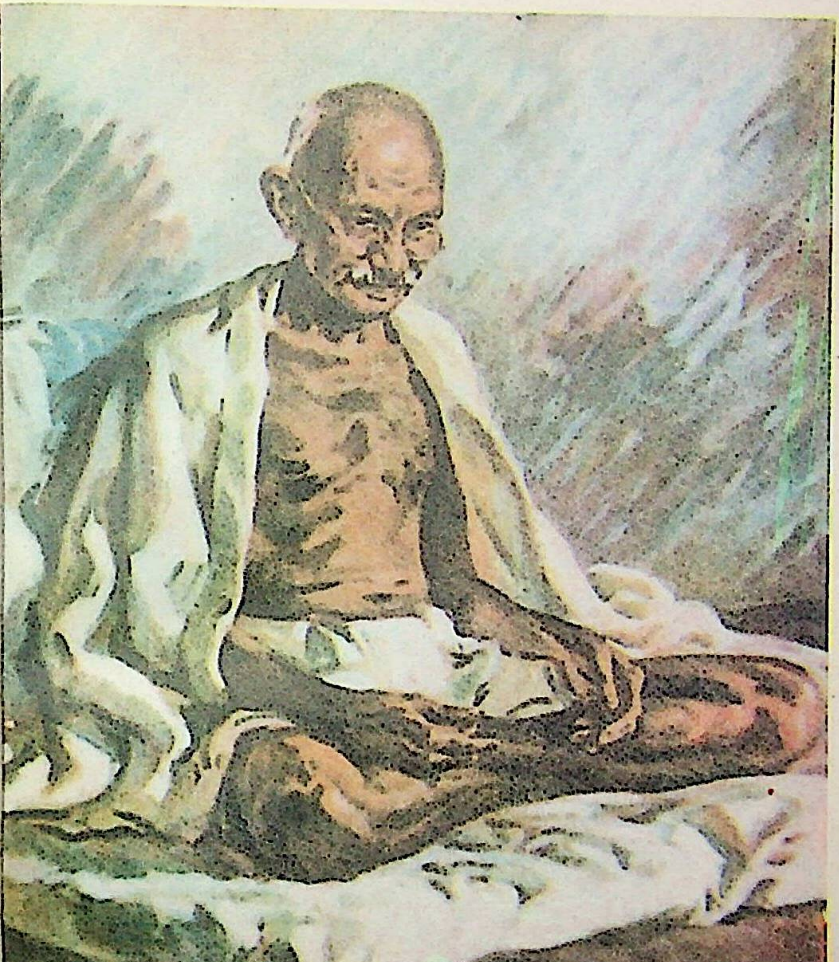

चिंतन के क्षणों में बापू की एक दुर्लभ छवि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रीराम

बापू और उनकी दिनचर्या

विषय-प्रवेश

हमारा प्यारा भारत साधुओं और संतों का देश है। इस देश में समय-समय पर मानव जाति के सत्पथप्रदर्शक और समाज के नेता साधु-संत होते आये हैं। राष्ट्रपिता गांधीजी उसी मालिका के उज्जवल मणि थे। महान् पुरुषों के कार्य तो संसार के सामने आ जाते हैं, किन्तु उनके जीवन के छोटे-छोटे, नित्य की दिनचर्या के कार्य थोड़े-से लोगों को विदित रहते हैं, जो उनके निकट सम्पर्क में रहते हैं; परन्तु वे बहुत महत्त्वपूर्ण होते हैं। उनके जानने की सर्वसाधारण के मन में स्वभावतः अभिलाषा रहती है। दैनंदिन जीवन की घटनाओं से उनके महत्त्व पर प्रकाश पड़ता है। अर्जुन ने श्रीकृष्ण से जीवन्मुक्त स्थितप्रज्ञ पुरुषों के सम्बन्ध में इसी प्रकार की जिज्ञासा की थी कि भगवन्! यह तो बताइये कि स्थितप्रज्ञ पुरुष कैसे चलते-फिरते, व्यवहार करते, कैसे बोलते और कैसे उठते-बैठते हैं? उत्तर में भगवान् ने जीवन्मुक्त महापुरुषों के लक्षण अर्जुन को बताये।

बापू महान् थे। उनके कार्य महान् थे। उनके जीवन की छोटी-छोटी बातों में महत्ता विद्यमान थी। उनकी सभी बातों का सभी अनुकरण नहीं कर सकते; परन्तु अधिकांश उपयोगी बातों का अनुकरण असंभव नहीं। बापू की दिनचर्या का मूल सूत्र 'गीता' के इस श्लोक से बताया जा सकता है—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु ।
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा ।।

जिसका आहार-विहार, जिसकी चेष्टाएँ और जागना-सोना युक्त (उचित मात्रा में) हो, उसका कर्मयोग दुःख का परिहार करने वाला (सुखकर) होता है।

बापू के सब काम काँटे-तौल होते। सब ओर कर्त्तव्यनिष्ठा, संयम, सत्य और प्रेम की महिमा अनुभूत होती। उनका एक-एक क्षण प्रभु के, मानवता के अर्पण था। शायद ही किसी महापुरुष ने इतनी ईमानदारी से जीवन व्यतीत किया होगा, जितनी ईमानदारी से बापू ने किया।

हर महापुरुष की दिनचर्या उसके जीवन की संक्षिप्त आवृत्ति होती है, जिसमें उसके अपने और उन आदर्शों का, जिस वातावरण में वह रहता है, संघर्ष या संगम दिखायी पड़ता है। अतः यदि उस व्यक्ति के चरित्र की वास्तविक छवि या झाँकी देखनी हो तो उसकी दिनचर्या कैसी है, यह जानना आवश्यक है।

दिनचर्या की जानकारी के बिना जीवन की जानकारी अपूर्ण होती है, ऐसा स्वयं बापू का कहना था। एक बार उन्होंने अपने एक मित्र से ध्यानपूर्वक अपना जीवन देखने का अनुरोध किया था। वे कैसे रहते, खाते, बैठते और बोलते तथा सामान्यतः उनका व्यवहार कैसा होता, इन सब के योग को वे अपना धर्म कहते। उनके साथ छाया की भाँति रहने वाली मीरा बहन (मिस मॅडेलीन स्लेड) ने एक बार कहा था कि बापू के दीर्घ जीवनकाल के प्रसंगों में मेरे लिए सबसे बढ़कर कीमती और सर्वोत्कृष्ट प्रसंग है नित मथा जाने वाला उनका दैनंदिन जीवन। और, स्वामी रामकृष्ण परमहंस ने कहा है कि साधु क्या कहता है, इस पर ध्यान

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

न देकर, वह कैसे रहता है, यह देखने के लिए उसे सोते, जागते, खाते-पीते, दिन में, रात में और शौच जाते समय भी देखो और उस पर से उसके विषय में राय कायम करो।

इस सृष्टि का अनिवार्य गुण और स्वभाव है निरन्तर विकास और परिवर्त्तनशीलता। किसी वस्तु का रूप स्थिर नहीं। यही सत्य मनुष्यजीवन के लिये भी है। वह विकासशील है, बदलता रहता है, भले ही हमको इसका पता न हो ; लेकिन जो ज़िज्ञासु है और अपने विकास के लिए सतत जागरूक रहता है, उसे इसका पता होता है,और विशिष्ट मानव को अपने जीवन के एक-एक परिवर्त्तन और विकास की वस्तुस्थिति का पूरा ज्ञान होता है। बापू विशिष्ट मानव हुए, ऐसे विशिष्ट, जिन्होंने अपने दुर्गुणों को संसार के सामने खुले पन्नों की तरह खोलकर रख दिया। इसीलिये उन्होंने अपने जीवन को 'सत्य के प्रयोग' कहा। उनका प्रतिक्षण विकासशील दिव्य जीवन वास्तव में नित्य नये सत्य की प्रेरणा और प्रकाश देने वाला है और सत्य की शोध के इतिहास में उसका अमर स्थान है।

बापू ने अपने ऐसे दिव्य जीवन के द्वारा संसार को नयी रोशनी दी, ऐसी रोशनी, जो कभी समाप्त होने वाली नहीं है ; लेकिन उसे खोज पाना आसान नहीं। इसके लिये उनके सत्य के प्रयोगों की एक-एक तह को उलटना होगा। उनका जीवन इन्हीं प्रयोगों के कारण हमेशा बदलता रहा—उसका कभी एक रूप नहीं रहा और जब उनके जीवन की ओर संसार काफी उत्सुकता तथा व्यग्रता से देखने लगा, तो उन्होंने अपने सत्य के प्रयोगों को गहराई से और ध्यानपूर्वक देखने को कहा। उनको अन्तिम न मानने का उन्होंने बराबर आग्रह किया। उनको एक बार जो ठीक जँचता, वही बाद में यदि गलत सिद्ध होता तो वह विचार एवं कार्य बदल जाता। ऐसा इसलिये होता कि वे सतत प्रयोगी थे। इसीलिये उनके जीवनक्रम और उनकी दिनचर्या में हमेशा परिवर्तन होता रहा।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

राजकोट में हाई स्कूल में पढ़ते हुए सच्चे विद्यार्थी बनने और साथ-साथ रुग्णं पिता की सेवा-शुश्रूषा पूरी तत्परता से करने का जाग्रत संकल्प बापू ने जब लिया, तब से उनके जीवन में सुव्यवस्थित सत्यमय प्रयोगों का आरंभ हुआ। बाद में द० अफ्रीका में जब उन्होंने अपने सार्वजनिक जीवन का श्रीगणेश किया, तब वे नख-शिखांत सत्यमय, प्राणवान् युवक थे। वैसे तो जीवन के अंतिम क्षण तक बापू विकासमान् रहे, किन्तु परिपक्वता उनमें युवावस्था में ही आ गयी थी। कहा जा सकता है कि उन्होंने अपनी दिनचर्या का अनुपालन स्वयं किया था। वे अनुभवसिद्ध व्यक्ति थे। उनके सतत प्रयोगों की सफलता या विफलता का क्या प्रभाव उनकी दिनचर्या पर पड़ता या पड़ा, इसको पूरी तरह अब कोई बता नहीं सकता—अब उनके साथ रहने वालों की पुस्तकें पढ़कर ही उस विषय में कुछ अनुमान हो सकता है।

एक बार काका साहब कालेलकर से पूछा गया— महात्माजी का इतना प्रभाव भारत के लोगों पर और सारी दुनिया पर कैसे पड़ा? काका बोले— बापू के चरित्र का वह प्रभाव था। वे सर्वकल्याणकारी चिंतन करते रहते। इसलिये उनके विचारों में पूरी तरह शुद्धता रहती। उनमें कहीं भी पक्षपात नहीं था। वे स्वभाव से सर्वोदयी विचार के थे और केवल विचार करके ठहर नहीं जाते। संयमपूर्वक सारा जीवन, सारा समय और अपनी सारी शक्ति उन्होंने सेवा में लगायी। दूसरे शब्दों में— उनका प्रभाव उनकी सत्यनिष्ठा के कारण था। देश के लाभ के खयाल से भी वे कभी सत्य से विचलित नहीं हुए। सत्य उनके लिये प्रत्यक्ष परमेश्वर था और सत्य के अनुसार चलना— यही थी उनकी जीवन-साधना। एक अन्य कारण था— उनका वाणी का ब्रह्मचर्य। आपको आश्चर्य होगा कि वाणी का ब्रह्मचर्य क्या चीज है? बापू ने अखबार चलाये, असंख्य लेख लिखे, हजारों पत्र लिखे और उनकी बातों का तो कहना ही क्या! दिन-रात

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मुलाकात करने लालों को सलाह देना और संभाषण में विनोद भी करना। यह सब होते हुए भी हम वाणी के ब्रह्मचर्य की बात कैसे कर सकते हैं ? यही तो सोचने की बात है। सेवाधर्म चलाते हुए उनको जितना बोलना, लिखना पड़ा, उतना सब उन्होंने किया, लेकिन सदा वे जागरूक रहते। जरूरत के बिना एक शब्द मुँह से न निकले, इसका खयाल रखते। लेख आदि लिखने-लिखाने के बाद भी देखते कि कहीं अनावश्यक शब्द आया तो वे उसे काट देते। यह था बापू का मानसिक और वाचिक ब्रह्मचर्य।

बापू के निजी सचिव एवं निकटतम सहयोगियों में प्रमुख प्यारेलाल भाई नैयर के अनुसार आत्मपरीक्षण तथा आत्मशुद्धि का सतत प्रयत्न करते हुए उन्होंने प्रति क्षण आत्मनिरीक्षण करने की आदत बना ली थी। उनके लिये सत्य का अर्थ मौखिक सत्य नहीं, परन्तु सत्यपूर्ण जीवन कहने और करने में तथा मन, वचन, कर्म में सम्पूर्ण एकरूपता थी। वे प्रति दिन अन्तरात्मा की अदालत के सामने अपने को खड़ा करते और अपने छोटे-से-छोटे कार्य के लिए अपने आपसे उत्तर माँगते। इस परीक्षण से कोई चीज छूटती नहीं। वे अपनी भूल को बिलकुल माफ नहीं करते। असल में कभी-कभी देखने वालों को ऐसा लगता कि वे आत्मपरीक्षण और आत्मनिंदा को इस हद तक ले जाते हैं कि स्वयं उनके प्रति और उनके निकटतम सहयोगियों के प्रति अन्याय हो जाता है, फिर भी सत्यान्वेषी बापू ऐसा करते रहते। बापू के अप्रतिम सहयोगी महादेव भाई देसाई ने एक बार कहा था कि मुझे बार-बार विचारने पर साफ लगता है कि बापू को बापू बनाने वाला तत्त्व उनकी सत्य की अखण्ड साधना है। इसी सत्य से उनमें निर्भयता आयी, जिससे ईश्वर में श्रद्धा के लिए सत्य के प्रयोगों का मार्ग खुलता गया। इस प्रकार सत्य की अखण्ड उपासना और सत्य के आचरण की पूरी तैयारी मनुष्य को किस उच्चतम शिखर पर पहुँचा देगी, कहना मुश्किल है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्यारेलालजी के अनुसार बापू में कुछ असाधारण बातें थीं। एक थी—उनकी कार्यक्षमता। वे रात में केवल तीन-चार घण्टे सोते और फिर लगातार काम करते। दूसरी थी—छोटी-से-छोटी बात में उनकी सूक्ष्म दृष्टि। तीसरी—उनकी सफाई और लिखने-पढ़ने, सोचने में आस्था और जीवन के हर काम में गन्दगी या लापरवाही से चिढ़। चौथी—समय की कठोर पाबन्दी। पाँचवीं—जहाँ तक संभव हो, उनका अपने हाथों अपना काम करना। मैंने उनके पास रहकर उनके विराट् रूप का दर्शन किया और उनमें असंख्य गुण पाये, फिर भी मैं उनकी सबसे अधिक कद्र उनके दयालु और कोमल स्वभाव के कारण करता हूँ। उदाहरणार्थ— इस डर से कि कहीं उनकी खड़ाउँओं की खटखट से पास सोने वाले जाग न जायें, रात को वे लघुशंका आदि के लिए दबेपाँवों चले जाते। एक कुष्ठ रोगी की सेवा-शुश्रूषा करने के लिए वे वाइसराय से मुलाकात रद्द कर देते। दरअसल वे गीता को हर कर्म की प्रेरक शक्ति मानते। सच्चे स्थितप्रज्ञ थे वे।

वस्तुतः बापू में विलक्षण अमोघ शक्ति, कार्यक्षमता तथा शील प्रभृति गुणों का सागर था। विश्व के महान् जर्मन वैज्ञानिक आइन्सटाईन ने कहा था कि आने वाली पीढ़ियाँ मुश्किल से विश्वास करेंगी कि कभी कोई रक्त-मांस का ऐसा व्यक्ति इस धरती पर चलता-फिरता था!

प्रस्तुत पुस्तक के प्रसंग में बाबा राघवदासजी ने एक बार अपने कृपापत्र में हमें लिखा कि आजकल जब हम समय, भोजन, शयन, विहार और पत्रव्यवहार में अधिक शिथिल हैं, असंयमित हैं, पूज्य बापू जैसे राष्ट्रपिता की दिनचर्या विशेष शिक्षा स्मरण दिलाने वाली है। कभी-कभी मन में आता है कि राष्ट्र की ओर से भोजन, शयन और जागने का निर्धारित समय घोषित किया जाना जरूरी है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रात-रात भर मनोरंजन, भोजन और दिन में दस बजे उठने तक की वृत्ति राष्ट्रहित में बाधक है, साधक नहीं। समय-काल की कदर हमें सदा करनी चाहिए और, पं० बनारसीदासजी चतुर्वेदी की इस पंक्ति का भी यही भाव है कि यदि हम लोग एक बात बापू से सीख लें—यानी नियमपूर्वक अपने दिन का विभाजन, तो हमारा जीवन सुधर जाय, किन्तु हम लोग तो प्रमादी ठहरे!

इस प्रसंग में महापंडित राहुल सांकृत्यायन का यह कथन अक्षरशः सत्य है कि महात्मा गांधी अपने समय के एक-एक क्षण का मूल्य चुका लेना चाहते, बल्कि वे एक-एक क्षण का दूना मूल्य वसूल करते। इसीलिये एक साथ वे दो काम करते। शतावधानी और सहस्रावधानी की हम बातें सुनते हैं, जो एक समय सौ और हजार बातों को सुन सकते। हमारे नैयायिक इसे सर्वथा गलत कहते हैं। वे मन का लक्षण बतलाते हुए कहते हैं कि मन एक समय में अनेक ज्ञान नहीं प्राप्त कर सकता, उसकी गति अति तीव्र हो सकती है। जैसे पीपल के सौ कोमल पत्तों को सूई से बेधते समय एक पत्ते से दूसरे पत्ते में चुभने के समय को अंकों में नहीं बतलाया जा सकता, किन्तु समय उसमें लगता जरूर है, वैसे ही शतावधानता की बात यदि सच्ची है तो उसका अर्थ इतना ही है कि बात की गति से मन की गति सौ गुनी अधिक तेज है। इसलिये एक के बाद एक सौ बातों को मन समझ लेता है। वस्तुतः बापू द्विकार्यावधानी थे। वे एक समय में दो काम अच्छी तरह कर सकते थे।

बापू का प्रत्येक कार्य घड़ी की सूई की चाल के साथ बँधा था। जिस प्रकार घड़ी की सूई हर क्षण आगे बढ़ती हुई भी अपनी परिधि के बाहर कभी नहीं जाती और प्रति दिन का कार्य एक नियम के अनुसार

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

किया करती है, उसी प्रकार बापू अपने दैनिक कार्य सम्पन्न किया करते। उनकी कमर में छोटी नहीं, बड़ी जेब घड़ी लटकती रहती। वह दिखावे के लिए नहीं थी। उनके एक-एक मिनट का हिसाब इसी के जिम्मे था। बड़ी होने से, उसकी सुइयाँ इतनी बड़ी थीं कि बिना चश्मे के देखा जा सकता। जिस समय उनका जीवनदीप बुझा, वे कार्यरत थे। इस प्रकार उन्होंने अपने जीवन के क्षण-क्षण का मूल्य चुका लिया, मृत्यु का मूल्य भी बायें नहीं जाने दिया।

बापू की दिनचर्या को नियमवद्ध और सदा जागरूक रहते हुए उसके पालन में उन्हें तत्पर देख एक विदेशी पर्यटक ने 'गिलट की घड़ी का दास' की उपाधि दी थी। 'सत्रह घण्टों का गुलाम' भी लोग उन्हें कहते। उनका निश्चित समय से एक मिनट अधिक कोई नहीं ले पाता। काका साहब कालेलकर के शब्दों में बापू समय के पाबन्द इतने थे कि उनकी मिसाल भारत में नहीं मिलेगी। प्रसिद्ध अमेरिकी पत्रकार लुई फिशर तक को वार्त्तालाप का निश्चित समय पूरा होते ही बापू ने घड़ी दिखाकर आश्चर्यचकित कर दिया था। ऐसा भी होता कि यदि कोई पाँच मिनट का समय माँगता और उतने समय में उसका काम पूरा न हो पाता तो वे उसे अधूरा छोड़ देते और समय लेने को कहते। कभी-कभी पाँच मिनट के पन्द्रह भी दे देते। वे स्वयं सर्वत्र ठीक समय पर पहुँचना जरूरी मानते— चाहे पानी बरसता या सवारी का अभाव होता। सवारी की वे परवाह नहीं करते, उन्हें पैदल चलने का अच्छा अभ्यास था।

एक बार काका साहब को बापू के साथ बम्बई की यात्रा करनी थी। प्रातः छह बजे प्रस्थान का निश्चय था। काका साहब एक मिनट बाद उनके कमरे में पहुँचे तब बापू उनको अपना सारा सामान स्वयं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लिये रास्ता तय करते नजर आये। दौड़कर काका साहब उनके निकट पहुँच गये। बोले– आपने मेरी प्रतीक्षा नहीं की ? बापू ने प्रतीक्षा करने की कोई जरूरत नहीं बतलायी। किसी को देर हो तो स्वयं देर न करें, ऐसा उनका आदर्श था।

प्रत्येक प्रसंग में नियमितता बरतने से बापू सब-कुछ संभव मानते। किसी ने उनसे एक बार कहा– क्या करूँ, समय ही नहीं मिलता । वे हँस पड़े। उन्होंने उन सज्जन को सुबह से एक-एक क्षण की बरबादी रोकने की सलाह दी और बताया कि ऐसा करके दो-तीन घण्टों की फुरसत का ऐसा समय निकाला जा सकता है, जिसमें करने के लिए कोई कार्य सामने न होगा। इस तरह समय की पाबन्दी यदि सब लोग करें तो करोड़ों घण्टों की बचत हो सकती है।

बापू समय को सम्पत्ति मानते । समय बचाने वाला, उसका सदुपयोग करने वाला सम्पत्ति या धन बचाता और समयसम्पत्ति उपार्जित सम्पदा से किसी प्रकार कम नहीं। अनियमितता या समय का मूल्यांकन न करने के कारण नष्ट होने वाले समय-धन का अनुमान लगाना कठिन है।

रुपये-पैसों का, एक-एक पैसे का जिस प्रकार हम सही-सही हिसाब रखते हैं या हमें रखना चाहिये, उसी प्रकार समयसम्पत्ति का सही-सही हिसाब रखने के लिए बापू कहते। मास के अन्त में सारा हिसाब देखने पर, समय के सदुपयोग या दुरुपयोग का विवरण सामने आने पर जीवन नियमित्त होगा और उसमें विद्यमान त्रुटियों को दूर करने की प्रेरणा मिलेगी। न केवल नैतिक, बल्कि आध्यात्मिक दृष्टि से भी इसका बहुत महत्त्व है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बापू जेल में भी नियमवद्ध रहते। सन् १९४२ में 'आगा खाँ महल' में उनका सारा कार्यक्रम घड़ी की तरह चलता। उन्होंने सर्वप्रथम मिनटों पर विजय पायी थी। मिनट उनको अत्यंत प्रिय थे। कहा जा सकता है कि मिनट ही उनके सर्वदा कर्मरत जीवन के संचालक थे।

बापू के कार्यों को देखकर घड़ी का समय मिलाया जा सकता। सन् १९४२ का प्रसंग है। अगस्त-आन्दोलन के सिलसिले में अनेक नेताओं के साथ बापू गिरफ्तार हुए। कुछ समय तक यह अज्ञात था कि वे कहाँ रखे गये। लोग सोचते कि ब्रिटिश सरकार ने उनको किसी दूसरे देश में तो नहीं भेज दिया। तरह-तरह की अटकलें लगायी जा रही थीं। अपने देश में रखने की बात भी सुनी गयी और ऐसा अनुमान लगाया गया कि सरकार ने उन्हें अहमदनगर के किले में रखा होगा। आश्रम के कुछ भाइयों ने इसकी जाँच करने की ठानी। किले की दीवार पर कोई दूरदर्शक यन्त्र रखकर प्रातःकाल सात और आठ बजे के बीच स्वच्छन्द वायुसेवन करते हुए बापू को देखने की सफल कोशिश की गयी। पर्णकुटी से भी बापू को देखने की कोशिश की गयी, किन्तु जाली लगी होने के कारण वहाँ से उनको देख पाना संभव नहीं था।

सन् १९३० के दाण्डीकूच से पहले साबरमती-आश्रम के भाई-बहनों में सत्यपालन और अनुशासन की तीव्रता तथा तत्परता लाने की दृष्टि से बापू ने एक नियम यह प्रचलित किया था कि सुबह-शाम की प्रार्थना के समय, सुबह-शाम के भोजन के समय और सामूहिक सूत्रयज्ञ जैसे कार्यक्रम के समय जो आश्रमवासी घंटी बजते ही प्रार्थना, भोजन और सूत्रयज्ञ के स्थान पर पहुँचने में जाने-अनजाने एक मिनट की भी देर करेंगे और महीने में इस तरह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तीन बार देर के दोषी बनेंगे, वे आश्रमवासी के नाते आश्रम में रहने की अपनी पात्रता खो देंगे। उन्हें आश्रम छोड़कर जाना होगा। इसमें बापू ने अपवाद अपने उन्हीं साथियों को रखा, जो आश्रम के आरंभ से सपरिवार आश्रमवासी बने थे। उन्हें आश्रम छोड़कर जाने का आदेश बापू से लेना था। बाकी सबको तीन दोषों के बाद स्वयं आश्रम छोड़ देना था। उस समय अहिंसात्मक सत्याग्रह के सैनिक की साधना का यह कठोर व्रत सिद्ध हुआ और अनेक पुराने तथा नये निष्ठावान् साधकों को भी इसने कुछ समय के लिये हिला दिया।

बापू सत्कार्यों के सक्रिय समर्थक थे। उनकी नियमवद्धता और उनके जीवनादर्शों की प्रेरणा से सामूहिक तथा व्यक्तिगत रूप से इतने व्यक्ति ऊँचे उठे कि उनकी संख्या निर्धारित करना कठिन है। जहाँ उनके भाषणों, प्रवचनों, पत्र-प्रतिनिधियों को दिये गये वक्तव्यों एवं स्वसम्पादित पत्रों के लेखों ने समस्त विश्व को सत्प्रेरणा देकर सत्यपथ की ओर अभिमुख किया, वहाँ व्यक्तिगत रूप से सम्पर्क में आये मनुष्यों को उन्होंने एक-ब-एक ऐसा ऊँचा उठा दिया कि उनमें से अधिकतर के व्यक्तित्त्व के सम्मुख संसार नतमस्तक हुआ। वे मानते कि यदि कोई मनुष्य शुद्ध है तो उसके निकट सम्पर्क में आने वाले लोगों का जीवन विकासशील होगा ही। दुनिया में कोई चीज स्थिर नहीं, उत्थान-पतन होता ही रहता है। अपने सम्पर्क में आने वालों का अनिष्ट या पतन उनको हरगिंज बरदाश्त नहीं था, पर वे उसे दुतकारते नहीं, बल्कि उसकी खामियाँ हटाने की कोशिश उसे अपने पास रखकर करते। उनका दृढ़ विश्वास था कि उनके सम्पर्क में आने वालों का उत्तरोत्तर विकास ही उनके प्रयोगों की सफलता है।

दरअसल, बापू अपनी दिनचर्या का क्रम ही ऐसा रखते कि उसकी लपेट में प्राचीन ऋषि-परम्परा में आसक्त और आधुनिक सुविधाओं से

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

युक्त सभ्यता के प्रति आकृष्ट सभी लोग रस लेने लगते। उनका गार्हस्थ्य और आश्रम-जीवन दोनों एक दूसरे से सम्पृक्त था। यही कारण है कि आश्रम के नाम से गार्हस्थ्य जीवन व्यतीत करने वाले कभी घबराते नहींऔर न आश्रमवासियों को गृहस्थों से कोई दुराव था। गृहस्थों के घर और आश्रम को पृथक् करने वाले कुछ प्रधान नियमों के अतिरिक्त घर और आश्रम में विशेष अन्तर न था और कोटि-कोटि माताओं का प्रतिनिधित्व करने वाली 'बा' की उपस्थिति के कारण वह आश्रम तो घर के और भी निकट पहुँचा रहता। आश्रमवासियों ने कभी यह अनुभव भी न किया होगा कि हम अपनी माता या अपने घर से दूर बसे हैं। इसके अतिरिक्त, आश्रम की चर्या ऐसी गठित थी कि कार्य-प्रवाह में आश्रमवासियों का आलस्य सदा बहता रहता और प्रत्येक व्यक्ति अपने सच्चे व्यक्तित्व में निखर उठता।

स्वयं बापू के लिए उनका आश्रम प्यारेलालजी के शब्दों में एक जादू भरा स्फटिक था, जिसके द्वारा वे एक जादूगर की भाँति अपने चारों ओर होती हुई घटनाओं के अर्थ के अलावा अपने अन्तर की गहराइयों के अर्थ भी जान सकते। उनकी प्रतीति थी कि जैसे हम होते हैं, हमारा वातावरण वैसा ही हो जाता है। किसी व्यक्ति का चेतन और अचेतन जीवन अपने वातावरण पर जैसे प्रभाव डालता है, उन्हीं के जोड़ से उसका व्यक्तित्व बनता है। शेष सब दिखावट और अहंकार है। उनका आश्रम उनकी प्रयोगशाला होने के अलावा उनका शक्ति-स्थल भी था। अपने तूफानी दौरों के दरम्यान एक बार बापू ने स्वीकार किया था कि दौरा करते समय जब-जब उनके भीतर की बैटरी समाप्त हो जाती, तब-तब उनको आश्रम में लौटना पड़ता। कुछ समय वहाँ व्यतीत कर वे बैटरी भर लेते और फिर आगे के दौरे पर निकल पड़ते।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यों तो प्रायः नित्य बापू के निकट विशिष्ट अतिथियों का आगमन होता रहता, किन्तु सेवाग्राम में सन् १९३८ में आये लार्ड लोदियन् एक अनोखे अतिथि थे, जिनके रहने की व्यवस्था बापू ने आश्रम की 'आखिरी निवास' नामक झोपड़ी में की थी और जिनके शयन के लिये तख्ता तथा शौच के लिये कमोड जैसी वस्तुओं की व्यवस्था में भी उन्होंने दिलचस्पी ली। उनके भोजन की व्यवस्था आश्रमवासियों की पंगत में की गयी और उन्हें अपने निकट बैठाकर बापू ने खुद उनको भोजन कराया। लार्ड लोदियन् ने कहा था कि उनके समस्त जीवन में यह समय जिस शान्ति से व्यतीत हुआ, उस तरह कभी नहीं हुआ। उन्हें ऐसा एकान्त वातावरण कभी नहीं मिला। और, उनकी बिदाई के उपरान्त सायंकालीन प्रार्थना-प्रवचन में बापू ने बताया था कि वे उनके लिए जमनालालजी बजाज की मोटर की व्यवस्था कर सकते थे, किन्तु ऐसा उन्होंने नहीं किया–जान-बूझकर इसे टाल दिया ; क्योंकि भारत का वास्तविक चित्र उन्हें सेवाग्राम में ही दिखाना संभव था। बापू किनके प्रतिनिधि थे, इसकी जानकारी उन्हें बम्बई में नहीं, सेवाग्राम में ही मिल सकती थी। किसान मोटर की व्यवस्था नहीं कर सकता, इसीलिए बापू ने उनके लिए रबर टायर के पहिये वाली दो घोड़े की गाड़ी की व्यवस्था की, जिसे आश्रम के लोग 'टमटम' कहते।

दक्षिण अफ्रीका का फिनिक्स-आश्रम भी बापू के भारतीय आश्रमों-जैसा था। वहाँ तो किसी अतिथि के लिए सवारी की भी व्यवस्था नहीं थी और ब्रिटिश साम्राज्य के कट्टर पुजारी तथा तत्कालीन मध्य प्रान्त के कमिश्नर (गवर्नर) सर बेंजामिन राबर्टसन् को स्टेशन से फिनिक्स-आश्रम तक पदयात्रा करनी पड़ी थी। उन्होंने भी आश्रम के सादे एवं स्वावलम्बी जीवन की प्रशंसा की। इस प्रकार विदेशी पर्यटक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

देखकर हैरान रहते कि एक राष्ट्र के पिता के आसन पर आसीन व्यक्ति के निवासस्थान में कुछ भी दिखाव, श्रृंगार या गौरव उत्पन्न करने वाला दृश्य नहीं और उनकी जीवनयात्रा घड़ी की तरह चल रही है, उसमें मशीन-सी यांत्रिकता नहीं। यदि वह पर्यटक भारतीय ऋषि-परम्परा के अनुरूप चली आने वाली संस्कृति को पकड़ पाता, तब तो विशेष आश्चर्य में नहीं पड़ता ; लेकिन यदि साधारण पढ़ा-लिखा या भारतीय प्राचीन संस्कृति तथा गांधी-दर्शन से अनभिज्ञ व्यक्ति आता, तो विदेशी राष्ट्रों को गढ़ने वाले दिवंगत राष्ट्रपिताओं के रहन-सहन एवं उनकी विशाल अट्टालिकाओं के सम्मुख भारतीय बापू और उनकी झोपड़ी आश्चर्य तथा विशेष ऊहापोह का कारण बन जाती।

किसी ऐतिहासिक महापुरुष के जीवन-वृत्तों पर कुछ लिखना यद्यपि पहाड़ ढकेलने-जैसा कार्य है, तथापि आगे के पृष्ठों में बापू की दिनचर्या के प्रत्येक अंग का हृदयस्पर्शी विवरण प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया जा रहा है, जिससे हम अपने में सद्गुणों का उत्तरोत्तर विशेष विकास कर सकें, वर्तमान में जैसे हैं, उससे अधिक महान् बन सकें और अपने जीवन को पुनर्गठित कर सकें। 'गांधी' फिल्म के निर्माता सर रिचर्ड ऐटनबरो से कहे पं० जवाहरलाल नेहरू के ये शब्द लेखक के सामने आदर्श रूप में रहे हैं— देखो, गांधीजी को भगवान् मत बना देना, उन्हें मनुष्य ही रहने देना। अगर तुमने उन्हें भगवान् बना दिया तो वे हमारे बीच नहीं रहेंगे। हम चाहते हैं कि वे सदा हमारे साथ रहें, हमारे दिलों में जीवित रहें। ●

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

निद्रा-त्याग

बापू की दिनचर्या ब्राह्ममुहूर्त्त से प्रारम्भ हो जाती। भारत जैसे समशीतोष्ण देश में सभी के लिए सूर्योदय से पहले निद्रा-त्याग वे आवश्यक मानते। उनकी दृष्टि में ऐसा करना कोई बड़ी बात नहीं। हाँ, इसके विपरीत आचरण करने पर उन्हें आश्चर्य जरूर होता, क्योंकि कृषिप्रधान भारत के किसान यदि देर तक शयनसुख लेते रहें, निद्रा-मग्न रहें, तो उनके पशुओं के आहार तथा उनकी खेती का काम ठप हो जाय।

जोहांसवर्ग (दक्षिण अफ्रीका) पहुँचने तक बापू स्वयं सुबह छह-सात बजे से पहले प्रायः सोकर नहीं उठ पाते, किन्तु इसके बाद आधी रात में सोने पर भी आम तौर पर भोर में साढ़े तीन बजे उठ जाते। आम तौर पर उनके उठने का समय चार बजे था। जब वे विशेष कार्यरत रहते, तब अपनी नींद और अपने कष्ट का खयाल किये बिना निश्चित लक्ष्य तक पहुँचने की चेष्टा करते। ऐसे कुछ प्रसंग उल्लेखनीय हैं।

बापू जून, सन् १९३४ में काशी विद्यापीठ में कांग्रेस-कार्य-समिति की बैठक के अवसर पर पधारे। उस समय वे कुछ अस्वस्थ थे, फिर भी अपने सहायकों को आधी रात में उठाकर कार्य में जुट जाते। बापू के सचिव इस विषय में उनसे आगे रहते। सेवा का कोई अवसर वे हाथ से जाने नहीं देते। सेवाग्राम में भी बापू रात में दो - तीन बजे उठकर लिखते। इसे काका साहब ने 'नींद पर अत्याचार' की संज्ञा दी। बापू यद्यपि स्वयं इससे सुपरचित थे और निद्रा पूर्ण मात्रा में लेने को कहते ; तथापि कभी-कभी परिस्थितिवश ऐसा करना उनके लिए कठिन हो जाता। उस

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समय उनका सिद्धान्त होता– सो तो फिर लेंगे, लेकिन किसी कार्य का समय नियत होता है और उसकी पूर्त्ति समय से होनी ही चाहिए।

निद्रा बापू की चेरी थी। उनकी नींद ऐसी सधी थी कि गाढ़े समय पर अलार्म के बिना वे उठ बैठते, फिर भी कभी-कभी अलार्म लगाते। एक बार उन्होंने रात में तीन बजे का अलार्म लगाया, किन्तु अलार्म बज गया बारह बजे से पूर्व ही। वे उठ बैठे। उन्होंने दातुन की और वे बैठ गये लिखने। कुछ देर बाद घड़ी पर नजर पड़ी तो बारह का समय था। कार्य- भार जबर्दस्त था। वे पुनः सोने का साहस न कर सके और लिखते रहे। एक बार एक पत्र उन्होंने रात ढाई बजे लिखा था। एक बार वे रात में एक बजे बिलकुल ताजगी की हालत में उठ बैठे। उन दिनों उनके उठने का यह सामान्य समय बन गया था। इस आंतरिक प्रेरणा को वे ईश्वर की देन मानते। इसी प्रवृत्ति से बापू नोवाखाली में रात में ग्यारह बजे सोने पर भी दो बजे उठ जाते और मनु बहन को जगाकर पत्रादि लिखने-लिखाने लग जाते। यरवदा-जेल में वे सुबह चार बजे उठ जाते। एक बार सन् १९४२ में आगाखाँ महल में सुबह कुछ देर से करीब छह बजे सोकर उठे। इससे उन्हें बहुत आत्मग्लानि हुई। उस दिन उन्होंने उपाहार में दूध का त्याग कर दिया, सिर्फ फलों का रस लिया। सन् '३९ में सेवाग्राम में प्रातः पौने चार बजे और वहीं सन् '४४ के मध्य उनके निद्रा-त्याग का समय साढ़े तीन बजे था। अत्यधिक कार्यव्यस्तता से अंतिम कुछ वर्षों में पिछली रात के ढाई-तीन बजे से उनका दिन प्रारम्भ हो जाता। सन् '४८ की ३० जनवरी को अंतिम दिन वे अपने सामान्य नियम के अनुसार साढ़े तीन बजे उठे। इस प्रकार बापू ब्राह्ममुहूर्त में उठने की बात को महत्त्व देकर अपने निजी आचरण से उसका प्रत्यक्ष उदाहरण प्रस्तुत करते।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दाँतों और आँत्तों की सफाई

रात में बापू के बिस्तर के पास पेशाब का पात्र रखा जाता। वे उसका ही उपयोग करते।

जोहांसवर्ग में बापू खड़े-खड़े दातुन करते। उन दिनों इस काम में उनको पन्द्रह मिनट लगते। वे वहाँ इस अवधि में गीता कण्ठस्थ करते। बापू की दातुन की विधि का महत्त्व था। फिनिक्स (दक्षिण अफ्रीका) निवास के दिनों में वे प्रायः कहते कि सुबह दातुन करने के साथ ही हमें आध्यात्मिक दातुन करनी चाहिये। मुँह का मैल ज़्यों-ज्यों साफ करते जायँ, त्यों-त्यों मन का मैल भी निकालना चाहिये। उन्होंने अपनी यह आदत बना ली थी कि दातुन के साथ गंभीर चिंतन किया करते। साथ के लोग जब दातुन करते, तब बापू की उपस्थिति के कारण गपशप नहीं कर पाते। वातावरण शांत और गंभीर रहता। बापू अत्यंत गहराई से आत्मचिंतन में लीन दिखायी देते। किसी से कुछ कहना जरूरी होने पर संकेत भर कर देते। वे यथासंभव मौन रहते। उन दिनों प्रातःकालीन प्रार्थना का आरंभ नहीं हुआ था। दातुंन के समय का उनका यह चिंतन ही प्रार्थना की आंशिक पूर्त्ति करता।

बापू की दातुन बबूल की होती, जिसका सिरा चीर और कूटकर कूँची की शक्ल में रात में उनके बिस्तर के निकट रख दिया जाता। साथ ही, एक स्टूल पर पानी और लोहे का एक छोटा-सा तसला कुल्ला करने के लिए रहता। बादाम के जले हुए छिलकों तथा नमक को पीसकर बनाये गये मंजन का वे अधिकत्तर व्यवहार करते। दातुन को चीरकर उससे जीभ साफ करते। वे दातुन की चीर को फेंकने के बजाय उसे पानी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

से अच्छी तरह धोकर एक बर्त्तन में इकट्ठा करते और सूख जाने पर जलाने के काम में लाते। इस प्रकार गन्दगी नहीं फैलती और न वह चीर व्यर्थ जाती।

दंत-मुख-शुद्धि के बाद रोज बापू गरम पानी में शहद, नीबू का रस, सोडा-बॉय-कार्ब मिलाकर ग्रहण करते। सुबह सवा चार बजे गरम पानी में नींबू का रस मिलाकर पीने की उनकी आदत यरवदा-जेल में सन् १९२२ में पड़ी। वहाँ वे शहद और गरम पानी भी लेते, नींबू का रस, शहद और गरम पानी– तीनों मिलाकर भी। सन् '३२ में यरवदा में सुबह नौ बजे और शाम को छह बजे वे सोडा तथा नींबू लेते। बापू नियमपूर्वक दातुन के तुरंत बाद आध सेर खौलते पानी में शहद और सोडा मिलाकर बहुत चाव से पीते। ऐसा वे मेद-नाश तथा आँतों की शुद्धि के लिए करते।

शहद का सेवन बापू ने डाक्टर के कहने से आरम्भ किया। उन दिनों उनके शरीर में 'कार्बोहाइड्रेट' की कमी थी। उसकी पूर्त्ति के लिए शर्करा की आवश्यकता थी! सर्वोत्तम शर्करा शहद में होने से बापू उसका सेवन करने लगे। इस प्रयोग से उनको लाभ हुआ। वे बिलकुल निर्दोष (अहिंसक) शहद लेने के पक्ष में थे। अतः स्वयं पाली हुई मधु-मक्खियों के शहद का अक्सर उपयोग करते।

प्राकृतिक चिकित्सक सोडा-बॉय-कार्ब को बहुत नुकसानदेह मानते हैं, किन्तु बापू नियमित रूप से उसका सेवन करते। उनकी मान्यता थी कि आदमी अगर नियमपूर्वक उसका सेवन करे तो वह बुढ़ापे से दूर रहेगा, क्योंकि उसमें नसों को सख्त न होने देने का गुण है। प्रायः लोगों से सोडे की आलोचना सुनकर वे प्राकृतिक चिकित्सकों के उपचारक्रम में उसके न होने की बात स्वीकार करते हुए भी उसे अपनी प्रकृति के विशेष अनुकूल बताते।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रातःकालीन प्रार्थना

शहद और सोडा-बॉय-कार्ब पीने के बाद सुबह की प्रार्थना के लिये थोड़ी देर रहती और सामने कोई अत्यावश्यक पत्र या लेख लिखने का काम होता तो उतनी देर तक बापू लालटेन के प्रकाश में लिखने बैठ जाते।

बापू के दैनंदिन जीवन में सबसे महत्त्व की बात उनकी ईश्वर-प्रार्थना थी। परमात्मा पर उनकी अटूट श्रद्धा और उसके प्रति निरन्तर अपना सम्बन्ध उनके मन में सर्वदा, हर क्षण जागरूक रहता। इसीलिये उनकी प्रभुप्रार्थना बिलकुल हार्दिक होती और उससे वे वह शक्ति प्राप्त करते, जो किसी मानवीय अथवा आसुरी ताकत के जरिये कोई पा नहीं सकता। यह शक्ति, यह बल सबके बीच बाँटना उनका उद्देश्य था। इसीलिये अपने दैनिक जीवन में सर्वप्रथम सामूहिक रूप से सबको संग लेकर वे भगवान् की प्रार्थना करते। सांसारिक जीवन में उनका अपना कुछ भी नहीं था, था प्राणिमात्र के रूप में प्रकटित परमपिता की सेवा में सर्वतोभावेन् आत्मसमर्पण। वे अपने मन, प्राण और तन को इस सेवा का माध्यम मानते और अत्यंत सजगता से ठीक रखते। उनका सारा जीवन प्रार्थनासमन्वित था या यों कहें

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कि प्रार्थना उनका जीवनसंगीत था। वे चाहे सेवाग्राम के शांतिमय वातावरण में रहते या दौरे पर या कोलाहलभरे जनसमूह के बीच, जेल में या राजनीतिक मंचपर, स्वस्थ रहते या आमरण उपवास की स्थिति में, रेल में रहते या जहाज पर, प्रार्थना सदा उनके दैनिक जीवन का अभिन्न अंग रही।

ईश्वर में ज्यों-ज्यों बापू का विश्वास दृढ़ होता गया, त्यों-त्यों प्रार्थना के प्रति उनकी निष्ठा में वृद्धि होती गयी। उन्होंने अनुभव किया कि शरीर के लिए आहार जिस प्रकार अनिवार्य है, उसी प्रकार प्रार्थना आत्मा के लिए अनिवार्य है। सच पूछा जाय तो शरीर के लिए आहार उतना जरूरी नहीं, जितनी जरूरी आत्मा के लिए प्रार्थना। शारीरिक स्वास्थ्य की दृष्टि से आहार-त्याग या उपवास की स्थिति प्रायः आ जाती है, लेकिन 'प्रार्थना-त्याग' या उसके 'उपवास' का कोई प्रश्न नहीं। वे जीवन-नौका का कर्णधार ईश्वर को मानते और उस पर श्रद्धा रखकर संसार-सागर से पार होना संभव मानते। उनके अनुसार प्रार्थना से अन्तरात्मा की पुकार परमात्मा तक पहुँच जाती है। प्रार्थना में ईश्वर से होने वाले सहकार से हृदय का स्नान हो जाता है। जिस प्रकार स्नान या स्वच्छता के बिना शरीर मलीन बना रहता, उसी प्रकार प्रार्थनारूपी जल के बिना मलरहित आत्मा मलीन हो जाती, किन्तु प्रार्थना हार्दिक—हृदय या मन से होनी चाहिये, अन्यथा उससे पूरा लाभ नहीं मिल सकता।

बापू व्यक्तिगत प्रार्थना पर भी बहुत बल देते। सामूहिक प्रार्थना से पूर्ण लाभ प्राप्त करने के लिए व्यक्तिगत प्रार्थना को वे बहुत जरूरी मानते। उनकी मान्यता थी कि जिस तरह व्यक्ति से समाज बनता,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उसी तरह व्यक्तिगत प्रार्थना से सामूहिक प्रार्थना संभव है। वे व्यक्तिगत प्रार्थना को सामूहिक प्रार्थना का मूल मानते और उसे सामूहिक प्रार्थना से अधिक महत्त्व देते।

बापू की सामूहिक प्रार्थना ने कोटि-कोटि मानवसमूह को जो शक्ति और प्रेरणा दी, वह वर्णनातीत है। उनकी हम सब (हिन्दू, मुस्लिम, पारसी, ईसाई—सभी धर्मावलंबियों) को यह नयी देन है। उनकी प्रार्थना में सब धर्मों की उपासना एवं प्रार्थना-सभा में सभी धर्मानुयायियों को सम्मिलित होते देख प्रायः कुछ लोगों को आश्चर्य होता, घबराहट और परेशानी भी होती; परन्तु बापू समन्वयवादी थे; अतः अपने लक्ष्य पर अटल रहते। नोवाखाली-यात्रा के समय वहाँ के दूषित वातावरण में वे अक्सर मुसलमान भाइयों के यहाँ ठहरते और वहाँ अपनी दैनिक प्रार्थना करते। मसजिद के अहाते (अंदर के मकान) में प्रार्थना के अवसर वहाँ आते और वहाँ तालियों के साथ 'रामधुन' होती। वे महामानव थे। उनमें संकीर्णता का अंश तनिक नहीं था। यही कारण है कि साधारण ज्ञान वालों के लिये वे पहेली थे।

बापू का कहना था कि सत्य का आग्रह अगर आश्रम के मूल में है तो प्रार्थना उस मूल की बुनियाद है। इसी कारण, उनके आश्रम में आरंभ से प्रार्थना से कार्य का श्रीगणेश और प्रार्थना से उसका समापन होता। वे प्रार्थना को 'सुबह की कुंजी' और 'शाम की चटकनी' समझते।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बापू की प्रार्थना प्रायः खुले मैदान में होती। उन्होंने आश्रम में प्रार्थना के लिए कभी किसी भवन का निर्माण नहीं कराया। एक बार उन्होंने कहा था कि इतने विशाल प्रार्थना-मन्दिर का निर्माण सम्राट् नहीं करा सकता। चार दिशाओं को वे अपने प्रार्थनामन्दिर की चार दीवारें कहते। तारकमण्डल से सुशोभित आकाश को उसका गुम्बज बताते।

प्रार्थना के समय बापू की निश्चल मुद्रा समाधिस्थ- जैसी होती। वे अंतर्मुख रहते। काका साहब के शब्दों में उस समय भी उनके लिए द्वायवधान (द्विअवधान, दोहरा अवधान) या योग सहजसिद्ध था। आश्रम-पिता होने के नाते छोटे बच्चों के बैठने तथा उनके श्लोकों के उच्चारण आदि पर उनको ध्यान रखना पड़ता। उस समय वे नेत्र बन्दकर सबसे ध्यानावस्थित होने के लिए कहते, किन्तु स्वयं श्लोकों के अर्थों के चिंतन के साथ-साथ बच्चों की योग्यता की परख या देखभाल भी करते।

प्रार्थना के समय की पाबन्दी पर बापू बहुत जोर देते। वहाँ देर से पहुँचने में उन्हें ग्लानि का अनुभव होता। एक बार उन्होंने साबरमती-आश्रम में विष्णु दिगम्बर पलुस्करजी के शिष्य नारायण मोरेश्वरजी खरे को प्रातःकालीन प्रार्थना में विलम्ब होने पर टोका तो उन्होंने संकुचित होकर अपना अपराध स्वीकार किया। इस पर बापू के ये उद्गार निकले—सागर में आग लग जाय तो उसे कौन बुझा सकता है ? इस प्रकार वे अपने सहयोगियों को सीख देते और बराबर सँभालते रहते।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आरम्भ में प्रात:कालीन प्रार्थना का समय निश्चित नहीं था, किन्तु होती वह बेनागे। बापू ने इस विषय में भी प्रयोग किये और क्रमश: चार, पाँच, छह और सात बजे का समय रखा गया। समय-समय पर दिये गये उनके सुझावों या किये गये आग्रह के फलस्वरूप अन्त में प्रात: चार बजकर दस या चार बजकर बीस मिनट समय निश्चित हुआ।

आश्रम में प्रार्थना की घण्टी बजती। कभी न बजती तो बापू स्वयं बजाने पहुँच जाया करते। आगा खाँ महल में वे ही यह कार्य करते। प्रार्थना से पहले दोनों समय दो-दो मिनट का मौन रहता। शांति के समय बापू माला फेरते।

बापू की प्रार्थना का क्रम दक्षिण अफ्रीका में भजन से आरम्भ हुआ। वहाँ पियानो के माध्यम से प्रार्थना के कई भजन गाये जाते। केरान नामक एक भाई के जिम्मे यह कार्य था, यों अन्य कई लोग उस वाद्ययंत्र का उपयोग करते। हुसैन भाई 'है बहारे बाग दुनिया चन्द रोज' उस पर बजाते-गाते और उनका सुर इतना मधुर था कि यह निर्णय करना कठिन होता कि पियानो-वादन हो रहा है या हुसैन भाई गा रहे हैं।

दक्षिण अफ्रीका के बापू के फिनिक्स-आश्रम में सुबह की प्रार्थना का नियम नहीं था। गोलमेज-सम्मेलन के समय लंदन में बापू सुबह तीन बजे उठकर प्रार्थना करने बैठ जाते। अपने साथ के लोगों को

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भी वे उठा देते, जो दिनभर काम करने के कारण थकान से चूर रहते और इसलिये निद्रा में बेसुध पड़े होते। सन् १९१६ में कोचरब-आश्रम में प्रात:कालीन प्रार्थना स्नान के बाद छह बजे होती और सन् '२० के लगभग चार बजे। सन् '२७ में साबरमती-आश्रम में ठीक चार बजे बापू प्रार्थना-सभा में पहुँच जाते। वहाँ संगीताचार्य खरेजी के सहयोग से प्रार्थना सस्वर होती। वे तम्बूरे पर प्रार्थना और भजन गाया करते। उन्होंने प्रार्थना में रस-वृष्टि की और भजन के साथ रामधुन शुरू की। जिस 'आश्रम-भजनावलि' से आज असंख्य जन आनन्दलाभ करते हैं, उसे बापू उन्हीं की कृति मानते, क्योंकि उसके निर्मित करने में उनका बड़ा हाथ था। साबरमती–आश्रम के आरंभ से बापू की प्रातःकालीन प्रार्थना का समय चार बजकर बीस मिनट निश्चित हुआ। अंतिम दिनों में जब बापू बहुत थके रहते तब आश्रम की सुबह की प्रार्थना उनके शयन के स्थान पर होती और वे लेटे-लेटे सबके संग उसमें भाग लेते। पाँच बजे तक प्रार्थना का कार्यक्रम चलता।

पं० बनारसीदास चतुर्वेदीजी ने साबरमती की प्रातःकालीन प्रार्थनासभा का अत्यंत सजीव चित्रण किया है। उनके शब्दों में जिस किसी को उन दिनों बापू के आश्रम में रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ होगा, वह उस पुण्यसलिला साबरमती के तट और उसके तपस्वी को कैसे भूल सकता है ? प्रात:कालीन प्रार्थना का दृश्य अब भी आँखों के सामने नाच जाता है। ऊपर आकाश में सुंदर तारागण, सामने

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शीतल मंदवाहिनी साबरमती, चारों ओर स्वच्छ वायु, सुनने के लिए गायनाचार्य शास्त्री खरे का मधुर स्वर और दर्शन के लिए संयम-मूर्त्ति गांधीजी !

उस समय नित्यप्रति प्रार्थना के बाद दोनों समय शांतिपूर्ण वायुमण्डल में, गंभीर स्वर में और प्रायः गुजराती में बापू कुछ-न-कुछ अवश्य कहते। प्रातः काल के पाँच बजते-बजते उनका प्रवचन समाप्त हो जाता। उस समय चारों ओर बिलकुल सन्नाटा रहता, साबरमती का जल मंद गति से बहते हुए मानों धीरे-धीरे 'संयम-संयम' कहता, चिड़ियों की चहचहाहट मानों संयम के उपदेश से परिपूर्ण होती और उस स्तब्ध वातावरण में वही शब्द गूँजता। बापू के प्रत्येक प्रवचन में, उनके दीर्घकालीन अनुभवों के कारण अनेक स्मरणीय बातें रहा करतीं।

बापू सत्याग्रहाश्रम में प्रार्थना के पश्चात् वहाँ जब सिर्फ आश्रमवासी रहते, उनके एक-एक प्रश्न पर यथा—सत्याग्रही के नाते उनका व्यवहार कैसा हो, इस पर प्रकाश डालते। उनके अनुसार सत्याग्रह मात्र अंग्रेजों के विरुद्ध लड़ाई का एक अस्त्र नहीं, बल्कि सत्याग्रह तो सत्य की खोज करने वालों की संपूर्ण जीवनपद्धति है। इसीलिये जीवन के सभी पहलुओं की परीक्षा प्रार्थनास्थल पर सत्याग्रह की कसौटी पर होती। कई निजी सवालों की छानबीन बापू प्रार्थना के बाद करते। इसी स्थल पर उन्होंने गीता-प्रवचन भी किया। दाण्डीयात्रा के समय लोगों की भीड़ की वजह से प्रार्थनास्थल

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

छोटा पड़ा तो साबरमती नदी के विशाल रेती के तट का उपयोग किया गया। नारायण भाई देसाई के शब्दों में पंडित खरे की सागरगंभीर संगीत-ध्वनि, जो जड़ को भी दोलायमान करने वाली थी, उस समय की मेदिनी के सामने अपर्याप्त सिद्ध हुई।... स्थल भी कितना रमणीय था ! एक ओर हृदयकुंज, दूसरी ओर दत्तमंदिर, तीसरी ओर वह नदी, जो गरमी के दिनों में अन्तःस्रोता फल्गु की तरह रुक्ष, रेतीली, तो वर्षाऋतु में तूफानी बाढ़ के कारण घों-घों करने वाली, किन्तु बारहों मास प्रार्थनास्थल का चरण प्रक्षालन करते हुए अखण्ड बहती हुई साबरमती नदी ! बापू उत्तर की ओर पेड़ के नीचे बैठते और उनके दोनों ओर भाई-बहनें।

प्रातःकाल की प्रार्थना में जापानी बौद्ध मंत्र, उपनिषद् मंत्र, प्रातःस्मरण वाले श्लोक, एकादश व्रत, कुरान की आयतें, जरथोस्ती (पारसी) गाथा, भजन, धुन और गीतापाठ– यह क्रम था। गीता का नित्य पाठ इस क्रम से होता कि एक सप्ताह में सम्पूर्ण पारायण हो जाये। पहले दो सप्ताह में पूरी गीता पढ़ी जाती। काका साहब के सुझाव से यह क्रम एक सप्ताह में पूरा होने लगा। तदनुसार शुक्रवार को पहला- दूसरा, शनिवार को तीसरा, चौथा और पाँचवाँ, रविवार को छठाँ, सातवाँ, आठवाँ, सोमवार को नवाँ, दसवाँ, ग्यारहवाँ, बारहवाँ, मंगलवार को तेरहवाँ, चौदहवाँ, पन्द्रहवाँ, बुधवार को सोलहवाँ-सत्रहवाँ और गुरुवार को अट्ठारहवाँ– यह क्रम चलता। साप्ताहिक गीता-पारायण में अध्यायों का यह विभाजन विनोबाजी ने

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

किया था। इसके अतिरिक्त, माता कस्तूरबा के निधन-दिवस पर हर महीने की बाईसवीं तारीख को विशेष रूप से सम्पूर्ण गीता का पारायण होता। आगा खाँ महल से छूटने के बाद, सेवाग्राम में बापू की सुबह की प्रार्थना में संस्कृत गीता के बदले मराठी 'गीताई' का पारायण होने लगा, जो विनोबाजी की कृति है। प्रातःकाल की प्रार्थना में गाये जाने वाले श्लोक आश्रम की स्थापना के समय से आज तक प्रार्थना में मौजूद हैं और उनके चयन का श्रेय काका साहब को है। 'एकादश व्रत' वाले श्लोक के रचयिता विनोबाजी हैं।

बापू बराबर प्रार्थना में कुछ-न-कुछ जोड़ दिया करते। सन् १९१५ में हरिद्वार में कुम्भ के अवसर पर स्थापित सेवा- समिति के आदर्श वाक्य के रूप में 'नत्वहं कामये राज्यं..' वाला श्लोक चुना गया। बापू 'समिति' के खेमे में ठहरे थे। उन्हें ये पंक्तियाँ इतनी प्रिय लगीं कि उन्होंने इनको अपनी दैनिक प्रार्थना में सम्मिलित कर लिया। एक बार प्रसिद्ध कांग्रेसी नेता अब्बास तैयबजी की पुत्री रेहाना बहन ने बापू की प्रेरणा से आश्रमवासियों को कुरान की आयतें सिखायीं। आश्रम के भाइयों ने जो आयतें उनसे सीखीं, उनमें सबसे मशहूर 'अलफातिहा' है। इस प्रकार यह आयत भी प्रार्थना में सम्मिलित हो गयी। आगाखाँ महल में डाक्टर गिल्डर के सम्पर्क में आने पर बापू ने उनसे जरथोस्ती गाथाओं में से एक प्रार्थना देने को कहा। परिणामस्वरूप पहलवी भाषा में लिखित एक जरथोस्ती गाथा उनकी प्रार्थना में सम्मिलित हो गयी।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आश्रम की प्रार्थना में पढ़े जाने वाले जापानी बौद्ध मंत्र का अपना इतिहास है। सन् १९३६ ई०के लगभग कुछ जापानी धर्माचार्य सेवाग्राम में ठहरे। उनमें केशो नामक एक साधु नित्य प्रातःकाल अपनी प्रार्थना ढोलक बजा-बजाकर चलते-फिरते किया करते। आश्रम की दोनों समय की प्रार्थना नित्य उनके मंत्र 'नं म्यो होरेंगे क्यो' के जप से आरंभ हुआ करतीं। बाद में जापान से युद्ध की घोषणा होने पर वे गिरफ्तार कर लिये गये। जब पुलिस उनकी गिरफ्तारी के लिये आयी तब वे अपनी ढोलक के साथ जिस व्यवस्था, शीघ्रता और तटस्थता से तैयारी कर बापू के सामने आ खड़े हुए और उन्होंने अपने प्रिय मंत्र का उच्चारण करते हुए बिदा चाही, उससे बापू बहुत प्रभावित हुए। तभी से वह मंत्र आश्रम की प्रार्थना का अविभाज्य अंग बन गया। बापू उस मंत्र को अपने लिये साधु केशो की पवित्रता और एकनिष्ठा की अमिट स्मृति मानते और उसमें विशेष शक्ति बताते।

बापू समझदार संगीतज्ञ थे। स्वर की शुद्धता, उसके माधुर्य और उसमें सन्निहित भावना, जो उनकी दृष्टि में विशेष गरिमा रखती, तीनों पर उनका ध्यान रहता। इसी कारण उनकी प्रार्थना में पेशेवर गायकों या अनधिकारियों का अतिक्रमण बहुत कठिन था। सेवाग्राम में उनकी दोनों समय की प्रार्थना में दिलरुबा पर भजन गाने का सौभाग्य कनु भाई गांधी को प्राप्त होता। प्रवास में बापू की सामुदायिक प्रार्थना कराने का श्रेय भी उनको प्राप्त है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बापू की प्रार्थना-सभा में गाये जाने वाले भजन हिन्दुस्तानी, गुजराती, मराठी, बंगला, सिन्धी तथा अंग्रेजी प्रभृति कई भाषाओं के थे। गुजराती भजनों में नरसी मेहता का सुप्रसिद्ध भजन 'वैष्णवजन तो तेने कहीए जे पीड पराई जाणे रे!' बापू को इतना प्रिय था कि प्रायः प्रत्येक महत्त्वपूर्ण अवसर पर इसको गाकर वे कार्य का शुभारम्भ करते। सन् १९२४ में अपने इक्कीस दिवसीय उपवास की अवधि में 'रघुवर! तुमको मेरी लाज!' वाला गोस्वामी तुलसीदासजी का भजन वे बराबर गाते रहते। सूरदासजी का 'वृक्षन से मत ले, मन तू वृक्षन से मत ले!' वाला भजन भी उनको बहुत प्रिय था। इसी प्रकार खिस्ती भजनों में 'लीड, काइन्डली लाइट' वाला भजन उनके अत्यन्त प्रिय भजनों में था।

सामूहिक प्रार्थना में रामधुन का गाया जाना बापू प्रार्थना का सबसे महत्त्वपूर्ण अंग मानते। उस समय वे स्वयं अपने हाथों से ताल देते। उनके कथनानुसार जब रामधुन सस्वर और ताल के संग गायी जाती है, उस समय स्वर, ताल और विचार—तीनों के संयोग से माधुर्य और शक्ति का ऐसा स्थायी वातावरण बनता है, जो वर्णनातीत है। लक्ष-लक्ष जनों द्वारा सच्चे हृदय से एक ताल और लय में गायी जाने वाली रामधुन की शक्ति को वे सैनिक शक्ति से सर्वथा पृथक् और कई गुनी बढ़ी-चढ़ी मानते। बापू को यह क्रम अत्यंत प्रिय था। इसी कारण कनु भाई कुछ खास-खास लोगों को एक लय में गाने का प्रशिक्षण दिया करते। एक से ताल देने और दो से दोनों

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हाथ अलग करने से अभिप्राय है। इस तरह की शिक्षा से सभी एक ताल, एक लय और एक स्वर में गाना शीघ्र सीख जाते। स्टेशनों पर जब बापू के दर्शनार्थ अपार जनसमूह उमड़ पड़ता और भारी शोर होने लगता, उस समय वे अपने साथ के लोगों को रामधुन के लिये कहते। उससे वातावरण बिलकुल शांत हो जाता।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शौच

प्रातःकालीन प्रार्थना के बाद बापू प्रायः डाक्टरों के परामर्श के अनुसार कुछ देर सो जाते। कभी-कभी डाक वगैरह का काम निबटाते। सेवाग्राम में जब से रहने लगे, तभी से जरूरत पड़ने पर प्रार्थना के बाद वे पत्र लिखते-लिखाते और लेख लिखते। बाद में अक्सर कुछ देर सोकर थकान दूर कर लेते। आगा खाँ महल में सुबह वे प्रार्थना के बाद दो चम्मच शहद और नींबू का रस आठ औंस गरम पानी में लेते। दिल्ली में अन्तिम दिनों में भी प्रार्थना के बाद वे गरम पानी में शहद और नींबू का रस लेते। उन्हीं दिनों बिहारयात्रा में प्रार्थना के बाद वे गरम पानी में केवल शहद लेते। अपने जीवन के अंतिम दिन प्रार्थना के पश्चात् वे कांग्रेस का संविधान प्रस्तुत कर रहे थे। पौने पाँच बजे उन्होंने गरम पानी में शहद और नींबू का रस लिया।

बापू सुबह छह बजे शौच जाते। दिन भर में वे सामान्यतः चार बार शौच जाते। कुछ दिन शुरू-शुरू में वे शौच के लिये खेत में गये, लेकिन बाद में हमेशा 'कमोड' या कमोड की तरह के पाखाने का उपयोग करते। अफ्रीका में आश्रम-गृह के समीप लगभग डेढ़ फुट गहरा गड्ढा खोदा गया था। उसमें सारा मल डालकर मिट्टी से पाट दिया जाता। इससे दुर्गन्ध और मक्खियों से रक्षा होने के साथ ही अमूल्य खाद की प्राप्ति हो जाती। सेवाग्राम में बापू का तथा अन्य शौचालय इसी प्रकार के नये ढंग से बनाये गये, किन्तु ग्रामविभाग के उपयोग के थे और वे बिलकुल स्वच्छ रहते। उपयोग के पश्चात्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उन पर हर बार मिट्टी डाली जाती, जिससे किसी प्रकार की गन्दगी नहीं रहती। बापू का आग्रह था कि शौचालय की स्वच्छता सारे घर की तुलना में सबसे ज्यादा होनी चाहिये।

संभवतः सन् १९३८ का प्रसंग है। बापू कमोड पर शौच जाना छोड़कर नाली वाले आम शौचालय में जाने लगे थे। नियम यह था कि हर व्यक्ति शौच से निवृत्त होकर अपने मल पर थोड़ी मिट्टी डाल दे।

एक दिन अमृतलाल नाणावटीजी ने बापू को छोटे फावड़े से मिट्टी कुरेदते देखा तो वे तुरंत बापू के पास पहुँचे और बोले– लाइये बापू, मैं डाल दूँ मिट्टी। बापू बोले– अपने शौच पर तो मैं मिट्टी डाल चुका हूँ। यह मिट्टी तो मैं अपने बाद आने वालों के लिये जमा कर रहा हूँ। अपने बाद आने वालों की इतनी चिंता रहती थी बापू को!

बापू शौचालय को पुस्तकालय-जैसा स्वच्छ रखने के लिये कहते, जहाँ बैठकर कुछ अध्ययन किया जा सके। भोजनालय तथा शौचालय को वे 'जीवन की कुंजियाँ' कहते। उनका शौचालय उनका पुस्तकालय बन गया था। वहाँ पुस्तकें, समाचारपत्र और समाचारपत्रों से काटी गयीं उनकी रुचि की कतरनें रखी रहतीं, जिन्हें देर तक कमोड पर बैठे-बैठे वे पढ़ा करते। शौचालय के निकट ही बिना ढक्कन की देवदार की लकड़ी की फलों के पार्सल में आने वाली दो दर वाली पेटी रहती। शौच जाते समय अपने साथ ले जाने वाले कागज-पत्र वे उसी में रखते। सेवाग्राम में उनका यह क्रम नियमित रूप से चलता।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बापू जब अत्यधिक व्यस्त रहते, तब सेवाग्राम में आश्रमवासियों से प्रायः शौचालय में मिलते भी। विशेष स्थिति में, शौचालय में कमोड से कुछ दूरी पर उसी ऊँचाई पर बनी खिड़की से कोई व्यक्ति वहाँ उनसे सम्पर्क कर सकता। वे शौचालय में बैठते तो उनके सहायक उनकी चिट्ठियाँ पढ़कर सुनाते। विवशतावश उन्हें ऐसा करना पड़ता। लोगों से अपना अनुसरण न करने का उनका आग्रह रहता। उन्हें भय था कि कार्यकर्त्ताओं तथा सर्वसाधारण के जीवन में कहीं यह पाखण्ड का रूप न ले ले। वे सोचते कि यदि लोग इसे आदर्श मानकर अनुसरण करने लगेंगे तो भयावह स्थिति हो जायगी।

शौच के विषय में मानवशरीर और विकृति-विज्ञान की दृष्टि से तथा व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर बापू का यह विचार दृढ़ हो गया था कि मनुष्य जिस श्रेणी का और जिस प्रणाली से आहार ग्रहण करता है, उसी के अनुरूप उसका मल बनता है। वे कहा करते कि पाचन हो जाने पर आहार करने वाले का मल थोड़ा, बँधा हुआ, कुछ काला, चिकना, सूखा और बिलकुल दुर्गन्धहीन होता है। कब्जियत के कष्ट का कारण वे अधिक और अखाद्य आहार तथा उसे खूब चबा-चबाकर न खाना बताते। कई देशी और विदेशी शरीर-शास्त्रियों तथा स्वास्थ्य की पुस्तकें पढ़कर वे इस सिद्धांत पर पहुँचे कि सर्व प्रथम आहार पर नियंत्रण करना श्रेयस्कर है। उन्होंने आहार-संयम के द्वारा मल पर बहुत-कुछ नियंत्रण कर लिया था।

सन् १९१८ में पेचिश से बापू का मलद्वार बहुत नाजुक हो गया था। वहाँ की चमड़ी के फट जाने से मलत्याग के समय उन्हें बहुत कष्ट होता। उस समय उनका सफल आपरेशन किया गया। उसके बाद शौच के समय जोर करने की डॉ० दलाल ने मनाही कर दी। वे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दस-पन्द्रह मिनट में और कभी आध घण्टे में शौचालय से लौट आते। शुरू में उनको कब्ज और सिरदर्द की भी शिकायत रहती, जिसके लिए वे जब-तब 'फ्रूट साल्ट' सेवन किया करते। इसी कारण दक्षिण अफ्रीका में उनको शौचालय में अधिक समय तक बैठना और जेल कर्मचारियों का दुर्व्यवहार सहन करना पड़ता, किन्तु अपने संयमित आहार-विहार तथा मिट्टी की पट्टी के नियमित प्रयोग से उनकी शिकायत दूर हो गयी और यदा-कदा अधिक कब्ज होने पर वे एनीमा लेते। इससे भी कब्ज न मिटने पर सुबह छोटा पौन चम्मच रेंड़ी (एरंड) का तेल लेते।

एक घटना उल्लेखनीय है। बापू पेचिश से पीड़ित थे। वह समूल नष्ट नहीं हुई थी। उस समय उन्हें अपने आहार की मात्रा में बहुत कमी कर देनी पड़ी। वे भारी थकावट महसूस कर रहे थे। इसी बीच वे तेज जुकाम से पीड़ित हो गए। कफ से उनको सीने में दर्द होने लगा। उन्होंने किसी के परामर्श से बादामप्रधान आहार ले लिया। उनकी पाचन-क्रिया और भी बिगड़ गयी। उस पर काबू पाने की दृष्टि से एक दिन उन्होंने रेंड़ी के तेल की एक मात्रा अधिक ले ली। फलस्वरूप वे अचेत हो गए। आश्रम के एक भाई संयोगवश वहाँ उसी समय पहुँच गए, अन्यथा बापू गिर पड़ते।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जलपान

विलायत-प्रवास के विद्यार्थी-जीवन में बापू सुबह के जलपान में ओटमील (जई) की लपसी और कोको लेते। बाद में उन्होंने अनुभव किया कि चाय, कॉफी, कोको—सभी का प्रयोग स्वास्थ्य तथा नैतिक—दोनों दृष्टियों से ठीक नहीं। फिर भी आश्रम में मेहमानों के लिए चाय की व्यवस्था वे आतिथ्यधर्म की दृष्टि से करते। दक्षिण अफ्रीका के टालस्टाय फार्म में सन् १९१२ में उनका जलपान बहुत सादा होता। वहाँ सुबह छह बजे वे रोटी और गेहूँ की 'कॉफी' लेते। गेहूँ को एक खास तरीके से खूब भून और पीसकर उसका उपयोग 'कॉफी' के रूप में किया जाता। उस 'कॉफी' के उबाले हुए पानी में दूध-चीनी मिलाकर वे पीते और उसमें कॉफी की तरह ही स्वाद का अनुभव करते, किन्तु असली कॉफी का नशा बिलकुल नहीं होता। आश्रमवासी भी उनकी तरह गेहूँ वाली 'कॉफी' पीते। वहाँ उसमें गाय के दूध के बजाय डिब्बे का दूध काम में लिया जाता। विवशतावश ऐसा करना पड़ता। बाद में मूँगफली को पानी में पीसकर बनाया गया 'दूध' 'कॉफी' में इस्तेमाल होने लगा और डिब्बे का दूध हमेशा के लिये बन्द हो गया।

बापू दूध को मांसाहार मानते, क्योंकि रक्त,मांस और मज्जा के सत्त्व से ही वह बनता है। इसे वे फलाहार की श्रेणी में नहीं लेते। इसमें हिंसा भले न हो, परन्तु प्रकारांतर से यह मांसाहार ही है, ऐसी उनकी धारणा थी। उनके मन में हमेशा यह भावना रही कि दूध मांस है और अहिंसाधर्म का विरोधी है। इसके अतिरिक्त, कलकत्ता जैसे शहरों में गाय-भैंस का दूध 'फूँका' सरीखी अमानवीय तथा घातक प्रक्रिया से

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

निकाले जाने का दृश्य उनके सामने था। इस प्रकार उनके दूध त्यागने में धर्म-भावना की प्रधानता थी। और भी एक कारण था। वह यह कि धनी और गरीबों के आहार में मौजूदा भेदभाव को वे अपने प्रयोगों से समाप्त करना चाहते।

जब बापू लंदन में छात्रावास्था में थे, उस समय उन्होंने विचार किया कि यह प्राणिज द्रव्य यदि न लिया जाय तो कैसा हो ? और, जब बच्चों को दूध नहीं मिल पाता, जिनका यह पूर्ण आहार है, तब बड़ी उम्र के लोग दूध के बिना निर्वाह कर सकते हैं। अमीर और गरीब का प्रश्न यहाँ अपने-आप उपस्थित हो जाता है। अंत में उन्होंने अपने साथी मि० कलनबक के आग्रह से सन् १९१२ में टालस्टाय-फार्म में न केवल गाय के, बल्कि किसी भी पशु के दूध का परित्याग करने का संकल्प कर लिया– यहाँ तक कि गाय-भैंस के घी और मट्ठे तक का परित्याग कर दिया। बाद में सन् १९१८ में आँव की बीमारी के बाद डाक्टरों द्वारा दूध लेना अनिवार्य बताने पर बा के विशेष आग्रह से उन्होंने बकरी का दूध किसी प्रकार स्वीकार किया, लेकिन उसे भी छोड़ने की धुन में वे बराबर रहा करते। उसका सेवन करते समय वे नित्य कष्ट का अनुभव करते। कहते कि इस लोभ में पड़ना ठीक नहीं हुआ ; किन्तु जीवित रहने की प्रबल आकांक्षा ने ऐसा करने के लिए विवश कर दिया।

बापू के लिए आश्रम में जो बकरी थी, उसे नहलाया और बहुत आराम से रखा जाता। उसके थनों को वे खूब अच्छी तह धुलवाते और उसके बच्चे को पहले भर-पेट दूध पिलाकर तब दुहवाते। दूध पर सबसे प्रथम उसका और उसकी तृप्ति हो जाने पर वे अपना अधिकार मानते।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गाय का दूध त्यागने और बकरी का दूध ग्रहण करने पर भी बापू दूध का प्रतिनिधित्त्व करने वाले द्रव्यों के प्रयोगात्मक परीक्षण बराबर करते रहे। दूध में मौजूद शक्ति बहुत-कुछ अंशों में जैतून के तेल और बादाम की गिरी में है, ऐसा उन्होंने अनुभव किया। न केवल पूरक रूप में, बल्कि दूध की खराबियों से रहित इन दोनों को वे बताते। वे मानते कि बादाम का सेवन करने के बाद दूध की कोई खास जरूरत नहीं रहती। दूध से बनने वाली छाछ के बजाय नींबू, बादाम की गिरी तथा घी के स्थान पर जैतून का तेल एवं कच्चे नारियल की गिरी को कसकर और उसमें पानी मिलाकर साफ कपड़े से छानकर निकाले 'दूध' का उपयोग वे किया करते।

फिनिक्स-आश्रम में क्यूने-पद्धति से निर्मित डबल रोटी, खजूर, नारंगी के छिलकों का मुरब्बा या फल और गेहूँ वाली 'काफी'– ये चीजें बापू के जलपान में रहतीं। नारंगियाँ वहाँ काफी थीं। सन् १९२० में वे सुबह के जलपान में बकरी के गरम दूध में लाल मुनक्का डालकर डबल रोटी के दो टोस्ट के साथ लेते। सन् '२२ में यरवदा-जेल में वे प्रति दिन सुबह किशमिश अच्छी तरह साफ कर लेते। वहाँ उन दिनों कुछ अस्वस्थ होते हुए भी वे फल नहीं लेते। बाहर लाठीचार्ज हो रहा था। बाजार से फल मँगवाना उनको नापसन्द था। काका साहब कालेलकर के विशेष प्रयत्न एवं आग्रह के बाद उन्होंने पपीता खाया। सांबरमती में सन् १९२५ में प्रातः लगभग साढ़े छह बजे वे जलपान करते, जिसमें राब, भुने हुए आटे और गुड़ से निर्मित चाय सरीखा पतला गरम पेय, खास तालीम प्राप्त एक भाई द्वारा बनायी गयी हाथचक्की के मोटे आटे की ब्राउन ब्रेड और दूध– ये चीजें रहतीं। यरवदा-जेल में सन् '३२ में अस्पृश्यता- निवारण-सम्बन्धी अपने ऐतिहासिक उपवास के बाद वे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नारंगी, मौसम्मी; अंगूर या अनार का रस पूर्ण रूप से लेते। उन दिनों वहाँ वे टमाटर का रस भी लेते। आगा खाँ महल में सुबह मौसम्मी का रस लेते। सेवाग्राम में किसी समय सुबह के जलपान में वे खजूर के रस का गुड़ लिया करते। जीवन के अन्तिम दिन सुबह पौने छह बजे उन्होंने सोलह औंस संतरे का रस लिया।

शरीर पर आहार विषयक प्रयोगों के कारण बापू अपने जीवन पर कई बार खतरा मोल ले चुके थे। वे सुबह के जलपान में बकरी का दूध हमेशा आठ औंस लेते। नोवाखाली में एक बार बकरी का दूध न मिल सका तो उन्होंने स्वेच्छा से नारियल का 'दूध' निकलवाकर लिया और वह भी उतनी ही मात्रा में लिया, किन्तु उसे वे हजम न कर सके। उनको दस्त होने लगे। शाम होते-होते उन्हें इतनी कमजोरी आ गयी कि बाहर से झोपड़ी में आते-आते चक्कर आने लगे। ●

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रात:कालीन वायु-सेवन

बापू प्रार्थना तथा सूत्र-यज्ञ की भाँति वायु-सेवन को महत्त्वपूर्ण एवं अनिवार्य मानते। इसे वे 'कसरतों की रानी' कहा करते। उनका विचार था कि तेज भूख के समय जिस तरह हम सब काम छोड़कर भोजन पर टूट पड़ते और हमें उस समय कुछ अच्छा नहीं लगता, यही स्थिति वायु-सेवन का समय होने पर होनी चाहिये। वे टहलने को न केवल भोजन, बल्कि नींद से भी अधिक महत्त्व देते। वायु-सेवन के अपने नियम में वे कभी परिवर्त्तन नहीं करते। सभी ऋतुओं में उनका टहलना बना रहता। यदा-कदा रेलयात्रा में एक-दो या अधिक दिनों तक रहने के कारण तथा अधिक अस्वस्थ होने पर ही उनका टहलना रुकता, किन्तु रेल से उतरने के बाद अपने मुकाम पर पहुँचते ही सबसे पहले वे टहल लिया करते। घूमते समय काम की बात करना बापू अपने लिए अच्छा नहीं समझते। वे उस समय गीता जैसे गम्भीर विषय पर मनन करते या मौन रखने के पक्ष में थे, किन्तु समय के मूल्य को ध्यान में रखते हुए उनके प्रत्येक मुख्य कार्य के पीछे एक-न-एक आनुषंगिक कार्य लगा ही रहता। यही कारण है कि उस समय भी उनके साथ आश्रमवासियों के अलावा भेंटवार्त्ता के लिए आये हुए लोगों की अच्छी-खासी भीड़ रहती। साबरमती-आश्रम में रोज बापू दोनों समय एक मील टहलते। सेवाग्राम में शुरू में करीब सवा साल तक वे सुबह-शाम टहला करते। अंतिम दिनों में उन्होंने घूमना कुछ कम कर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दिया था। सन् १९३२ में यरवदा-जेल में सरदार पटेल के साथ नित्य नियमपूर्वक आँगन में घूमते समय वे अखबार सुनते। उन दिनों जब कोई अखबार न होता तो 'माडर्न रिव्यू' पढ़ा जाता। दिल्ली में अन्तिम दिनों में वे प्रातःभ्रमण के समय अखबार सुनते। सन् '४२ में आगा खाँ महल में जेल और बगीचे के बीच के बरामदे में घूमते समय वे गीता याद करते।

वृद्धावस्था में बाँस की लाठी बापू के पथ का आधार थी। पैरों में तकलीफ हो जाने के बाद से समूह में से उनका कोई-न-कोई कृपाभाजन सहारा देता रहता। अन्तिम दिनों में लिखने-पढ़ने के श्रम से हुए आँखों के कष्ट के कारण बापू घूमते समय कुछ दिन आँखों पर पट्टी बाँधते। उनकी गति के साथ अपनी गति को सम रखना कभी-कभी युवकों के लिए कठिन हो जाता। सामान्यतः उनका भ्रमण तेजी से नहीं होता, किन्तु पद-यात्रा में वे तेज चलते। उनकी ऐतिहासिक दाण्डी-यात्रा का प्रसिद्ध चित्र इस संदर्भ में दर्शनीय है। उसमें यह देखने योग्य है कि तेज कदम बापू अपने नायकत्त्व में किस गति से अग्रसर हो रहे हैं। उनकी चाल, कर्मठता और उनका उत्साह—सभी युवकों के समान दिखायी देता है।

छात्रावस्था में— हाई स्कूल के दिनों में बापू खेल-कूद में बहुत कम भाग लेते, क्योंकि प्रायः वही समय पिता की सेवा का था। फिर भी खुली हवा में घूमकर वे इस कमी की पूर्त्ति कर लिया करते। तभी से वे वायुसेवन से इतने प्रभावित हुए कि अंत तक यथासमय टहलने जाते रहे। लंदन में आठ-दस मील वे सहज ही नित्य घूम-फिर लेते। अपनी इस आदत के फलस्वरूप वे शायद ही वहाँ कभी बीमार पड़े हों। दक्षिण अफ्रीका में इक्कीस मील पैदल चलकर वे वकालत करने जाते। उन दिनों वे शनिवार को बयालीस मील की पदयात्रा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

करते। बहुत तड़के उठकर रात को बनायी हुई रोटियाँ और नीबू का अचार साथ में लेकर निकल पड़ते, रास्ते के झरने में स्नान करते, इक्कीस मील का रास्ता तय करके अदालत पहुँचते और रोटियाँ खाकर काम में लग जाते। शाम को गाड़ी से घर लौटते, किन्तु शनिवार को पैदल ही। इस प्रकार बयालीस मील का रास्ता वे पैदल तय कर लेते।

गोलमेज-सम्मेलन के अवसर पर कार्य की अधिकता तथा दिन में अवकाश न मिलने से बापू भोर में पाँच बजे लंदन के पूर्वी छोर में घूमने जाते। विन्सटन चर्चिल की भतीजी, सुप्रसिद्ध मूर्त्तिशिल्पिनी और अनेक यात्रापुस्तकों की लेखिका श्रीमती क्लेयर शेरडिन के कथनानुसार उस समय बापू अपने चारों ओर खद्दर लपेटकर इतनी तेजी से आगे बढ़ते कि कुहरे में उनके लुप्त हो जाने का भय बना रहता। बाद में उनकी रक्षा के लिए नियुक्त दो गुप्तचरों को हाँपते-हाँपते आते देखा गया था। बापू ने हँसकर उन लोगों का अभिवादन करते हुए अपने कारण हुए कष्ट के लिए खेद व्यक्त किया। उस समय हाथ भर दूर की चीज भी आसानी से दृष्टिगोचर नहीं होती थी। बापू का रंग रात्रि के रंग में विलीन हो गया था। इस कारण, जब वे एक नहर के किनारे-किनारे बहुत तेज रफ्तार से चल रहे थे, तब ऐसा प्रतीत होता, मानों कोई श्वेत पोशाक तैरती हुई जा रही हो। पानी का शब्द कानों में प्रवेश करता, लेकिन वह दिखायी नहीं देता। वे इतनी तेज गति से चल रहे थे कि उनका साथ देना श्रीमती शेरडिन के लिये कठिन था। एक बार स्वयं बापू ने भी वायु-सेवन के इस विशेष प्रसंग को अविस्मरणीय बताया था।

अगस्त सन् १९४२ में बंबई में कांग्रेस-कार्य-समिति की बैठक के अवसर पर अत्यंत गंभीर विषय की चिंता में निमग्न रहने पर भी बापू वहाँ के 'बिड़ला-हाउस' के अहाते में हरियाली से आच्छादित एक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

छोटे-से आँगन के चारों ओर बनी वर्तुलाकार पगदण्डी पर टहलते। वहाँ पहला चक्कर वे बाएँ से दाएँ और शेष आधा उसकी विपरीत दिशा में लगाते। एक बार जब वे पुणे के प्राकृतिक चिकित्सालय में टिके थे, दोनों समय वहाँ के बगीचे के बीच के बरामदे में टहला करते। अंतिम दिन प्रातःकाल उनकी टहलने की इच्छा न हुई तो वे अपने कमरे में ही इधर से उधर चक्कर लगाते देखे गये।

बापू के वायुसेवन के समय में भी परिवर्तन होता रहता। साबरमती में वे छह बजे घूमने निकलते तो यरवदा-जेल में भोर में साढ़े चार से साढ़े पाँच बजे तक। सेवाग्राम में गरमी के दिनों में प्रातः छह बजे और जाड़े के दिनों में सात बजे वायुसेवन के लिये निकलते। नोवाखाली में वे प्रातः साढ़े सात से नौ बजे तक टहलते।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रोगी-सेवा और चिकित्सा

रोगियों की चिकित्सा तथा उनकी प्रत्यक्ष सेवा-शुश्रूषा से ही बापू की दैनंदिन जीवनचर्या में निहित सार्वजनिक और सेवामय कार्यक्रम का श्रीगणेश होता। इससे उन्हें बहुत संतोष मिलता,इसे वे भगवान् की सेवा समझते। अपंग या असहाय की सेवा को वे मानवधर्म कहते और ऐसे ही जनों में उन्हें प्रभु का साक्षात्कार होता। वे निःस्वार्थ सेवाभाव के प्रतीक थे, सेवामूर्त्ति थे और दिखावे या स्वार्थ के लिए की जाने वाली सेवा को सेवक और सेव्य–दोनों के लिए अहितकर बताते।

काका साहब कालेलकर के शब्दों में सहानुभूति मानों बापू का प्राण था। प्रेम और सेवाभाव के कारण ही उन्होंने रोगीसेवा की कला और उसका विज्ञान–दोनों हस्तगत किया। उन्होंने प्रयत्नपूर्वक यह सफलता प्राप्त की हो, ऐसा नहीं। उनके स्वाभाविक विश्वप्रेम का वह एक रूप था, उनकी स्वाभाविक सिद्धि थी, अनेक जन्मसंसिद्ध कमाई थी। निसर्गोपचार प्रणाली की रोगी-शुश्रूषा और बीमारों से उनकी मुलाकात आश्रम-जीवन का अत्यन्त महत्वपूर्ण अंग था, जिसके द्वारा स्वयं रोगी और सेवक–दोनों को सहज ही विश्वजनीन प्रेममूलक आश्रमधर्म की दीक्षा मिलती।

एक बार एक भाई से गंभीर नैतिक अपराध हो गया। बापू कड़े होकर उन्हें प्रायश्चित्त का मार्ग बता रहे थे। इसी बीच वे भाई बीमार पड़ गये। अस्वस्थता का समाचार मिलते ही बापू ने उनकी जिस प्रेम और अपनत्त्व से सेवा की, उससे सभी को–विशेषकर उन भाई

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

को अत्यन्त आश्चर्य हुआ। सज्जनों के प्रति प्रेम और दुर्जनों के प्रति उदासीनता या तटस्थता ऐसा भेद-भाव उनमें था ही नहीं। उनको भगवान् ने मातृहृदय दिया था। उनकी आत्मशक्ति में मातृहृदय के सभी लक्षण दृष्टिगोचर होते। प्रभुदास भाई के अनुसार बापू ऐसे चिकित्सक थे कि उनके उपचार जिस मात्रा में प्राकृतिक चिकित्सा के थे, उससे कहीं अधिक मनःपूत थे और देह की अपेक्षा देही पर अधिक असर डालते थे।

दक्षिण अफ्रीका में रहते और जुलू-युद्ध में घायलों की सेवा करते हुए बापू ने रोगी- सेवा तथा परिचर्या का पूर्ण ज्ञान तथा अनुभव प्राप्त कर लिया था। वही बाद में उनकी दैनिक चर्या का अविभाज्य अंग बन गया। वहाँ उन्होंने एक भिक्षुक अपंग कुष्ठ रोगी को अपने कमरे में रखकर सेवा की। सन् १९०४ में वहीं के जोहांसवर्ग में प्लेग का भीषण प्रकोप हुआ। उस समय भी उन्होंने उसमें अपना बहुमूल्य योग दिया। वहाँ के फिनिक्स-आश्रम के रोगी बाद में अच्छे परिचारक सिद्ध हुए और उन लोगों के हृदय में रोगीसेवा के प्रति प्रेम उत्पन्न हुआ। रावजी मणि भाई पटेल ऐसे लोगों में प्रमुख थे।

बापू के आश्रमों में कुष्ठ और चेचक सरीखे संक्रामक रोगग्रस्त जनों की और भी लगन से सेवा की जाती। जिन रोगों को समाज में भयंकर और अत्यन्त घृणित समझा जाता और जिनसे पीड़ित रोगी स्पर्श के योग्य नहीं माने जाते, ऐसे रोगी बापू के विशेष कृपाभाजन होते। वे कुष्ठ रोगी को औरों की तरह कभी हेय दृष्टि से नहीं देखते और न उसके लिए कभी बदनाम शब्द का प्रयोग होने देते, अपितु उसे समाज का अंग बताते। ऐसे लोगों की सेवा-शुश्रूषा, सार-सँभाल पर वे बहुत जोर देते, उनकी उपेक्षा देखकर उनके दिल पर काफी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चोट पहुँचती। इसी प्रकार रोगियों में धनी-निर्धन या अपने-पराये का भेद उनमें तनिक नहीं था। उनकी यह धारणा दृढ़ थी कि स्वच्छ शरीर और निर्मल अंतःकरण वाले को ऐसे जनों के संसर्ग से कोई बाधा नहीं पहुँच सकती।

अपनी इसी प्रवृत्ति से दक्षिण अफ्रीका से भारत लौटने पर सन् १८९६-'९७ में राजकोट में प्लेग-निवारण में बापू ने मदद की। कोचरब-आश्रम में दक्षिण अफ्रीका के वीर सत्याग्रही मारीशस-निवासी थम्बी नायडू के पुत्र फकीरी नायडू, जो विद्यार्थी-रूप में रहते, बड़ी चेचक से ग्रस्त हो गये तो मवाद से सने उनके वस्त्र बापू स्वयं अपने हाथों सुबह-शाम बदलते और उन्हें शुभ्र श्वेत चादर ओढ़ाते। मवाद से सने कपड़ों को उठाने, पानी में उबालने एवं उन्हें धोने-सुखाने में भी वे खुद भाग लेते। वहाँ देवदास भाई भी इसमें बापू का हाथ बँटाते। युवा बापू जब सन् १९०१ में मारीशस में कुछ समय तक रहे, थम्बी नायडू उनसे प्रभावित होकर दक्षिण अफ्रीका चले गये। वहाँ उन्होंने सत्याग्रह में सपत्नीक भाग लिया तथा जेलयात्रा की। बापू जब दक्षिण अफ्रीका छोड़ने लगे, तब थम्बी नायडू ने अपने चारों पुत्र बापू को सौंप दिये। बापू के हर्ष की सीमा न रही। उन्होंने कहा था कि मैं सोच रहा था कि इन रत्नों को खोकर भारत लौट रहा हूँ, किन्तु वे मुझे मिल गये। मारीशसीय समझते हैं कि मारीशस के एक व्यक्ति ने एक ऐतिहासिक अवसर पर बापू को अपूर्व दान दिया था।

साबरमती में सायंकालीन प्रार्थना के पश्चात् आश्रम के प्रायः सभी बीमारों का हाल, प्रार्थनासभा में आने वाले उनके घर वालों या पड़ोसियों से पूछने का बापू का नित्य का नियम था। किसी का समाचार न मिल पाता या कोई अधिक अस्वस्थ होता, तो वे खुद जाकर देखते। अपने परिचितों के घर में किसी की बीमारी की बात सुनकर वे उनके यहाँ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

देखने अक्सर पहुँच जाते। उनका देखना और पूछना मात्र औपचारिक नहीं होता, बल्कि रोगी की शारीरिक तथा मानसिक स्थिति का सहानुभूतिपूर्वक वे अध्ययन करते, जिससे उसका आधा रोग भाग जाता। वे कितने भी कार्यव्यस्त क्यों न रहते, रोगी के लिए जरूर समय निकाल लेते। स्वयं अस्वस्थ रहने पर भी वे नियमित रूप से बीमारों को देखने जाते। अगस्त सन् '३८ में महिलाश्रम (वर्धा) के एक भाई को, जो उन दिनों सख्त बीमार थे, देखने के लिए वे सेवाग्राम से चार-पाँच मील पैदल चलकर जाते। बरसाती मौसम था और ऊबड़-खाबड़ रास्ता होने के कारण उनके पैरों में काँटे चुभ जाते। समय कम होता और रोगियों की संख्या बढ़ जाती, तब वे एक से दूसरे स्थान पर तेजी से दौड़कर पहुँचते।

एक बार बापू अत्यन्त व्यस्त तथा प्रवास की स्थिति में होने पर भी, संभवतः सन् १९२६ में, घनश्यामदास जी बिड़ला के आग्रह पर दिल्ली से लगभग दस मील दूर उनकी मरणासन्न धर्मपत्नी को देखने गए। वे क्षय से पीड़ित थीं और बापू के दर्शनार्थ बहुत बेचैन थीं। अपनी इच्छा पूरी न होने की धारणा के कारण, बापू को देखते ही वे हक्कीबक्की रह गयीं, उनकी आँखों में आँसू छलछला उठे। बापू ने उनको सान्त्वना दी। अपनी अन्तिम इच्छा पूर्ण हो जाने से उन्हें संतोष मिला। कुछ दिनों बाद उन्होंने शांतिपूर्वक शरीर छोड़ा।

घनश्यामदासजी के ये शब्द उक्त प्रसंग से भी अधिक मार्मिक हैं —हम भूखे को अन्न देते हैं, प्यासे को पानी देते हैं, उसका माहात्म्य है। एक मरणासन्न प्राणी है। अंतिम घड़ियाँ गिन रहा है और चाहता है कि एक पूज्य व्यक्ति के दर्शन कर लूँ। इस दर्शन से भूखे रोगी की तृप्ति होती है, उसे संतोष दान मिलता है। इस दान का माहात्म्य कितना होगा ?

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सन् '४५ में सर पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास के निवासस्थान पर बापू उनको देखने गए। वे अस्वस्थ थे। उस समय उनकी एक नर्स ने बापू को लक्ष्य कर कहा था कि यदि बीमारपुरसी के लिए आने वाले सभी लोग ऐसे ही हों तो मैं निश्चित रूप से कह सकती हूँ कि रोगी को स्वास्थ्य-लाभ कराने में डाक्टरों की अपेक्षा वे अधिक उपयोगी सिद्ध होंगे।

द्वितीय गोलमेज-सम्मेलन के समय लंदन में अस्पताल में भरती एक नेत्रहीन व्यक्ति ने बापू से मिलने की इच्छा प्रकट की। एक अपंग व्यक्ति भी उनसे मिलने को उत्सुक था। पक्षाघात के कारण चलना-फिरना उसके लिए संभव नहीं था। बापू बोले— मैं दोनों के पास चलूँगा और, अत्यंत व्यस्तता के बावजूद समय निकालकर वे उन विकलांग भाइयों से मिले, उन्होंने उनको संतुष्ट किया।

सन् १९१५ में मद्रास की ओर घूमते समय बापू को अपने एक पुराने मित्र-साथी के कुष्ठ से पीड़ित होने की खबर लगी। उन्होंने न केवल उनका पता लगाया, बल्कि अन्य कार्यों को छोड़कर वे उनकी सेवा में लग गये। उनकी स्थिति दयनीय थी। घावों से पीब निकल रही थी। बापू अपने हाथों से घाव धोते और उनकी परिचर्या करते।

इसी प्रकार चम्पारण (बिहार) में बापू के सहयोगी अनेक मजदूर सत्याग्रही जनों में से एक कुष्ठ से पैर सूजने तथा गिलटी निकल आने के कारण, उसे छिपाये हुए थे। एक दिन बापू तथा अन्य सत्याग्रहियों के साथ वे शिविर लौट रहे थे। फोड़ा फूट गया और मवाद तथा रक्त बहने लगा। अन्य साथी बिना उनकी ओर ध्यान दिये जल्दी-जल्दी बापू के साथ आगे बढ़ गये। शिविर में पहुँचकर जब सायंकालीन प्रार्थना के समय सब लोग इकट्ठे हुए, तब बापू ने उन्हें वहाँ न देखकर उनके विषय में पूछा। कोई कुछ बता न सका। एक सज्जन ने इतना ही कहा कि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जल्दी-जल्दी चलने में असमर्थ होने के कारण वे बीच में बैठ गये थे। यह सुनते ही बापू तुरन्त उठ खड़े हुए और लालटेन लेकर उन्हें खोजने निकले। अन्य लोग भी बापू के साथ चल पड़े।

वे बेचारे एक वृक्ष के तले पड़े पीड़ा से कराह और 'राम-राम' की रट लगा रहे थे। लालटेन का प्रकाश पड़ते ही वे चौंक उठे। बोले– अरे बापू! बापू बोले– भाई, क्या हुआ तुम्हें ? तुमसे चला नहीं जाता था तो तुमने मुझे आवाज क्यों नहीं दी ? वे अवाक् थे। उन्होंने अपने पैर की ओर संकेत किया। पैर से रक्त बह रहा था। कुष्ठ रोग के भय से और लोग पीछे हट गये, किन्तु बापू ने तुरन्त अपना शाल फाड़कर घाव बाँधा और कन्धे का सहारा देकर वे धीरे-धीरे उनको शिविर तक ले आये। वहाँ पहुँचकर उन्होंने उनके पाँव और फोड़े को साफ किया, उस पर पट्टी बाँधी और उनको अपने पास बैठाकर तब उन्होंने सायंकालीन प्रार्थना की। उन बेचारे की आँखों से प्रेमाश्रुधारा बह रही थी। देशरत्न राजेन्द्र बाबू ने जब यह प्रसंग महामना मालवीयजी को सुनाया तो वे बोले– गंगा पाप शमन करती है, चन्द्रमा ताप दूर करता है, कल्पवृक्ष दैन्य का निवारण करता है, संत-महात्मा पाप, ताप और दैन्य–तीनों का नाश करते हैं।

सन् १९२२ में बापू की प्रथम जेलयात्रा के समय यरवदा में जेल-सुपरिण्टेन्डेण्ट ने उनकी सेवा के लिए अफ्रीका के एक सीदी (हब्शी) कैदी को नियुक्त किया। उन भाई के हाथ में बिच्छू ने काट लिया। वे रोते-चिल्लाते बापू के पास आये। उन्होंने तुरन्त उनके हाथ का वह भाग पानी से अच्छी तरह धोकर कपड़े से पोंछा, सुखाया और डंक की जगह वे खुद चूसने लगे। उन्होंने इतनी जोर से चूसा कि विष कम हो गया, वेदना घट गयी। बाद में उन्होंने अन्य उपचार भी किया, जिससे वे बिलकुल ठीक हो गये। सेवाग्राम में तो प्रायः बिच्छुओं का उपद्रव होता। रोगियों के विशेष अस्वस्थ होने पर बापू गहरी नींद से उठकर जाते।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

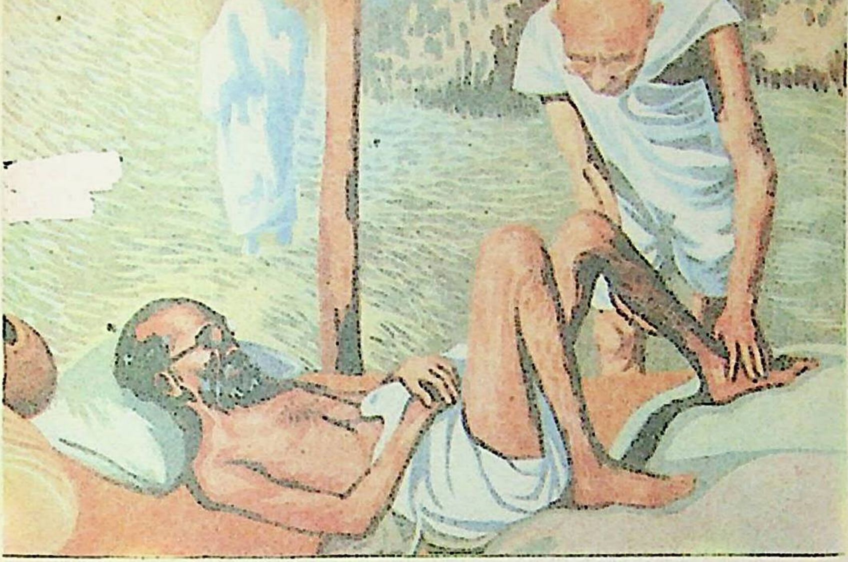

सेवाग्राम-आश्रम में परचुरे शास्त्री की सेवा करते हुए बापू

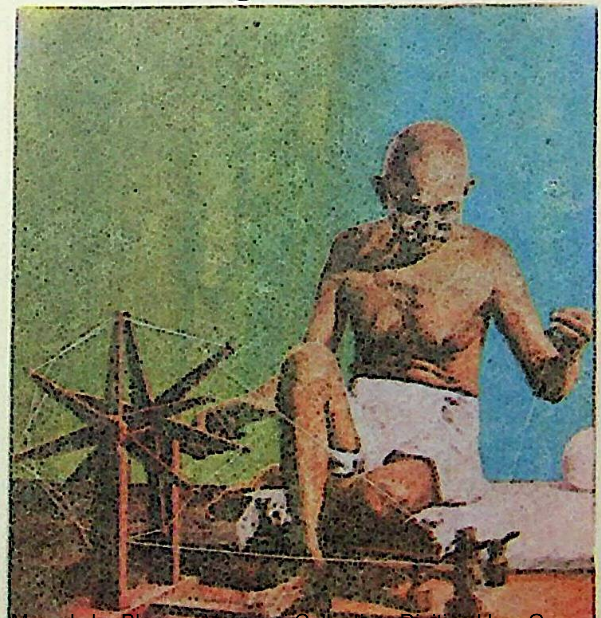

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

साँतली चरखे पर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सन् '३० में यरवदा-जेल में बापू की सेवा के लिये जेल-सुपरिण्टेन्डेण्ट ने एक महाराष्ट्रीय कैदी को नियुक्त किया था, जो दर्द से लँगड़ाकर चला करते। जेल के सुपरिण्टेन्डेण्ट से पूछकर उन्होंने उनकी भी चिकित्सा की। इस प्रकार जेल में भी रोगी-सेवा के अवसर भगवान् उनको दे देते।

सन् १९३६ से जब बापू वर्धा की मगनवाड़ी छोड़कर सेगाँव (सेवाग्राम) में रहने लगे, तब से आश्रम में उन्होंने सेवा की जो प्रवृत्तियाँ आरम्भ कीं, उनमें गाँव वालों की बीमारी का इलाज और उनके स्वास्थ्य का सुधार उनकी खास प्रवृत्ति थी। आश्रम में एक-से-एक त्यागी, बुद्धिमान्, विचारक और बापू की मनोभावनाओं के अनुसार काम करनेवाले लोग रहते। उन पर रोगियों की सेवा की जिम्मेदारी थी। वहाँ कनु भाई गाँधी, डॉ० सुशीला बहन नैयर, प्रभाकर जी प्रभृति इस कार्य में बापू के सहायक थे। आश्रम के अन्य कई भाई-बहनों तथा गाँव के कुछ होनहार नवयुवकों को भी रोगियों की सेवा करने की तालीम दी गयी और वे इस कार्य में सफल सिद्ध हुए। इसके अलावा, बापू के प्रतिनिधिस्वरूप स्वयं राष्ट्रमाता कस्तूरबा वहाँ उपस्थित रहतीं। फिर भी, बापू रोगियों की सेवा स्वयं किया करते। सेवाग्राम का वर्त्तमान कस्तूरबा-दवाखाना बापू द्वारा लगाये गये छोटे-से पौधे का ही प्रतिरूप है। उसने आज वट-वृक्ष का रूप धारण कर लिया है।

आश्रम में कमोड, बेडपॅन (शय्या-शौचपात्र), एनीमा, गरम पानी की रबर की थैली, घाव बाँधने की पट्टी सरीखे साधनों के अतिरिक्त सोडा-बॉय-कार्ब, आयोडीन, फल, दूध, नमक, फल, तरकारियाँ, सूखे मेवे, एरंड (रेंड़ी), मूँगफली, तिल, अलसी, सरसों का तेल और शहद आदि बराबर काफी मात्रा में रहते। सादे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रहन-सहन और गरीबी का जीवन व्यतीत करने के पक्षपाती होते हुए भी रोगी या बीमार व्यक्तियों के लिए बापू फलों की व्यवस्था करते और अपने हिस्से के फल प्रायः उनको दे देते। कभी-कभी वे मरीजों को केवल फलों के रस पर रखते।

सेवाग्राम में रहते हुए बापू प्रातः-सायंकालीन वायु-सेवन के लिए जाते और वहाँ जाते या वहाँ से लौटते समय नित्य रोगियों की सेवा और परिचर्या के निमित्त उनके पास जाते। उनकी चिकित्सा तथा परिचर्या के विषय में वे विस्तारपूर्वक जानकारी प्राप्त करते, उनको उपयोगी सुझाव देते और उनके लिए आवश्यक साधन जुटाते। इस कार्य में उनको लगभग पौन घंटा लगता। कभी-कभी डेढ़ घण्टा भी लग जाता।

सन् १९३८-'३९ के लगभग सेवाग्राम-आश्रम में यरवदा-जेल के बापू के साथी तथा संस्कृत के महान् विद्वान एवं कवि दत्तात्रेय वासुदेव शास्त्री परचुरे ऐसे कुष्ठरोगियों में थे, जो समाज से वहिष्कृत और तिरस्कृत अवस्था में अनेक वर्षों तक यत्र-तत्र भटक चुके थे। उन्हें गलित कुष्ठ था। अन्य रोगियों की देख-रेखकर बापू उनके पास अवश्य जाते और उनकी हालत चिंताजनक हो जाने पर वे खुद अपने हाथों से उनकी मालिश और मरहम-पट्टी करते, उनके घावों को प्रति दिन धोते और उनके लिए विशेष आहार की व्यवस्था करते। उनके भोजन की थाली दिन में तीन बार बापू के सामने लायी जाती। उनकी स्वीकृति मिलने पर ही शास्त्रीजी उसे ग्रहण करते। बापू ने उनके लिए आश्रम के निकट ही एक कुटी बनवा दी थी। उनकी परिचर्या तथा सुख-सुविधा का वे विशेष ध्यान रखते। बापू के उपचार और उनकी स्नेहपूर्ण देखभाल से वे पूर्ण स्वस्थ नहीं हो पाये थे। अन्त में उनको कुष्ठधाम भेजना पड़ा। उन्होंने कहा था कि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जितने प्रेम से मुझ अस्पृश्य महारोगी को बापू ने अपनाया और अपने हाथों से मेरी सेवा की, उतनी सेवा मेरी माँ भी नहीं करती। बापू के प्रेम से ही अभी तक मैं जिन्दा हूँ।

एक बार वर्धा में कांग्रेस-कार्य-समिति की बैठक के बीच बापू शास्त्रीजी की परिचर्या-सम्बन्धी हिदायत देने लगे। पंडित जवाहरलाल नेहरू उस समय संभवतः कांग्रेस के अध्यक्ष थे। वे बापू पर बिगड़ पड़े। झल्लाकर उन्होंने कहा कि क्या स्वराज्य और कार्यसमिति से बढ़कर जरूरी काम है ? बापू दृढ़ता के स्वर में बोले– है, मेरे लिए यह स्वराज्य से बढ़कर है !

एक प्रसंग सन् १९३९ का है। बापू वाइसराय से बातें करने शिमला गए। वार्त्ता पाँच-सात दिन के लिये स्थगित हुई तो बापू परचुरे शास्त्री की सेवा-परिचर्या के लिए सेवाग्राम चल पड़े। महादेव भाई ने पूछा– वहाँ कौन-सा इतना महत्त्वपूर्ण कार्य है ? बापू बोले– परचुरे शास्त्री की सेवा का काम तो महत्व का है न ? महादेव भाई निरुत्तर हो गये। नारायण भाई के शब्दों में बापू के मन में देश की आजादी के प्रश्न पर वाइसराय से बातचीत चलाने और एक कुष्ठरोगी की सेवा करने का महत्त्व समान था। उनकी जीवनसाधना में व्यक्तिगत चित्तशुद्धि और सामाजिक क्रांति–दोनों अविभाज्य और अभिन्न थे। इसीलिये वे एक रोगी की सेवा भी राष्ट्रसेवा जितनी भक्ति से करते। नतीजा यह होता कि वे किसी व्यक्तिगत काम को उठाते तो उस काम को सामाजिक महत्त्व प्राप्त हो जाता और यही उनके व्यक्तित्त्व के क्षितिजव्यापी होने का राज है।

एक अन्य प्रसंग। द्वितीय महायुद्ध शुरू था। वाइसराय के आग्रह पर बापू को उनसे वार्त्ता के लिए सेवाग्राम से दिल्ली जाना पड़ा, लेकिन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उनको शास्त्रीजी की चिंता बराबर बनी रही। उन्होंने व्यग्रतापूर्वक कहा था– सेवाग्राम में मैं एक रोगी को छोड़कर आया हूँ। मेरा मस्तिष्क भले ही यहाँ है, परन्तु मन वहीं है। राष्ट्र की ऐसी विषम परिस्थिति के समय और स्वयं अत्यधिक व्यस्त रहते हुए उनका शास्त्रीजी पर इतना ध्यान था। ऐसी होती उनकी रोगी-सेवा और परिचर्या !

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मालिश, हजामत और स्नान

सेवाग्राम में प्रातःकालीन वायुसेवन तथा रोगी-सेवा के बाद बापू चप्पल उतारकर अपनी कुटिया के चबूतरे पर बैठ जाते। जब तक राष्ट्र-माता कस्तूरबा जीवित रहीं, वे नित्य कपड़े से उनके चरणों की धूल पोंछा करतीं। इसके पश्चात् बापू अपने स्थान पर बैठकर भोर में किये गये कार्य के विषय में कुछ देखते, करते या सुझाते, अन्यथा मालिश, हजामत और स्नान आदि का उनका नित्यक्रम शुरू होता। इसमें एक-डेढ़ घण्टा लगता।

शरीर-परिमार्जन पर बापू विशेष ध्यान रखते। इतनी उम्र होने पर भी उनकी-जैसी शरीर-सम्पत्ति बिरले भाग्यवानों को नसीब होती है। वृद्धावस्था में और रक्तचाप जैसे रोग से आक्रांत तथा संसार की नानाविध चिंताओं के भार से दबे होने पर भी उनका स्वास्थ्य और शरीर इतना नीरोग और आकर्षक था, इसका कारण साधना ही कहा जा सकता है। स्नान, भोजन, शरीर-शुद्धि, नींद और विविध शारीरिक क्रियाकलापों के समन्वयात्मक प्रभाव का प्रत्यक्षीकरण उनके नीरोग, दर्शनीय, स्वस्थ शरीर में होता।

रक्तचाप को संतुलित रखने के लिये बापू नियमित मालिश कराते। उनको इसमें साधारणतः आध-पौन घण्टा लगता। साबरमती में सारे शरीर में मालिश कराने के बजाय वे केवल तलुवों और सिर में तेल लगवाते।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सामान्यतः पूर्वाह्न लगभग आठ बजे बापू की मालिश शुरू होती। यरवदा-जेल में सन् १९३२ में वे नौ बजे मालिश कराते। उनकी मालिश बिलकुल शास्त्रीय और वैज्ञानिक पद्धति से होती। इस कार्य के लिये आश्रम के कुछ भाई-बहनों ने प्रशिक्षण प्राप्त किया था। उन्हीं में से किसी को यह सौभाग्य प्राप्त होता रहता। प्रायः आश्रम में अपने को मालिश-मर्मज्ञ मानकर आनेवालों को एकाध बार में ही निराश होना पड़ता।

यरवदा-जेल में महादेव भाई देसाई को बापू की मालिश करने का अवसर मिला। सेवाग्राम में पुणे के डॉ० दिनशा मेहता और प्रवास में या बाहर मनुबहन गांधी को ऐसे अवसर मिलते रहते। भाई प्यारेलालजी, डॉ० सुशीला बहन नैयर, कनु भाई गांधी, मीरा बहन और ब्रजकृष्णजी चाँदीवाला ने भी यह सौभाग्य प्राप्त किया।

सेवाग्राम में बापू सुबह सुहावनी सूर्य-किरणों में परदे की ओट लेट जाते और सम्पूर्ण शरीर में तेल मालिश कराते। उनकी मालिश सर्दी के दिनों में शुद्ध सरसों के तेल में कागजी नींबू का रस मिलाकर की जाती। गरमी के दिनों में मालिश में नारियल के तेल का उपयोग होता। नींबू के छिलकों को वे व्यर्थ नहीं जाने देते। उनका उपयोग सिर तथा बदन मलने में करते।

मालिश के समय भी बापू के अन्य कार्यक्रम चलते रहते। उस समय काम निबटाने का उनको अच्छा अभ्यास था। शुरू के पन्द्रह मिनटों में वे तेजी से काम कर लेते। उस समय प्रायः पत्रादि लिखवाते,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कामकाज के बारे में सूचनाएँ देते तथा मुलाकातियों से बातें करते। अंतिम दिनों में अत्यधिक थकावट के कारण मालिश कराते समय वे सो जाते और कभी मौन हो जाते। चिंता का विषय होता या कोई खास काम आ जाता, तब वे उस समय सो नहीं पाते। दिल्ली में अंतिम दिनों में वे प्रायः बंगला पढ़ते, अखबार सुनते अथवा बातें करते। बंगला वे बैठकर पढ़ते और लिखते।

बैरिस्टर होने तक बापू अंग्रेजी ढंग से बाल कटाते। बाद में उन्होंने बड़ा बाल रखना छोड़ दिया। दक्षिण अफ्रीका (जेल) में एक बार उनकी दाढ़ी बढ़ गयी, परन्तु वे उसे बढ़ाने के पक्ष में नहीं थे। वहाँ वे स्वयं अपने साथी नायडू के साथ लगभग दो घण्टे तक कैदियों के बाल काटते। वहाँ के टालस्टाय फार्म में आश्रमवासी एक-दूसरे की दाढ़ी और बाल बना दिया करते। बापू का कहना था कि बाल न रखने से उसको सँवारने में समय नष्ट नहीं होता और तेल, कंघी आदि के खर्च की भी बचत होती, सिर स्वच्छ रहता– उसमें धूल, मैल और जुएँ नहीं पड़तीं। बाल बढ़ाने और पटिया फाड़ने को वे जंगलीपन और बेवकूफी की संज्ञा देते। सिर में फोड़ा-फुंसी होने पर उपचार में होने वाली कठिनाई की चर्चा भी करते।

प्रिटोरिया (दक्षिण अफ्रीका) में एक बार एक अंग्रेज नाई ने बापू की हजामत बनाने से इनकार के साथ उनका तिरस्कार भी कर दिया। वे जैसे-तैसे अपने बाल स्वयं काटकर अदालत में पहुँच गये। इस पर जब उनके सहयोगी गोरे बैरिस्टरों ने उनसे विनोद किया कि आपके सिर पर चूहा या छछूँदर तो नहीं फिर गया? बापू ने उनको सारा हाल सुनाया। वहाँ ऐसी घटनाएँ और भी घटी थीं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

. भारत लौटने पर बापू नाई से हजामत बनवाते। एक बार उनका भोजन बनाने वाले गोविन्द नामक हरिजन भाई की, सवर्ण नाई द्वारा हजामत न बनाने की घोषणा पर उन्होंने नाई से हजामत बनवाना छोड़ दिया। यद्यपि बापू की हजामत के लिए असंख्य नाई उत्सुक रहते, तथापि उनकी शर्त थी कि नाई खादी पहनने वाला हो और उसे हरिजनों की हजामत बनानी पड़ेगी, किन्तु उनमें हरिजनों की हजामत बनाकर जाति-च्युत होने का साहस नहीं था। बापू नाइयों को हरिजनों के बाल काटने की बराबर सलाह दिया करते। वे अपने को भी हरिजन बताते और हरिजनों की हजामत बनाने में हिचक का कारण उन लोगों से पूछते।

सेवाग्राम में बापू के बाल आश्रमवासी ही काटा करते। मुन्नालाल भाई और ठाकुर बलवंत सिंह को ऐसे अवसर वहाँ मिले। जब बापू गरम पानी के टब में बैठे होते, मनु बहन गांधी प्रायः सेफ्टीरेजर से उनकी दाढ़ी बना दिया करतीं। वैसे, बापू स्वयं दाढ़ी बना लेते। वे अपने नाखून स्वयं साफ करते। वे उन्हें बढ़ाने के पक्ष में नहीं थे। उनके हाथ-पैरों के नाखून सदा स्वच्छ रहते। मूँछें वे रखते और उन्हें भी छाँट लिया करते। शिखा भी अंत तक उन्होंने रखी, यद्यपि सिर में टाल पड़ जाने से शिखा के बाल बहुत कम दीख पड़ते। दिल्ली में अंतिम दिनों में मनु बहन उनकी हजामत बनातीं। उस समय वे पानी से भरे लम्बे टब में गहरी नींद में सो जाते और ठीक पाँच मिनट में उठ बैठते।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बापू स्वयं दाढ़ी बनाते समय शीशे, ब्रश, साबुन का उपयोग नहीं करते, फिर भी कोई त्रुटि नहीं रह पाती। दाढ़ी बना लेने पर उँगलियों की मदद से वे जाँच कर लेते और कभी कोई कमी रह जाती तो उसे ठीक कर लेते। हजामत के समय शीशे का उपयोग न करने का कारण लोगों द्वारा पूछे जाने पर उनका उत्तर था– त्रुटि बताने के लिये तुम तो मौजूद हो!

जोहांसवर्ग (दक्षिण अफ्रीका) में स्नान करने में उनको पन्द्रह मिनट और सेवाग्राम में लगभग आध घण्टा लगता। कभी-कभी वहाँ देर तक वे टब में रहते। उनके स्नान का जल कुनकुना होता, जो एक खास बड़े टब में भरा रहता। उसी में वे लेट जाते और कई-कई बार नींद भी ले लेते। गरमी में भी वे कुनकुने पानी का इस्तेमाल करते। रक्तचाप की उनकी चिकित्सा का यह एक अंग था। स्पंज वे ठंडे पानी से करते। असह्य गरमी में वे रात में भी स्नान करते।

बापू सेवाग्राम में अलग कमरे में स्नान करते। इस कार्य में उनको एक सहायक की आवश्यकता पड़ती। बापू ने साबुन का त्याग साबरमती में सन् १९२५-'२६ में कर दिया था। स्नान के बाद वे शरीर को तौलिये से रगड़कर साफ कर लिया करते। पाँवों की सफाई के लिये वे पत्थर के टुकड़े का उपयोग करते। मीरा बहन ने वह टुकड़ा उनको भेंट किया था। जेल में, महल में– सर्वत्र टुकड़ा उनके साथ रहता।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्नान के समय का उपयोग भी बापू प्रायः दूसरे कामों में कर लिया करते। विशेष प्रसंग आने– जरूरत पड़ने पर अपने कुछ खास लोगों को उस समय भी बातें करने का अवसर वे दे देते। आश्रम-जीवन की सामूहिक अथवा व्यक्तिगत गुत्थियाँ उस समय भी सुलझाते रहते। अंतिम दिनों में अत्यधिक थके रहते तो स्नान के समय पाँच मिनट की एक झपकी ले लेते। जोहांसवर्ग में स्नान के समय वे गीता कण्ठस्थ करते।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्वाध्याय और लेखन

स्नान के बाद हाथकते, बुने और धुले खादी के परिधान में बापू अपनी कुटिया में प्रवेश करते। दिन के भोजन से पूर्व का उनका यह समय यद्यपि किसी कार्य-विशेष के लिये नियत नहीं था, तथापि सामान्यतः उस समय वे नयी भाषाएँ सीखते और पत्रादि लिखते।

स्वाध्याय और लेखन का बापू का यह क्रम दूसरे क्षणों में भी चलता। उदाहरणार्थ—यरवदा-जेल में सन् '२२ में वे सुबह साढ़े छह बजे स्वाध्याय करते तो कभी भोजन के समय भी। सन् '२२ में वहाँ वे दिन भर में कुल मिलाकर छह घण्टे स्वाध्याय करते। बिहार-यात्रा में प्रातःकालीन प्रार्थना के बाद उनका स्वाध्याय का क्रम चलता तो सेवाग्राम में सन् '४५ में रोगी-सेवा के बाद और मालिश से पूर्व साढ़े आठ से साढ़े नौ बजे तक लेखन कार्य। सन् १९४४ में अस्वस्थता के कारण आगा खाँ जेल से रिहाई के बाद, राजाजी के विशेष अनुरोध पर उन्होंने एक मास तक विश्राम करना स्वीकार किया। सार्वजनिक जीवन से भी उन दिनों उन्होंने मुक्ति ले ली। उन दिनों अवकाश के क्षणों का उपयोग वे स्वाध्याय में करते और यह क्रम सुबह के बजाय दिन में ढाई से तीन बजे तक नियमित रूप से चलता।

बापू ने स्वाध्याय और लेखन जितना किया, उतना शायद कोई दूसरा व्यक्ति कर सकेगा। अत्यधिक कार्यव्यस्तता के बीच भी उन्होंने खूब पढ़ा और लिखा। वे वृद्ध हो चले थे, किन्तु उन्हें इसका भान ही नहीं था। सन् १९३२ में यरवदा-जेल में घनश्यामदासजी बिड़ला से

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उन्होंने यह बात कही थी और अपने को पाठशाला का विद्यार्थी बताया था। यही कारण है कि उन दिनों उर्दू का अध्ययन करते हुए वे तमिल, तेलुगु और बंगला जैसी भाषाएँ सीखने के लिये निरन्तर प्रयत्नशील थे। अंतिम दिन तक नयी भाषा, लिपि और बोली सीखने का उनका क्रम चलता रहा।

बापू ने दक्षिण अफ्रीका में सन् १९०४ में ही अपना साप्ताहिक हिन्दी, गुजराती, तमिल और अंग्रेजी–चार भाषाओं में एक साथ प्रकाशित करना शुरू किया और वहाँ के भारतीयों के बीच जनता का कार्य गुजराती तथा हिन्दी जैसी स्वभाषाओं में विशेष रूप से किया। इतना ही नहीं, बल्कि वहाँ के तमिल भाइयों की निकटता प्राप्त करके उन्होंने तमिल का अध्ययन भी किया। अफ्रीका से भारत लौटने पर जनता की भाषा के द्वारा उन्होंने जनता का कार्य शुरू किया। गुजराती भाषियों के लिए उन्होंने साप्ताहिक 'नवजीवन' गुजराती में आरम्भ किया तो हिन्दीभाषियों के लिए हिन्दी 'नवजीवन' निकाला। सारा वातावरण हिन्दीमय न होने तक अंग्रेजी की आवश्यकता का अनुभवकर उन्होंने 'यंग इंडिया' चलाया। हिन्दी का उन्होंने अभूतपूर्व प्रचार-प्रसार किया– खासकर दक्षिण भारत में। स्वयं लोकजागृति के उद्देश्य से उन्होंने हिन्दी सीखी।

बापू को अपने हस्ताक्षर चौदह भाषाओं में करने का अभ्यास था। उनकी अंग्रेजी इतनी सरल, संक्षिप्त और ठोस होती कि उनके कट्टर विरोधी अंग्रेज भी उनका 'यंग इंडिया' बहुत चाव से पढ़ते और प्रति सप्ताह उत्सुकतापूर्वक उसकी प्रतीक्षा किया करते। स्वयं वाइसराय लार्ड रीडिंग उसकी अतिरिक्त प्रति अलग से मँगवाते। वे ऐसा कार्यालय की प्रति मिलने में विलम्ब की आशंका से करते।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दीनबंधु सी० एफ० एन्ड्रयूज ने एक बार कहा था कि गांधीजी की अंग्रेजी उच्च शिक्षाप्राप्त अंग्रेज की अंग्रेजी की भाँति शुद्ध और परिमार्जित है और ऐसी अंग्रेजी भारत में बहुत कम लोग लिख सकते हैं।

कानून की पुस्तकें अच्छी तरह समझने के लिए बापू ने लैटिन भाषा सीखी। फ्रेंच और संस्कृत के वे ज्ञाता थे। मराठी भाषा की उनको सामान्य जानकारी थी। बापू ने एक बार दक्षिण अफ्रीका में गोपाल कृष्ण गोखलेजी का व्याख्यान मराठी में कराया और स्वयं दुभाषिया बनकर उसका अनुवाद किया। भारत आने पर जब उन्होंने सत्याग्रह-आश्रम स्थापित किया, तब काका साहब कालेलकर तथा अन्य कई महाराष्ट्रीय महानुभावों से उनका सम्पर्क हुआ। यरवदा जेल में काका साहब के सहयोग से मराठी सीखने का उनको अवसर मिला। अपनी मातृभाषा गुजराती का उन्होंने बहुत विकास किया।

हिन्दू-मुस्लिम-समस्या का हल ढूँढते हुए बापू ने यरवदा जेल में मंजर अली सोख्ता से उर्दू भाषा का ज्ञान प्राप्त किया। वे उन्हें अपना मूल्यवान् साथी और आदर्श उर्दू-शिक्षक बताते। रेहाना बहन को भी यह श्रेय प्राप्त था। यरवदा में उन्होंने जेल के पुस्तकालय से उर्दू की किताबें मँगवाकर पढ़ीं, किन्तु उर्दू वे बहुत अधिक नहीं सीख पाये। बापू को उर्दू-कापी लिखते देखकर सरदार पटेल ने एक बार उनसे विनोद किया था कि इसमें जी रह जायगा तो उर्दू-मुंशी का अवतार लेना पड़ेगा। उर्दू का अभ्यास वे सन् '४२ में आगा खाँ-महल में भी करते। वहाँ वे बाइबिल और कुरान शरीफ का नियमपूर्वक अभ्यास करते।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नोवाखाली-यात्रा के समय से बापू नियमित रूप से बंगला भाषा का अभ्यास करने लगे। अन्तिम दिन भी बंगला-साहित्य का उन्होंने अध्ययन किया। बिहार-यात्रा में भी उनका बंगलाभ्यास चलता। उन्होंने बंगला में पत्र लिखने तथा बातें समझने में अच्छी सफलता प्राप्त कर ली थी। बच्चों से वे बंगला में विनोद करते और सबको खूब हँसाते। बंगला के अभ्यास में कलकत्ता विश्वविद्यालय के प्रोफेसर निर्मल दा से उनको सहायता मिली।

बापू के नाम संसार के कोने-कोने से पत्र आते। व्यर्थ समझे जाने वाले पत्रों को यद्यपि उनके सचिव छाँट दिया करते, तथापि आवश्यक पत्र इतने अधिक होते कि उनका उत्तर लिखने-लिखाने में उन्हें काफी समय देना पड़ता। सेवाग्राम में उनका पत्रव्यवहार बहुत तगड़ा हुआ करता।

बापू प्रायः गुजराती, हिन्दी और अंग्रेजी में पत्र लिखते। कभी-कभी वे उर्दू में भी लिखते। बोलकर कुछ लिखाने के बजाय अपना लेखन कार्य खुद करना उन्हें विशेष प्रिय था। यहाँ तक कि लिफाफे पर पता खुद ही लिखते। व्यक्तिगत सम्बन्ध रखनेवाले पत्रों का जवाब बहुत शीघ्र, जहाँ तक हो पाता, वे लौटती डाक से भेजते। उनका पूरा मौनवार (सोमवार) ऐसे पत्रों के उत्तर तथा 'हरिजन' के लिए लेख लिखने के लिए ही नियत रहता। किसी के वियोग के प्रसंग में समवेदनासूचक या सान्त्वना प्रदान करनेवाले पत्र भी वे तुरंत लिखते। रोगी या बीमारी से सम्बन्ध रखने वाले पत्रों के सम्बन्ध में भी यही बात थी। कार्यकर्त्ताओं को पत्र यथासंभव वे स्वयं लिखते।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बापू के पत्रों में आत्मीयता भरी रहती। उनमें वे अपना दिल खोलकर रख देते। यदा-कदा एकाध वाक्य में वे इतना कह देते कि पाने वाला कृतार्थ हो जाता।

काशिनाथजी त्रिवेदी के ये शब्द यहाँ उल्लेख्य हैं कि बापू जब आश्रम में रहते, तब नये-पुराने साथियों को अपने सीधे सम्पर्क का लाभ देकर वे उनकी रुचि, वृत्ति, शक्ति, मनःस्थिति आदि की टोह ले लिया करते और जब आश्रम से दूर दौरे पर होते, तब पत्रव्यवहार द्वारा छोटे से बड़े तक और पुराने से नये·तक प्रत्येक साथी को अपनी निकटता का अनुभव कराते रहते। उनका यह गुण और उनकी यह शक्ति विलक्षण थी। जेल में होते, देश के दूर-से-दूर के कोने में भ्रमण कर रहे होते अथवा विदेश की यात्रा में होते, हर जगह से उनके पत्र उनके परिवार में दाखिल भाई-बहनों के पास अचूक भाव से पहुँचा करते। जिनको उनके पत्र मिलते, उनके लिए वे वरदान बन जाते। उनका एक छोटा-सा वाक्य साथियों में नवजीवन का संचार करता और अन्याय, अनीति से जूझने में लगे भाई-बहनों में हजार-हजार हाथियों का बल भर देता। पाठक इसे अतिशयोक्ति न समझें। हम लोगों ने जो उनके साथ रहे हैं, अपने जीवन में इसका प्रत्यक्ष अनुभव किया है। आज भी हममें से अनेक उनके उन पत्रों के प्रसाद के कारण अपने में नवजीवन की अनुभूति करते हैं। इस दृष्टि से बापू का पत्र-साहित्य इस युग की और आने वाली मानवता की अनमोल थाती बनकर रहेगा। पत्र-लेखक के रूप में वे बेजोड़ थे। वे अपने प्रेम का प्रसाद सबको बराबर बाँटते रहे। जिनके पास उनके पत्र आज भी सुरक्षित हैं, उनके लिए वे हीरे-मोती से अधिक मूल्यवान् और अखण्ड प्रेरणा के स्रोत हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उतावली में पत्र न लिखना बापू का खास गुण था, उनकी विशेषता थी। दोहराये बिना वे पत्रादि डाक में जाने नहीं देते। यदि कभी समय का अभाव रहता और वे दोहरा न पाते तो स्पष्ट लिख देते कि दुबारा नहीं पढ़ा या दुबारा आधा ही पढ़ा। डाक के समय का भी उन्हें बहुत खयाल रहता। खास आवश्यकता पड़ने पर स्वाध्याय एवं लेखन के समय भी वे किसी को मिलने की सुविधा दे देते।

लिखते-लिखते जब बापू का हाथ थक जाता, तब वे दूसरे हाथ से लिखना प्रारंभ कर देते। सन् '३२ में यरवदा-जेल में ऐसा वे अपनी बायीं कोहनी से ऊपर की हड्डी में और दाहिने हाथ के अँगूठे में दर्द के कारण करते। गुजराती वे दोनों हाथ से लिखते। 'हिन्द-स्वराज्य' नामक अपनी प्रथम पुस्तक उन्होंने विलायत से दक्षिण अफ्रीका जाते समय जहाज पर दोनों हाथों से लिखी थी। यह भी उल्लेख्य है कि उनके बायें हाथ की लिखावट विशेष सुवाच्य होती। यरवदा-जेल में सन् '३२ में सरदार पटेल ने बापू से विनोद किया कि आपका वश चले तो पैरों से भी कलम चलायें। बापू ने हाथ रुक जाने पर वैसा करना संभव बताया। यह भी कहा कि पैरों से गोली चलायी जा सकती है तो कोई कारण नहीं कि कलम नहीं चल सकती और चरखा नहीं चलाया जा सकता। हाँ, पैरों से पूनी जरूर नहीं खींची जा सकती, जो खेद का विषय है।

बापू पेंसिल से पत्रादि कम लिखते। यों, सादी पेंसिल का सेवाग्राम में उपयोग करते। छोटे-से-छोटे कागज पर लिखने में उन्हें संकोच नहीं होता। यरवदा जेल से लिखे गये उनके हजारों पत्र छोटे-छोटे पुरजों पर मिलते हैं। किफायत की दृष्टि से अधिकतर वे पोस्टकार्ड का उपयोग करते। बाहर से आये हुए एक तरफ सादे या

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बापू का आशीर्वाद

भाई गौरीशंकरजी
आपकी पुस्तक 'उर्मि'
बहुत अच्छी लगी। उसको
निडरतासे मैं आपका हृदयसे
धन्यवाद देता हूं।
आपकी सेवाका मैं
सन्मान करता हूं। ऐसी
ही सेवा करते रहें।

मो. क. गांधी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कुछ सादे पत्रों का उपयोग वे पत्र या लेख आदि लिखने में करते। उनकी लेखन-सामग्री में ऐसे कागजों का पुलिन्दा हमेशा रहता। इसी प्रकार, डाक में आने वाले छोटे-बड़े लिफाफों को उलटवाकर वे पुनः उनका उपयोग करते। जेल में सरदार पटेल के जिम्मे उन्होंने यह काम सौंपा। आश्रम में भी उनके साथ रहने वाली कुछ बहनें यह कार्य किया करतीं। चिट्ठियों में आने वाली पिन तथा पार्सलों और पैकेटों के धागे, डोरे और सुतली आदि को बिना काटे सावधानी से खोलकर मोटे कागज या दफ्ती आदि पर लपेटकर कलम रखने की अपनी छोटी पेटी में वे बहुत सँभालकर रखते और समय पर उनका उपयोग करते। एक बार उन्होंने कहा था कि उन्होंने पिन शायद ही कभी खरीदी होगी। किफायतसारी की यह आदत उनके जीवन के प्रायः सभी प्रसंगों में विद्यमान थी। फिजूलखर्ची या बरबादी देखकर उनको बहुत क्लेश होता।

लोग अक्सर अपने पत्रों में निजी या व्यक्तिगत बाते लिखते और बापू ध्यान चूक जाने से अपने नियमानुसार ऐसे पत्रों के पीछे दूसरों को पत्र लिख दिया करते। एक बार एक सज्जन ने 'बाम्बे क्रानिकल' के सम्पादक ब्रेलवीजी के विपक्ष में आक्षेप एवं निंदापूर्ण पत्र बापू को भेजा। बापू ने संयोगवश उसी के पीछे ब्रेलवीजी को पत्र लिख दिया। इसी कारण, बाद के दिनों में सरदार पटेल बापू से अपने महत्त्वपूर्ण पत्र वापस मँगवा लिया करते।

लिखते-लिखते बापू कभी-कभी इतने थक जाते कि शरीर काम करने से इनकार कर देता। सन् १९१९ में उन्होंने अमृतसर-काण्ड की रिपोर्ट लिखी। उन दिनों रात-दिन उनका लिखने का काम चलता। रात में मुश्किल से दो-ढाई घण्टे वे सोते। एक दिन दोपहर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

में देखा गया कि उनके बायें हाथ में कागज है, दाहिने हाथ में कलम है, तकिये पर टिके सोये हैं और मुँह खुला हुआ है। कुछ ही क्षण बाद वे एकदम चौंककर उठे और फिर लिखने लगे। चम्पारण (बिहार) में भी एक बार वे रात भर लिखते रह गये थे।

सन् १९२५ तक बापू के पास टाइपिस्ट नहीं था। बाद में लेखन-कार्य बहुत अधिक होने तथा हाथ में दर्द होने से उन्होंने टाइपिस्ट रखा। उन्हें इतना अधिक लिखना पड़ता कि उनके स्थान पर दूसरा व्यक्ति होता तो वह इस विज्ञानयुग के सौकर्य से पूरी तरह लाभान्वित होता और स्टेनोग्राफर तथा टाइपिस्ट कार्यरत रहा करते; किन्तु अपनी प्रकृति एवं विशेष सिद्धान्त के अनुसार वे नये आविष्कार और यन्त्र से उतने समय तथा उतनी ही सीमा तक काम लेते, जितने समय तथा जितनी सीमा तक वह अत्यन्त आवश्यक होता।

बापू के लेखन के साधन कई थे। सेवाग्राम में वे फाउण्टेनपेन का उपयोग करते। उन्हें रात-दिन लिखना पड़ता और उनके अन्य प्रयोग भी चलते रहते। फाउण्टेनपेन उन दिनों इंग्लैण्ड, अमेरिका से आता, इसलिये आश्रम में कोई उसका उपयोग न करे, ऐसा बापू का आग्रह था। चम्पारण, साबरमती तथा मगनवाड़ी (वर्धा) में उनके कलमदान में पाँच-छह बरु की कलमें तैयार रखी जातीं। प्रभुदास भाई गांधी को बापू के लिए कलमें तराशने का सौभाग्य काफी समय तक मिला। महादेव भाई देसाई उनसे यह कार्य कराते और कलमें ठीक बनी होतीं तो जाँचकर उनको बापू के कलमदान में रखते। स्वदेशी के व्रत का आदर्श स्पष्ट तथा स्थिर करने का यह महत्त्वपूर्ण गुर था। होल्डर का उपयोग भी वे करते। जब होल्डर की निब घिस जाती, तब उसके पिछले भाग की लकड़ी को छीलकर वे उसी की कलम बना लेते और उससे अपना लेखनकार्य करते।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पं० बनारसीदास चतुर्वेदीजी ने लेखक को बताया था कि एक बार वे डचगायना के किन्हीं सज्जन को बापू से मिलाने के लिए ले गए। उन्होंने बापू से प्रवासी भारतीयों के लिए संदेश माँगा। बापू ने कहा– लिख लो। चतुर्वेदीजी ने जो कागज लिखने के लिए अपने पास से निकाला, वह 'बैंक पेपर' था। बापू ने विनोद में कहा– इतना बढ़िया कागज तो 'विशाल भारत' वालों को ही मिल सकता है, जो चाय पीते हैं। हमको कहाँ मिले ? हम तो कोरा पानी पीनेवाले गरीब आदमी हैं! फिर, उन्होंने गंभीरतापूर्वक कहा– यहाँ आश्रम में हाथ से बना कागज मिलता है। आज यहाँ कार्ड भी बना है, उस पर लिखो।

चतुर्वेदीजी फाउण्टेनपेन से लिखने वाले थे कि बापू ने उनसे फिर पूछा– आप फाउण्टेनपेन से कब से लिख रहे हैं ? डचगायना वाले भी क्या कहेंगे कि इनके पास घर की कलम भी नहीं!

चतुर्वेदीजी बोले– बहुत दिनों से।

बापू बोले– पहले अफ्रीका में मैं भी फाउण्टेनपेन का प्रयोग करता था। अब कलम से लिखता हूँ। इतना कहकर बापू ने सरकण्डे की कलम मँगायी। चाकू से चतुर्वेदीजी ने उसे बनाया और घर की बनी काली स्याही से, हाथ के बने कागज पर बापू का संदेश लिखा।

दूसरा प्रसंग दिल्ली की हरिजन-बस्ती का है। प्रातःकाल था। बापू कुछ लिख रहे थे। उस समय कस्तूरबा और महादेव भाई के अतिरिक्त वहाँ कोई नहीं था। एक बहन बापू के हस्ताक्षर लेने पहुँचीं। उन्होंने जब हस्ताक्षर-पुस्तिका बापू के सामने रखी, तब वे बोले– इस विदेशी एलबम पर मैं हस्ताक्षर नहीं कर सकता। यह सुनकर बहन का दिल बैठ-सा गया। बापू ने उनकी मनःस्थिति पहचान ली। उन्होंने उनसे एकाएक हँसकर आत्मीयता के स्वर में कहा– तुम घबराओ नहीं। मैं तुम्हें खद्दर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

की जिल्द का एलबम दूँगा। उन्होंने खद्दर की जिल्द का छोटा-सा स्वच्छ और सुन्दर एलबम मँगवाया।

हस्ताक्षर के लिए जब उन बहन ने अपनी फाउण्टेनपेन उनकी ओर बढ़ायी तब आत्मीयतापूर्ण भर्त्सना के स्वर में बापू बोले– तुम्हारी यह पेन भी विदेशी है। मैं अपने हस्ताक्षर देशी कलम से करूँगा। यह कहकर उन्होंने मिट्टी की दावात और बाँस की कलम से हस्ताक्षर कर दिया।

सेवाग्राम में बापू अपनी कुटिया में गादी पर पालथी मारकर बैठते और फुलस्केप आकार की लकड़ी की एक पटिया अपने घुटने पर रखकर सादे, हलके अखबारी कागज के पैड पर बड़े अक्षरों में लिखते। पास में लकड़ी का छोटा- सा स्टैण्ड था, जिस पर पेन और पेंसिल रखी जाती। चाकू, कैंची और रबर के लिये लकड़ी की पेटी थी।

बापू की कुटिया के पीछे एक कमरे में प्यारेलालजी नैयर, कनु भाई गांधी और टाइपिस्ट परशुराम भाई मेहरोत्रा आदि प्रायः बैठते, जो पीछे के दरवाजे से कार्यवश वहाँ आया-जाया करते। टेलीफोन, फाइलों की आलमारियाँ और टाइपराइटर– ये सब इसी कमरे में थे। ●

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

डॉ० सुशीला नैयर और डॉ० गौरीशंकर गुप्त

Dr. Sushila Nayar, M. D; M. P. H., Dr. P. H.
PRESIDENT : KASTURBA HEALTH SOCIETY,
DIRECTOR : Mahatma Gandhi Institute of Medical Sciences.
Honorary Professor Community Medicine.

SEVAGRAM Dist. WARDHA–442103
PHONE : WARDHA 84341
N—1 Tara Apartments
Kalkaji,
New Delhi—110019
Phone : 6434635 (Res.)
3312750 (Office)

सेवाग्राम. Date 6. 3. 1995

श्री गौरीशंकर गुप्त की पुस्तक "बापू और उनकी दिनचर्या" बहुत अच्छी पुस्तक है। बापूजी ने स्वयं जब वह पुस्तक देखी तो उसके लिए लेखक को धन्यवाद दिया और लिखा कि "पुस्तक मुझे बहुत अच्छी लगी। आपकी सेवा का मैं सम्मान करता हूँ। ऐसी ही सेवा बनी रहे।" श्री गौरीशंकरजी ने यह सलाह मानकर निरन्तर सात्विक साहित्य सर्जन में अपना जीवन लगा दिया। जीवन के संध्याकाल में वे आर्थिक कठिनाइयों का सामना कर रहे हैं। उनकी उचित सहायता करने के लिए ईश्वर सरकार को एवं साथियों को प्रेरणा दे, यही मेरी प्रार्थना है।

सु. नैयर

(सुशीला नैयर)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्वावलम्बन एवं शारीरिक श्रम

बचपन से शारीरिक श्रम के प्रति बापू की अत्यधिक रुचि थी। रूसी मनीषी टॉलस्टॉय के सिद्धान्त पढ़कर उनकी धारणा दृढ़ हो गयी कि रोटी के लिए श्रम अनिवार्य है। जीवन की सार्थकता कर्म में है। प्रसिद्ध अंग्रेज विचारक जॉन रस्किन की 'अन्टु दिस लास्ट' पुस्तक ने उनको झकझोर दिया, जगा दिया। उसी दिन से शारीरिक श्रम उनके जीवन का व्रत बन गया। अपने आश्रमों के लिए जिस जीवन-पद्धति का उन्होंने विकास किया, उसमें शारीरिक श्रम और स्वावलम्बन– दोनों को महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त हुआ। मानवमात्र को अपना बंधु समझने का जो नवीन दृष्टिकोण रस्किन की कृति से उनके सामने आया, उससे उन्होंने सेवकों को परिवार का अविभाज्य अंग बनाकर रखने का निश्चय किया। जो इसके लिए अपने को तैयार न कर सके, उनको सादर छुट्टी दे दी। मनुष्यमात्र की समानता में आस्था रखनेवाले बापू के लिए अपने आश्रम में इससे भिन्न किसी अन्य मर्यादा को स्थान देना असंभव था।

जोहान्सवर्ग (दक्षिण अफ्रीका) में सन् १९०५ में बैरिस्टरी करते हुए भी बापू अपने परिवार में मि० पोलक, साथ रहनेवाले एक अन्य युवक सम्बन्धी तथा एक अंगरेज मित्र के साथ प्रातः छह बजे चक्की चलाते। उसे खड़े होकर चलाना पड़ता। सुबह उठकर वे यही पहला काम करते। पन्द्रह मिनट में सारे परिवार का आटा तैयार हो जाता।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वहाँ के टॉलस्टॉय-फार्म और फिनिक्स-आश्रम में खेती और बागवानी के साथ मकान बनाने, भोजन पकाने, प्रेस और मल-मूत्र की सफाई का काम हर आश्रमवासी के लिए अनिवार्य था। फिनिक्स-आश्रम में बापू सुबह के जलपान के बाद आश्रमवासियों के साथ फावड़ा लेकर ढाई घण्टे फलों के वृक्षों की क्यारियाँ गोड़ते और उनसे विभिन्न विषयों पर चर्चा करते। भारत लौटने पर कोचरब-आश्रम में सन् १९१६ में सुबह सात से साढ़े दस बजे तक वे प्रायः दो बहनों की सहायता से सारी रसोई बनाते। प्रातःकाल आश्रम के छोटे-बड़े सभी व्यक्तियों को सामूहिक रसोईघर के काम में पौन या एक घंटा नियमित सेवा देने की अनिवार्यता थी। इस सेवा के रूप में वे नित्य दिन के प्रथम प्रहर में निश्चित समय पर मुख्य रसोईघर में जाकर सब्जी काटते। उस समय अधिकतर बहनें उनकी सहायता में रहतीं। सुबह साढ़े चार से साढ़े पाँच बजे तक वहाँ नियमित रूप से पिसाई का उनका क्रम चलता। मल-मूत्र की सफाई, गड्ढे खोदना और उनमें मल गाड़ना, बर्त्तन माँजना, कुएँ से पानी निकालना और कपड़ा सीना जैसे कार्य सब लोग करते और इनमें उनका सहयोग रहता।

आश्रम में अपने कपड़े स्वयं धोने के नियम की भाँति अपने जूठे बर्त्तन तुरन्त साफ कर लेने की प्रथा थी। प्रत्येक व्यक्ति रसोईघर का एक बर्त्तन माँजता। कभी-कभी कुछ अतिथियों को, जिनमें महिलाएँ भी होतीं, ऐसा करने में हिचकते देखा जाता। बापू, बा और कभी महादेव भाई उनकी हिचक समाप्त कर दिया करते। इससे उन लोगों को लज्जित होना पड़ता। कभी-कभी इसके विपरीत दृश्य देखने में आता– लोगों में बर्त्तनों की सफाई के लिए छीना-झपटी की नौबत आ जाती।

साबरमती में तम्बू तानना, झोपड़ियाँ तैयार करना, कुएँ के लिए जमीन खोदना, शहर से आवश्यक वस्तुएँ लाना, रोगी-सेवा और कताई-बुनाई जैसे काम बढ़ गये थे। काका साहब के शब्दों में वहाँ का

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सारा जीवन उद्योग, शरीर-श्रम, परिश्रम और तरह-तरह की प्रवृत्तियों के कारण छत्ते की मधुमक्खियों-जैसा गूँजता रहता। रामेश्वरीबहन नेहरू का यह कथन न्यायसंगत है कि काम न छोटा होता है, न बड़ा। सबको हर काम करना चाहिए। स्वयं बापू ऐसा करके बौद्धिक और शारीरिक श्रम की प्रतिष्ठा सिद्ध कर दिखाते।

यरवदा में बापू अपना कमरा खुद साफ करते, अपने कपड़े खुद धोते। उनकी अत्यधिक व्यस्तता, अस्वस्थता अथवा लोगों के विशेष आग्रह से ही कभी-कभी सेवा के ऐसे अवसर दूसरों को मिल पाते।

एक प्रसंग दक्षिण अफ्रीका के सत्याग्रह-आंदोलन के दिनों का है। कई सत्याग्रही जेल में थे। उनके परिवार के रहने की व्यवस्था वहाँ के टॉलस्टॉय फार्म में की गयी। बापू को जब फुरसत मिलती, वे बहनों को न केवल सांत्वना देते, बल्कि उनके काम में हाथ बँटाते।

एक दिन बापू कपड़े धोने चले। वे सत्याग्रही-परिवार की बहनों के पास अलग-अलग गए। उनसे बोले– धोने के कपड़े दो बहन, मैं धोकर ला दूँगा। नदी जरा दूर है। आपके बच्चे छोटे हैं। टट्टी-पेशाब से सने सारे कपड़े दे दो। दूसरे भी दो। शरमाओ नहीं। तुम्हारे पति सत्य के लिए जेल में तपस्या कर रहें हैं। तुम्हारी फिकर हमें करनी चाहिये। लाओ, सचमुच दो। संकोचशील माँ-बहनें बापू के ये शब्द सुनकर कपड़े दे देतीं। उन कपड़ों की काफी मोटी गठरी बाँध और पीठ पर लादकर बापू नदी तक ले जाते। वहाँ सारे कपड़े ढंग से धोकर, धूप में सुखाकर और तह लगाकर लौटा देते। ऐसे थे राष्ट्रपिता गांधीजी, सबके बापू ,जिनकी आशातीत सेवा की सीमा नहीं थी।

मोची, भंगी और दरजी के काम में बापू को बहुत आनन्द आता और उनमें उनकी अच्छी गति थी। मोची का काम दक्षिण अफ्रीका (जेल) में

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उन्होंने कलनबक से सीखा था। वहाँ टॉलस्टॉय फार्म में यह काम खूब चलता। उन्होंने बच्चों के कितने ही जूते वहाँ तैयार किये। अपनी चप्पलों की मरम्मत वे स्वयं कर लेते। वहाँ उन्होंने अपने बनाये जूतों की एक जोड़ी भारत लौटते समय प्रधान मन्त्री जनरल जे० सी० स्मट्स को समझौते के स्मृतिस्वरूप भेंट की थी।

बापू यरवदा में पेसराजी (मकान बनाने का काम) सीखने को उत्सुक थे, किन्तु स्वतंत्र ब्लॉक में होने से ऐसा संभव न हो सका। पेसराजी को वे महत्त्वपूर्ण और सीखने योग्य काम बताते। वहाँ दिन भर काम करने के बाद एकाध घण्टे का अवकाश मिलता तो उसे व्यर्थ न जाने देने के अभिप्राय से वे जेलर से कपड़ा मँगवाकर गिलाफ बनाते। दूसरे जुलू कैदियों को कैंची नहीं दी जा सकती, इसलिए कुरतों की जेबें काटकर देने का काम बापू के जिम्मे था। बाद में उनको फटे हुए कम्बलों को एक-दूसरे पर सीकर उनकी रजाई बनाने का काम मिला। ऐसे सैकड़ों कम्बल उन्होंने वहाँ सिए। वहाँ वे नित्य चक्की चलाते। इस प्रकार हम देखते हैं कि अपने युग के अन्य किसी व्यक्ति की अपेक्षा वे अधिक परिश्रमी और स्वावलम्बी थे। ●

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दिन का भोजन

बापू दिन का भोजन सामान्यतः ग्यारह बजे किया करते। सन् १९१३ में फिनिक्स-आश्रम में दिन में ग्यारह बजे वे भोजन की मेज पर बैठ जाते। टॉलस्टॉय फार्म में भी दिन के भोजन का यही समय था। सन् १९२५ में साबरमती में भी वे ग्यारह बजे और सन् '२७ में साढ़े दस बजे के लगभग भोजन करते। आगा खाँ महल में साढ़े दस बजे, नोवाखाली में ग्यारह बजे और सेवाग्राम में साढ़े दस-ग्यारह बजे वे भोजन करते। अन्तिम दिन का आहार उन्होंने दिन में ग्यारह बजे किया। इसके पश्चात् उस दिन बापू ने आभा बहन गांधी से बंगला पाठ पढ़ा और स्वयं बंगला लेखन भी किया। उन दिनों उनके दिन के आहार का यही समय था।

बापू सभी कार्यों की भाँति भोजन में भी समय की पाबन्दी रखते। आश्रम में भोजन के लिए घण्टी बजती। यदि कोई व्यक्ति देर से पहुँचता और भोजनालय का दरवाजा बन्द हो जाता, तो उस समय वे छोटा-सा वक्तव्य दे डालते। वे भोजन को रेलगाड़ी समझने के लिए कहते। उनका कहना था कि छह बजे की गाड़ी पकड़ने के लिए कम-से-कम पंद्रह मिनट पहले स्टेशन पर उपस्थित होना आवश्यक है। छह बजकर पाँच मिनट पर स्टेशन पहुँचने वाले को गाड़ी नहीं मिल सकती। उसे अगली गाड़ी की प्रतीक्षा करनी पड़ेगी। यह उपदेश दूसरों के लिए होता, ऐसा नहीं। वे अपने लिये इसी नियम को लागू करते देखे गए।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बापू को एक बार संभवतः साबरमती-आश्रम में कुछ कारणवश भोजनागार में पहुँचने में देर हो गयी। उन दिनों वे तथा वहाँ के सभी लोग आश्रम के भोजनालय में भोजन करते। भोजन के समय दो घंटियाँ बजतीं। दूसरी घंटी तक जो न पहुँच पाता, उसे दूसरी पंक्ति के लिए बरामदे में इन्तजार करना पड़ता। किंवाड़ बन्द कर दिए जाते, जिससे बाद में कोई आ न सके। हाँ, तो चेतावनी की अन्तिम घंटी बज चुकी थी। द्वार बन्द था। बापू बाहर खड़े थे। बैठने के लिए कोई बेंच या कुर्सी वहाँ नहीं थी। इस पर हरिभाऊजी उपाध्याय ने, जो स्वयं पिछड़ गये थे, बापू से कहा– कुर्सी लाऊँ ? बापू ने इनकार करते हुए उसी में सच्चा आनन्द अनुभव किया और सजा भुगतने के लिए कहा।

सन् १९२८ का एक दूसरा प्रसंग है। बापू एक बार दोपहर के भोजन के समय रसोईघर में ठीक समय पर न पहुँच सके तो घंटी बजानेवाले भाई उनकी प्रतीक्षा करने लगें। जब उन्होंने उनको दूर से आते देखा तो सोचा कि उनके निकट आ जाने पर बजाऊँ। यह बात ज्ञात होने पर बापू ने उनसे भविष्य में ऐसा न करने को कहा। उनकी दृष्टि में ऐसा कर उन भाई ने दूसरे व्यक्तियों का समय नष्ट किया। बापू चाहते थे कि वे पिछड़ जायँ तो उनका पिछड़नेवालों के साथ बाहर बैठना ही उचित है। उनके कारण घण्टी में तनिक विलम्ब नहीं होना चाहिए। सत्याग्रह-आश्रम में घंटी का आधिपत्य बापू के बाद प्रथम श्रेणी का था, ऐसा नारायण भाई का कहना बिलकुल सही है। वहाँ सुबह उठने से लेकर रात्रि के शयन तक– प्रायः हर कार्य के लिए घण्टी बजती। दिनभर में गिनने पर छप्पन घंटियों की आवाज एक दिन सुनी गयी। हर भोजन के समय वहाँ तीन घंटियाँ बजतीं। पहली घण्टी भोजन का समय होने पर बजती,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दूसरी बजने पर भोजनालय के द्वार बन्द हो जाते और तीसरी बजने पर भोजनमंत्र शुरू हो जाता।

आश्रम में सभी के साथ बापू भोजन करने बैठते। वे मन्द गति से खाते। सब लोग भोजनकर चले जाते, किन्तु वे अकेले बैठे खाते रहते। अन्यत्र भी उनकी इस गति में कोई अन्तर नहीं आता। उनको आहार ग्रहण करने में साधारणतः एक घण्टा लगता। न खाने से वे उतनी हानि नहीं मानते, जितनी बिना ठीक से चबाए आहार से। वृद्धावस्था में भोजन भली भाँति चबा सकने के लिए वे नकली दाँतों का उपयोग करते। आहार मुँह में रखकर वे उसको कुचलते और तरल बनाकर निगलते। वे आहार खाते नहीं, बल्कि पीते, यहाँ तक कि दही को भी खूब घुलाकर निगलते। उनके कथनानुसार ऐसा कर थोड़े आहार से भी पर्याप्त सत्त्व ग्रहण किया जा सकता है।

आश्रम में देशी-विदेशी पर्यटक, अतिथि, नेता, जिज्ञासु—सभी से अपने साथ, अपने निकट बैठने का बापू आग्रह करते। वे उनकी थाली स्वयं परोसते। किसी पर अत्यन्त कृपालु हो जाते तो अपने खाने की वस्तुओं में से उसे कुछ दिया करते। उस व्यक्ति की विशेष प्रिय वस्तु उसे खिलाने का भी उनका प्रयत्न रहता। भोजन-सम्बन्धी अपने विविध प्रयोगों की जानकारी बापू अतिथियों को देते जाते। कहते—इस खाखरे में एक चम्मच सोडा डाला गया है और यह चटनी किस चीज की है, जानते हो? खाओगे, तब पता चलेगा। कड़ुवे नीम का कड़ुवापन तो उसका गुण ही है न? लहसुन रक्तचाप के लिए लाभदायक है।

सेवाग्राम में दो कतारों में बैठे आश्रमवासियों को पहले बापू परोसा करते। उन दिनों लोग भोजन बनाकर उनके सामने रख देते

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

और अपने-अपने बर्त्तन उनके पास ले जाते। बाद में कुछ असुविधा तथा अस्वस्थ हो जाने से वे मीरा बहन की कुटी में रहने लगे। तभी से उनका भोजन वहीं जाने लगा। कार्यव्यस्तता तथा मुलाकातियों की संख्या में वृद्धि होने पर भी वे प्रायः अपनी कुटिया में भोजन करते। जब उनका स्वास्थ्य ठीक रहता और उनको कोई असुविधा न होती, तब वे सबके साथ पंगत में सम्मिलित होते। रोगियों और बच्चों को स्वयं परोसते। उन्होंने दक्षिण अफ्रीका में भी अपने जिम्मे यह काम लिया था। वहाँ और लन्दन में उनको भोजन बनाने के कई अवसर मिले।

भोजन-पात्र के विषय में बापू के प्रयोग चलते रहते। आश्रम में कभी वे लोह, कभी काठ और अधिकतर मिट्टी के पात्र में भोजन करते। मगनवाड़ी-आश्रम में बरगद की पत्तलों का भी उपयोग होता। साबरमती में उनका कटोरा गोल, बिना पेंदी तथा कलई का था और चम्मच किसी धातु का। सेवाग्राम में चम्मच काठ और कटोरा मिट्टी का था। ये दोनों तथा लोहे के बर्त्तनों में—यरवदा-जेल से रिहा होते समय भेंट में मिला तसला और पानी का टमलर अन्त तक उनके साथ रहे। उनका कहना था कि देहातवालों के पास इतने पैसे नहीं कि वे धातु के बर्त्तन खरीद सकें। मिट्टी के बर्त्तनों को वे स्वास्थ्यप्रद बताते और कहते कि उनमें कुछ सुधार जरूर होना चाहिए।

जूठे पात्रों की शीघ्र और पूर्ण स्वच्छता कैसे हो, इस विषय के प्रयोग सेवाग्राम में चलते रहते। बापू ने सुझाव दिया कि मिट्टी के जूठे बर्त्तनों को आग में दुबारा तपाकर शुद्ध किया जा सकता है। अंत में बर्त्तनों, खासकर धातु के बर्त्तनों को, खूब खौलते हुए पानी में धोने का उनका आदेश था।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बापू, ब्रह्मचर्य के पूर्ण पालन के लिए स्वादेन्द्रिय को वश में करना अत्यंत आवश्यक मानते। उनका कहना था कि ब्रह्मचर्य मन की स्थिति होने तथा सभी प्रकार का संयम उसमें सहायक होने पर भी अपेक्षित मनःस्थिति की प्राप्ति में आहार विशेष सहायक नहींहोता, किन्तु उत्तेजक या विपरीत आहार से प्रगति में बाधा पहुँचती है। जिह्वा की लोलुपता से दुर्बल मनःस्थिति की झलक मिलती है, जो ब्रह्मचर्य की दृष्टि से प्रतिकूल है। बापू सन् १९०६ में चूँकि ब्रह्मचर्य-व्रत लेने के बाद से जीवन के अंत तक तपस्वीवत् रहे, इसी कारण उन्होंने मिर्च-मसालों का परित्याग कर दिया था। उनके आहार-सम्बन्धी अधिकतर प्रयोग न केवल अन्नाहार की दृष्टि से, बल्कि ब्रह्मचर्य की दृष्टि से भी हुए। आश्रम में ब्रह्मचर्यपूर्वक रहने का नियम होने के कारण हर आश्रमवासी के लिए मिर्च-मसालों तथा उत्तेजक पदार्थों के सेवन का वे विरोध करते। आश्रमवासियों के लिए नमक की छूट थी। वे लोग ऊपर से मिला सकते थे; किन्तु साग-सब्जी बनती थी अलोनी।

आश्रम में नए लोगों को आरंभ में यह सब विचित्र-सा लगना स्वाभाविक था। काशिनाथजी त्रिवेदी के शब्दों में धीरे-धीरे नित्य के अभ्यास से जीभ का मूल स्वाद लौट आता। मिर्च-मसाले की चाट से विकृत बनी जीभ क्रमशः अपना प्रकृत् स्वास्थ्य प्राप्त कर लेती और फिर तो आरंभ में बेस्वाद लगनेवाली उबली साग-सब्जी भी लोगों को बहुत स्वादिष्ट लगती। इससे आहार में सहज ही संयम सधता, स्वाद के वश होकर आवश्यकता से अधिक खाने की आदत छूटती, शरीर में आलस्य का संचार कम होता और भोजन के बाद

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्फूर्त्ति के साथ काम में लगे रहने की आदत बनती। स्वास्थ्य सुधरता ही, शरीर सशक्त भी बनता। अति आहार से उत्पन्न होनेवाले रोगों से अनायास रक्षा होती और अन्न को ब्रह्म समझने तथा जीने के लिए खाने की स्वस्थ वृत्ति का जीवन में उदय होता। इस तरह अपने अस्वादव्रत के निमित्त से बापू मनुष्य के और समाज के जीवन में आत्मसंयम और आत्मानुशासन को सुदृढ़ करते।

व्रत के विषय में बापू के विचार बहुत स्पष्ट और दृढ़ थे। व्रत का अनादर अथवा भंग उनसे सहन नहीं होता। आश्रम के बच्चों अथवा बड़ों में कोई भी जब किसी व्रत का जाने-अनजाने भंग करता तो वे तुरंत प्रेम-भाव से या तो उसका प्रायश्चित्त कराते या व्रत भंग करनेवाले साथी की आत्मा को जगाने के लिए स्वयं प्रायश्चित्त करते। इस प्रकार वे सारे वातावरण को शुद्ध-बुद्ध बनाए रखते।

खुराक से प्राप्त होनेवाले वनस्पतिजन्य नमक को बापू पर्याप्त बताते। समुद्री या खान के नमक के सम्बन्ध में उनका कहना था कि वह उसी रूप में पसीने या दूसरे रास्ते से शरीर से निकल जाता है। उसका कोई विशेष उपयोग शरीर में नहीं होता। वे खाँसी, दमा, बवासीर और रक्त-प्रवाह जैसे रोगों में नमक के त्याग से उन पर नियंत्रण करना आसान बताते। नमक त्यागने से जल कम पीने तथा आलस्य में कमी होने की बात भी कहते।

नमक को बापू पाचन-शक्ति बढ़ानेवाली वस्तु नहीं मानते। हाँ, बालकों की हड्डी के विकास के लिए नमक उनकी दृष्टि में आवश्यक था। तीस वर्ष की उम्र तक उसका सेवन लाभप्रद और उसके बाद हानिप्रद अन्यथा अनावश्यक है, ऐसा उनका विचार था।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सन् १९०८ में बापू के नमक छोड़ने का प्रसंग फिनिक्स (दक्षिण अफ्रीका) का है। उन दिनों इस विषय पर उनका अन्वेषण आरंभ हो गया था । राष्ट्रमाता कस्तूरबा अस्वस्थ थीं। उन्हें नश्तर लगा था। बाद में उनका रक्तस्राव पुनः शुरू हो गया और वह असाध्य-सा प्रतीत होने लगा। कई प्रयोग विफल हो चुके थे। इस पर बापू ने उनको नमक तथा दाल का त्याग करने का परामर्श दिया। काफी समझाने पर भी बा इसके लिए राजी न हुईं। उन्होंने स्वयं बापू के लिए ऐसा करना असंभव बताया। बापू ने उनकी धारणा को गलत सिद्ध करते हुए उसी दिन से एक वर्ष के लिए नमक छोड़ने का संकल्प किया। बाद में बा ने वे दोनों वस्तुएँ छोड़ने की प्रतिज्ञा करते हुए बापू से अपनी प्रतिज्ञा वापस लेने का आग्रह किया, किन्तु वे तनिक विचलित न हुए। सूर्य का पश्चिम में उदय होना भले ही संभव हो, किन्तु वे अपनी प्रतिज्ञा तोड़नेवाले नहीं थे। उन्होंने कहा कि किसी भी निमित्त से पाला गया संयम लाभप्रद ही होता है।

नमक छोड़ने से बा के स्वास्थ्य में अत्यधिक सुधार हुआ। छोड़ देने के बाद नमक या दाल ग्रहण करने की बापू की इच्छा तक न रही। कभी-कभी वे नमक ले लेते। उन्होंने सदा के लिए नमक छोड़ने की प्रतिज्ञा भी नहीं की थी। उन्होंने सन् '३३ में एक बार कहा था कि नमक ग्रहण करने की लालसा मन में रहती हो, ऐसा नहीं, बल्कि खाने पर अच्छा लगता है ; लेकिन जिस क्षण उन्हें ज्ञात हो जाता कि अमुक वस्तु उनके लिए हानिकारक है, उसी क्षण वे उसे त्याग देते।

बापू, जीभ और आँख की उपमा श्वान से देते। मन को मदिरा-पान किए बंदर की दी जानेवाली उपमा को वे ठीक बताते।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इसी कारण वे कभी अपने मन के गुलाम नहीं बने। उनकी दृष्टि में मन की गुलामी से बढ़कर दूसरा अधम पाप नहीं । महादेव भाई देसाई का यह कथन महत्त्व का है कि बापू के सारे चरित्र की कुंजी इसमें है। श्रेय और प्रेय का अभेद उन्होंने मुद्दत से साध रखा था और श्रेय ही प्रेय है, इस सूत्र को उन्होंने अपने जीवन में उतारा था।

मिर्च-मसालों के सम्बन्ध में बापू की धारणा थी कि वे स्वादिष्ट नहीं होते, बल्कि वास्तविकता यह है कि चिरकाल से हम उनको खाते रहने के अभ्यस्त हो गये हैं और इसीलिए हमें उनकी गन्ध और उनका स्वाद प्रिय लगता है। उनके सेवन से हानि के सिवा लाभ नहीं। भारतवासियों की इस प्रवृत्ति की वे कड़ी आलोचना करते। कृत्रिम स्वाद और मिर्च-मसालों के सहारे अधिक आहार करने की आदत छोड़ने पर वे बराबर जोर देते। उदर की अग्नि को उत्तेजित करनेवाले मिर्च, धनिया, जीरा सरीखे मसालों के सेवन से आहार का पाचन तथा उत्तम रक्त-निर्माण की कल्पना को वे कोरी कल्पना बताते। कहते कि इसके विपरीत ऐसे व्यक्ति उदर-रोग, विशेषकर संग्रहणी के शिकार हो जाते हैं। कोचरब-आश्रम में लाल, हरी या सूखी मिर्च के स्थान पर मूली की फली (मोगरी) का उपयोग होता। बापू का कहना था कि वह स्वाद में तीखी होती है। पकाने के बाद उसकी तीक्ष्णता समाप्त हो जाती है, जब कि मिर्च में यह बात नहीं। इस कारण वे उसे पेट के लिए उत्तेजक नहीं मानते।

गुजरात में सामान्यतः और विशेषकर अहमदाबाद में मोगरी एक विशिष्ट सब्जी मानी जाती है, जो कच्ची खायी जाती या उसका रायता बनता है। तेल में छौंककर भी उसे बनाते हैं। कोचरब में

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मिर्च-मसाले की जगह कागजी नींबू दिया जाता। कच्ची मूली—कच्ची मोगरी का उपयोग वस्तुतः महँगे फलों के स्थान पर किया जाता। वैसे, पकायी हुई मोगरी गुजरात (सौराष्ट्र) में जनसाधारण के भोजन का सामान्य अंश होता है।

माँड़ निकाले हुए निःसत्त्व और एक-एक दाना अलग दीखने वाले चावल के सेवन का भी बापू विरोध करते। मिल का पालिश किया हुआ चावल इस्तेमाल करने और उसे पकाने से पूर्व कई बार धोने के वे विरुद्ध थे। आश्रम में हाथ-कुटे चावल का खूब पका, बिना माँड़ निकाला और हलुए-जैसा भात बनता। चावल पकाने से पूर्व कम धोया और पानी में कुछ समय रख छोड़ा जाता। पकाते समय यह ध्यान रखा जाता कि उसका सारा पानी और माँड़ उसी में समा जाय। पकने पर उसे खोवे की तरह घोंट दिया जाता, जो बिना चीनी के भी मधुर लगता, कम खाया जाता, विशेष पौष्टिक होता और जिसके सेवन से तोंद नहीं निकलने पाती।

बापू, मशीन में पिसे हुए आटे और आटे से चोकर अलग करके उपयोग करने के भी पक्ष में नहीं थे। ऐसे आटे को वे सत्त्वहीन (विटामिन- रहित) बताते। इसी कारण आश्रमवासी और बापू शुरू से आटाचक्की चलाते। इससे व्यायाम होता ही, सभी को हाथ-पिसे आटे की स्वास्थ्यवर्द्धक रोटियाँ सुलभ होतीं। आश्रम में आटा चोकर-सहित होता। इससे रोटियों में स्वाद और पोषक तत्त्व—दोनों रहते।

सन् १९१५ में हरिद्वार में कुम्भ के अवसर पर बापू ने चौबीस घण्टे में पाँच वस्तुओं से अधिक न खाने का व्रत किया। भारत से

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बाहर पाँच से अधिक वस्तुएँ लेने की उन्होंने छूट रखी। जब उनसे इसका कारण पूछा गया तब उन्होंने बताया कि लोग उनको विशेष स्नेह करते और उनका बहुत खयाल रखते। तब उनकी प्रसिद्धि इतनी अधिक थी कि वे किसी के मेहमान बनते तो वह उनको नानाविध स्वादिष्ट वस्तुएँ परोसता। बापू अपने को उनके बीच सेवक के रूप में मानते हुए ऐसा करना बहुत अहितकर बताते। इसी कारण उनको दिन भर में पाँच वस्तुएँ लेने की सीमा बाँधनी पड़ी। बापू मानते कि ऐसा करने से उनके एक साथ दो काम सध जाते।

नैतिक एवं लौकिक—दोनों दृष्टियों से बापू का व्रत उनके लिए सहायक सिद्ध हुआ। लौकिक दृष्टि यह कि भारत-जैसे गरीब देश में बकरी का दूध हर समय सुलभ नहीं हो पाता तथा अंगूर जैसे फल पैदा करना आसान नहीं। फिर, वे अपने को गरीबों से मिलनेवाला आदमी कहते, जिनसे बाहर से मँगाए हुए डिब्बों में सुरक्षित रखे अंगूरों की आशा करना सर्वथा अनुचित होता। व्रत से उनके मितव्ययिता के नियम का पालन हो जाता।

बापू के सुबह के भोजन की वस्तुओं का खयाल रखकर उनके शाम के भोजन की तैयारी होती। वे अक्सर सुबह तीन वस्तुएँ और शाम को दो नई वस्तुएँ लेते। भारत में अपने इसी नियम का वे पालन करते। आगा खाँ महल में यदि कभी वे दवा लेने के लिए वाध्य होते तो उसकी गणना भी पाँच चीजों में करते। सन् '३२ में यरवदा-जेल में वे दिन भर में नमक, सोडा और जल के अतिरिक्त पाँच ही चीजें लेते।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भोजन की थाली में जूठन देखकर बापू को कष्ट होता। आश्रमवासियों के लिए उनकी सदा यही चेतावनी रहती कि अन्न का एक कण बरबाद न होने पाए। रंधित पदार्थों को बासी करके खाने के पक्ष में वे नहीं थे। इतने बड़े समूहवाले आश्रम में, जहाँ आश्रमवासियों के अतिरिक्त आगत सज्जनों की भी जमात जुटी रहती, नित्यप्रति रसोई बहुत सावधानी से नाप-तौलकर बनती। बासी भोजन क्वचित् ही बचता। कभी रोटियाँ बच जातीं तो पूरी पंगत में प्रातःकाल की राब के साथ, पुनः सेंककर खाखरा बनाकर परोस दी जातीं। रंधित आहार के साथ टमाटर, मूली, गाजर सरीखी कच्ची भाजियाँ आश्रम में खूब उपयोग में आतीं। बापू का कहना था कि पालक, लूनी की पत्तियाँ, शलजम, गोभी, मूली और टमाटर में क्षारीय अंश विद्यमान रहने से उनके सेवन से बहुत लाभ होता, दाँत मजबूत होते और पाचन-शक्ति ठीक रहती है। कम-से-कम एक वक्त वे कच्ची भाजियाँ ही खाने पर बल देते। अफ्रीका और भारत में ऐसे कई प्रयोग वे कर चुके थे। इससे उनको बहुत आत्मसंतोष हुआ।

बापू के प्रातःकाल का जलपान, दोपहर का भोजन या सायंकाल का आहार, कुछ भी क्यों न होता, माता कस्तूरबा की विशेष देखरेख में बनता। उनकी अवस्था, शारीरिक क्षमता तथा राष्ट्र के प्रति उनके महान् उत्तरदायित्व को ध्यान में रखकर उनके आहार का पाक किया जाता। उनके भोजन में आश्रमवासियों से थोड़ी भिन्नता की जाती। वे अपने प्रायः सभी आहार-द्रव्यों में पाचन-क्षमता बढ़ाने तथा मलावरोधकता समाप्त करने की दृष्टि से सोडा-बॉय-कॉर्ब का मिश्रण करा दिया करते।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लंदन में निरामिष भोजनालय बहुत कम थे। इससे वहाँ कभी-कभी पेट भरने के लिए बापू साधारण भोजनालय में जाते और इच्छा न होते हुए भी केवल रोटियाँ खा लेते। उन दिनों उनकी खुराक अच्छी थी। चाहने पर भी उनको दोपहर या शाम को दूध बिलकुल नहीं मिल पाता। बाद में वहाँ वे सुबह का भोजन स्वयं बनाने और दोपहर को कहीं बाहर खाने लगे। शाकाहारी भोजनालय की खोज भी करते। वहीं पर उन्होंने अन्नाहार और फलाहार की श्रेष्ठता का प्रतिपादन करनेवाली कई पुस्तकें पढ़ीं। इसका गहरा प्रभाव उनपर पड़ा। फलस्वरूप उन्होंने भोजन के अनेक प्रयोग किए। वहाँ कभी वे स्टार्च वाली चीजें छोड़ देते, कभी सिर्फ रोटी, चौलाई का साग, मुरब्बा और फल पर रहते, कभी पनीर तथा दूध पर और कभी गाजर का रस एवं मूँग लेते। उन्हीं दिनों उनके जीवन में सादगी का श्रीगणेश हुआ। उन्होंने मिर्च-मसाले बिलकुल छोड़ देने का संकल्प किया। वहाँ उन्होंने 'अन्नाहार-मण्डल' भी स्थापित किया।

दुबारा जब बापू दक्षिण अफ्रीका से सत्याग्रह-संग्राम में विजयी होकर और वहाँ का अपना फिनिक्स-आश्रम छोड़कर भारत लौटते समय गोपालकृष्ण गोखलेजी की इच्छा के अनुसार उनसे मिलने लंदन गए, वहाँ कुछ समय रुके भी। उस समय उनका स्वास्थ्य ठीक नहीं था। उस समय डॉक्टर एलिन्सन की सिफारिश पर बापू ने भोजन के कुछ प्रयोग किए। उद्देश्य पका हुआ आहार छोड़कर कच्चे आहार पर और गेहूँ के बजाय नट (गिरीदार मेवे) पर रहने का था। इससे उनको किसी प्रकार की हानि का अनुभव नहीं हुआ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उन दिनों बापू सुबह सूखे केले के साथ फली के दो-तीन चम्मच मिलाकर उसका काढ़ा लेते। उसमें वे टमाटर और एक चम्मच तेल मिलाते। दोपहर को एक छोटी गाजर, आधा छोटा कच्चा शलजम और गेहूँ तथा केले के आटे के बने आठ बिस्कुट उबालकर खाते। उन दिनों कभी-कभी वे गाजर तथा शलजम के स्थान पर कच्ची पातगोभी के दो पत्ते पीसकर लेते और सुबह दो सेव। उस समय डाक्टरों द्वारा विवश किए जाने पर उन्हें घी-दूध भी लेना पड़ा, किन्तु पुनः आजीवन इनका सेवन न करने का उन्होंने संकल्प किया और पालन भी।

सन् १९२९-'३० में, साबरमती - आश्रम में बापू ने आश्रमवासी बहनों के चौके चूल्हे के काम को और उनकी मेहनत को घटाने की दृष्टि से तथा बहनों के समय और उनकी शक्ति का उपयोग राष्ट्र की स्वतंत्रता के आंदोलन में करने के विचार से आश्रमवासियों को कच्चा अन्न खाने की सलाह दी। वे स्वयं इस प्रयोग के अगुआ बने। गेहूँ, चना, मूँग और मूँगफली जैसी चीजों को चौबीस घण्टे पानी में भिंगोने के बाद इनके अंकुरित होनेपर अपनी-अपनी पाचनशक्ति के अनुसार लोग इन्हे चबा-चबाकर खाएँ और इस तरह आश्रम की बहनों को चौके-चूल्हे से छुट्टी दें, इसका प्रयोग प्रसिद्ध दाण्डी कूच के समय बापू ने बहुत उत्साह के साथ आश्रम में शुरू किया और उस समय के बहुत-से आश्रमवासियों को अपनी बात समझाकर उन्होंने उन्हें इस प्रयोग के लिए राजी कर लिया। ढाई-तीन महीनों तक यह प्रयोग आश्रम में बड़े पैमाने पर चला। बाद में इसके परिणामस्वरूप

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बापू स्वयं अस्वस्थ हुए, इसलिए उन्हें यह प्रयोग त्यागना पड़ा। धीरे-धीरे दूसरे आश्रमवासियों ने भी इसे छोड़ा। अपवादस्वरूप आश्रमवासियों में भाई शिवबालक बिसेन बापू के इस प्रयोग पर दृढ़ रहे। इसके चलते एक अरसे तक वे अपना स्वास्थ्य अच्छा रख सके। उस समय भावना यह थी कि जो अनाज, फल-फूल और कन्दमूल सूरज के ताप से पकते हैं, उन्हें आग पर पकाने के बदले बिना राँधे या अंकुरित करके खाना स्वास्थ्य के लिए अधिक उपयोगी है।

सन् १९१२ में टालस्टाय फार्म में घर के पिसे और बिना छने आटे की रोटी, दाल, चावल, तरकारी, मूँगफली को भून और पीसकर तैयार किया 'मक्खन' तथा नारंगी के छिलकों का मुरब्बा– ऐसी चीजें बापू लेते। मूँगफली का 'मक्खन' दूध-दही के मक्खन की अपेक्षा सस्ता पड़ता। कच्चे आहार के प्रयोग के समय वहाँ वे गेहूँ आदि कोई अनाज नहीं लेते। बाद में उन्हें अनाज लेना पड़ा। वहाँ के फिनिक्स-आश्रम में दोपहर को रोटी, चपाती, भात, दाल और साग–ये चीजें रहतीं। मिर्च-मसालों का उपयोग बिलकुल नहीं होता, केवल नमक लिया जाता और घी के स्थान पर जैतून का तेल। बिना नमक और बिना मीठे का भोजन करनेवालों के लिए वहाँ समुचित व्यवस्था थी।

सन् १९१८ के लगभग खेड़ा में रंगरूटों की भरती के सिलसिले में बापू का शरीर बहुत थक गया था। उन दिनों वे केले आदि कुछ फल तथा भुनी एवं कुटी हुई मूँगफ़ली में गुड़ और दो-तीन नीबुओं का रस मिलाकर लेते। मूँगफली के गुण-दोष से परिचित होते हुए

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भी संयोगवश उन्होंने अधिक मूँगफली खा ली। इससे उन्हें पहले पेचिश हुई। बाद में वे अत्यधिक अस्वस्थ हो गये। इसे वे अपने जीवन की सबसे बड़ी बीमारी मानते। खड़े होकर बोलने की उनकी जो शक्ति उस समय नष्ट हुई, लौटी नहीं।

सन् १९३४ में वाराणसी में आम के अधिक प्रयोग से बापू को रात में लगातार दस्त आने लगे। उस समय डॉ० भगवानदासजी ने स्थानीय पुराने डॉक्टरों को बुलाया, जिन्होंने सेवा-भाव से काम किया। डॉक्टर भगवानदासजी के शब्दों में बापू के संयत जीवन के सामने रोग को परास्त होना पड़ा।

कोचरब-आश्रम में घी, दूध, नमक, मसाले आदि का सेवन वर्जित था। दूध के स्थान पर गरी को काटकर और गरम पानी में मिलाकर बनाया गया 'दूध' थोड़ी मात्रा में चलता, क्योंकि वहाँ कच्चे नारियलों का अभाव था। कुछ लोगों की दूध की आदत छूट नहीं पायी थी। बाद में कुछ विशेष कारणवश उन्होंने आश्रमवासियों को दूध लेने की छूट दे दी। स्वयं दूध न लेने वाले बापू अकेले थे।

साबरमती में रोटी, दाल, चावल और साग आदि वस्तुएँ रहतीं। एक बार उन्हीं दिनों अकाल पड़ने के कारण आश्रमवासियों के लिए शाक मिलने में बहुत कठिनाई होने पर, मिर्च-मसालों के विरोधी होते हुए भी मितव्ययिता की दृष्टि से बापू ने सबको अचार खाने की इजाजत दे दी थी।

यरवदा में बापू सन् '३० में वे कच्चे दूध का जमाया हुआ दही लेते। वहाँ उनके आहार में दही के अतिरिक्त मुनक्का या खजूर, खट्टे नींबू का रस एक बार रहता। वहाँ वे कोई गरम पेय नहीं लेते।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मगनवाड़ी (वर्धा) में टालस्टाय-फार्म की भाँति नारंगी के अधिक पेड़ थे। उसके छिलके व्यर्थ न जाने देने की दृष्टि से बापू वहाँ भी नारंगी के छिलकों का मुरब्बा बनवाया करते। घानी से तेल निकालने के बाद बचनेवाली खली की पौष्टिकता की बात सुनकर उससे जायकेदार चीजें बनाकर आश्रमवासियों को खिलाने का विचार उनको आया। सो, एक दिन दही के योग से बनी खली की चटनी सबको परोसी गयी। सोयाबीन को उबाल और कुचलकर बिना नमक-मिर्च मिलाये खाने के प्रयोग भी हुए। दक्षिण भारत में इमली से बनने वाले 'रसम्' नामक पेय के स्थान पर इमली में गुड़ मिलाकर बापू द्वारा बनाया गया शर्बत लोगों ने काफी पसन्द किया। बाद में दूसरी बार बिना गुड़ का, सिर्फ नमक मिलाया हुआ 'रसम्' बना, जिसका रंग और स्वाद दोनों ठीक न प्रतीत होने पर उसमें थोड़ी मूँगफली मिलायी गयी।

एक वैद्यजी से नीम की पत्तियों का गुणगान सुनकर वहाँ बापू 'नीम की चटनी' लेते। एक बार दोपहर के समय सरदार वल्लभ भाई पटेल और जे० सी० कुमारप्पा बापू के अगल-बगल बैठे भोजन कर रहे थे। बापू ने कुमारप्पाजी की थाली में चम्मच भर नीम की चटनी परोस दी। सरदार पटेल कुमारप्पाजी से विनोद के स्वर में बोले– देखिये, बापू ने शुरुआत बकरी के दूध-सेवन से की और अब उसके आहार पर नौबत आ पहुँची!

दूसरा प्रसंग सन् १९४० का है– व्यक्तिगत सत्याग्रह के समय का। काशी से महाराजकुमार विजयानगरम् बापू से सत्याग्रह में भाग लेने की अनुमति प्राप्त करने उनके पास पहुँचे। भोजन के समय अपनी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पद्धति के अनुसार उनको बापू ने बगल में बैठाया । उनको भोजन-सामग्री के साथ नीम की चटनी भी परोस दी गयी। महाराजकुमार ने चटनी देखी तो सहज ही उसका बड़ा-सा कौर उठाकर मुँह में रख लिया। किन्तु यह क्या! जीभ ने जैसे ही उस चटनी को छुआ कि बेचारी बहुत असमंजस में पड़ गयी– न भीतर ले जाते बनता, न बाहर उगलते बनता । 'भई गति साँप-छछूँदर केरी ।' महाराजकुमार की अजीब सकते की हालत थी। उगलें भी तो कैसे! गांधीजी- जैसे महापुरुष का वह प्रसाद और भीतर भी ले जायँ तो कैसे! ऐसी कड़वी चीज भीतर ले जाने की आदी जीभ कभी थी नहीं!

आगा खाँ महल में बापू उबाला हुआ कच्चा साग, खाखरा (गेहूँ के आटे में घी तथा सोडा मिलाकर बनायी गयी खस्ता और पतली रोटी), बकरी का दूध और उससे निकाला हुआ मक्खन लेते। वहाँ बा की बीमारी के दिनों में उबाला हुआ साग, एक औंस मक्खन तथा दूध वगैरह को एक साथ बनवाकर वे लेते। शाक का कचूमर बनवा लेते, जिससे केवल दस मिनट यह आहार ग्रहण करने में लगता। बा का अन्तकाल निकट था, रात-दिन सतत जागरण के कारण वे बहुत थक जाते और खूब चबा-चबाकर खा नहीं पाते।

सेवाग्राम में सन् १९४५ में बापू दोपहर को कुछ मिला-जुला पत्तियों वाला साग–खासकर उसका पानी, कुछ डबल रोटी (जो आश्रम में मोटे आटे से खास तरह से बनती) के टुकड़े, बकरी का दूध, खाखरा, पिसी नीम, लहसुन तथा फलों का रस–ये सब चीजें मिलाकर लेते। माता कस्तूरबा अक्सर उनको गुड़-पपड़ी या बकरी के बचे हुए दूध का खोवा या पेड़ा भी खिलाया करतीं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लहसुन का उपयोग बापू रक्तचाप की दृष्टि से करते। उससे उनको अत्यधिक लाभ हुआ। अधिक उपयोग करने के कारण पास बैठने वालों को उसकी गंध आती रहती, किन्तु बापू की घ्राणेन्द्रिय अत्यंत मंद थी। एक बार पं० जवाहरलाल नेहरू ने बापू से विनोद में कहा– आप लहसुन बहुत खाते हैं। आपको उसकी गंध आती नहीं; लेकिन दूसरों के लिये आपके पास बैठना मुश्किल हो जाता है।

सेवाग्राम में सोयाबीन को भिगोकर उसका 'दूध' और 'दही' तैयारकर खाने के प्रयोग भी हुए। उसमें प्रोटीन की मात्रा बहुत अधिक महसूस हुई, जिसे पचाना कठिन हो गया। इसके अतिरिक्त उग्र गंध के कारण खानेवाले को उससे अरुचि हो जाती। कुछ काल में वह प्रयोग स्थगित हो गया।

बापू नोवाखाली में दिन के आहार में एक रोटी लेते, जिसमें एक छटाँक गेहूँ का आटा, एक छटाँक उबाली हुई तरकारियाँ, पाँच ग्राम सोडा तथा एक चुटकी नमक पड़ता। ये चीजें तवे पर इतनी पकायी जातीं कि बिस्कुट की तरह बन जातीं। वहाँ वे उबाली हुई तरकारियों में एक पाव बकरी का दूध भी लेते। बापू के अंतिम दिन के आहार में बारह औंस बकरी का दूध, उबाली हुई सब्जी, मूली, टमाटर तथा संतरे का रस–ये चीजें थीं।

बापू के खान-पान की वस्तुएँ औंस के हिसाब से नपी-तुली रहतीं। अस्वस्थता की स्थिति में वे सर्वप्रथम अपने खान-पान में रद्दोबदल या न्यूनता करके स्वास्थ्य-लाभ कर लिया करते। अत्यधिक कार्यव्यस्तता तथा गरमी के दिनों में तो वे अपने आहार

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

में भारी कमी कर दिया करते। प्रायः एक बार का भोजन त्याग देते।

भोजन के समय भी बापू न केवल साक्षात्कार देते, बल्कि डाक देख जाते और उत्तरादि लिखवा देते। दक्षिण अफ्रीका (जेल) में वे दिन का भोजन करते समय पुस्तकें पढ़ा करते। अंतिम दिन भोजन के समय वे अपने सचिव से राजनीतिक विषयों पर चर्चा कर रहे थे।

आश्रम के भोजनालय में बापू भोजन कर रहे होते तो कर चुकने पर वहाँ से उठकर अपनी कुटिया में जाते, जहाँ एक छोटी-सी लुटिया से हाथ-मुँह धोते। हाथ-मुँह धोने में वे बहुत कम जल का उपयोग करते। हर चीज की भाँति जल का दुरुपयोग करना उन्हें बिलकुल नापसंद था। ●

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समाचारपत्रावलोकन

साधारणतः मध्याह्न में भोजन से निवृत्त होकर विश्राम करने तथा एक झपकी लेने से पहले देशी तथा विदेशी पत्रों के चुने समाचार बापू स्वयं पढ़ा करते। दक्षिण अफ्रीका से भारत तक, जहाँ भी उन्होंने सार्वजनिक कार्य किये, उनकी कार्य-प्रणाली में पत्रकारिता का विशेष योगदान रहा। वह उनकी दिनचर्या में आवद्ध थी। अफ्रीका में रहते हुए 'इंडियन ओपीनियन' तथा भारत में 'यंग इण्डिया', 'नवजीवन', 'हरिजन' और 'हरिजनसेवक' जैसे समाचारपत्रों का सम्पादन समाचार-पठन और श्रवण से सम्बद्ध था।

बापू आरंभ से नियमपूर्वक 'बाम्बे क्रानिकल' तथा 'टाइम्स ऑफ इण्डिया' पढ़ते। सेवाग्राम-निवास के पश्चात् वे 'नागपुर टाइम्स' पर भी एक दृष्टि डाल लिया करते। श्री नटराजन् के साप्ताहिक 'इण्डियन सोशल वेलफेयर' के अग्रलेख तथा रामानन्द चटर्जी के 'माडर्न रिव्यू' की टिप्पणियों का वे अवश्य अवलोकन करते। पाकिस्तानी पत्र 'डान' तथा भारतीय साम्यवादी दल के साप्ताहिक 'जनयुग' की कतरनें भी वे बराबर देखते। 'डॉन' को वे विशेष रूप से पढ़ते या सुनते।

पत्रकारिता बापू के लिए लोकहित तथा लोकसेवा का व्रत था। वह जीवन-कार्य अग्रसर करने वाला सहायक साधन थी, जीविका

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

का साधन नहीं। इस विषय में उनके कुछ आदर्श थे। उनमें सत्य प्रमुख था। उन्होंने अनेक पत्र सफलतापूर्वक चलाये, वर्षों कठोर कारावास भोगा और वे समर्थ एवं निर्भीक पत्रकार स्वीकारे गये। उनके महत्त्वपूर्ण लेखों को वाइसराय दूरभाष (टेलीफोन) पर सुना करते। वे और उनके अखबार सत्य के विषय में प्रमाण माने जाते। इतना होने पर भी उनके सान्निध्य में हर व्यक्ति का मान सुरक्षित रहता। यदि उन्हें महसूस हो जाता कि उनसे भूल हुई है तो वे निस्संकोच क्षमायाचना करने में हिचकते नहीं, किन्तु उनसे जबर्दस्ती क्षमायाचना कराना सर्वथा असंभव था।

पत्रकारिता में द्विअर्थी भाषा का प्रयोग तथा लेखनी की निरंकुशता के बापू परम विरोधी थे। द्विअर्थी भाषा को वे सज्जनों और मर्दों की भाषा नहीं मानते और लेखनी के निरंकुश प्रवाह से सर्वनाश संभव बताते। प्राप्त सारी जानकारी प्रकाशित करने के वे विपक्ष में थे। लोक-हित तथा सेवा के अपने आदर्श के अनुरूप वे उतनी ही जानकारी प्रकाश में लाने के पक्ष में थे, जितनी आवश्यक होती है।

आरंभ में दक्षिण अफ्रीका में 'इण्डियन ओपीनियन' में विज्ञापन लिये जाते। बाद में बापू इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि पत्र को स्वावलम्बी होना चाहिये और पाठकों तथा सम्पादक की लेखनी के बलपर चलना चाहिये। भारत में भी अपने साप्ताहिकों में उन्होंने विज्ञापन प्रकाशित नहीं होने दिया, जनबल पर उनको चलाया। पत्र-जगत् की यह अद्भुत घटना है। उनकी मान्यता थी कि सच्चे अर्थों में यही स्वतंत्र पत्रकारिता है। अनैतिक विज्ञापनों के बल पर पत्र-संचालन से कहींअच्छा उसका बन्द हो जाना है। इस आदर्श के परिपालन में उन्हें सफलता मिली। उनके पत्रों की संख्या

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

घटती-बढ़ती रहती और उससे वे जनमत का अनुमान लगा लिया करते। समय पर अखबार निकालने को वे स्वराज्य-प्राप्ति के समान महत्त्व देते और उनके अखबार हमेशा समय पर निकलते। उनकी कथनी और करनी में इतना साम्य था!

बापू के सहायक यद्यपि अधिकांश उलझनों को दूरकर कार्ययोग्य विशुद्ध और मुख्य समाचार ही उनके दृष्टि-पथ में आने देते और इस प्रकार वे समाचारपत्रों में ढेर-के-ढेर अनावश्यक ऊलजलूल, झूठे और अमर्यादित ढंग से प्रकाशित समाचारों पर दृष्टि दौड़ाने से बच जाते, तथापि उनकी पैनी दृष्टि से पत्रकारिता के ये दोष छिप नहीं पाते। कभी-कभी देशी-विदेशी पत्रों में उनके भाषणों या वक्तव्यों का उलटा-सीधा अर्थ छाप दिया जाता। इससे भारी भ्रान्ति फैलने के साथ उनका व्यक्तिगत और भारत राष्ट्र का अहित होने की आशंका रहती। इन्हीं कारणों से वे अपने लिखे या लिखवाये वक्तव्यों को एक बार देख लेने के बाद प्रकाशनार्थ अनुमति देते। इसीलिए उनको एक बार लेख लिखकर फिर उसमें काँट-छाँट करने की आवश्यकता नहीं पड़ती। उस समय उन्हें ऐसा अनुभव होता कि कोई दूसरी शक्ति उनसे लिखवा रही है, फिर भी एक बार दोहराये बिना वे नहीं रहते। सहयोगियों के लिखे लेखों तथा टाइप की हुई सामग्री देखकर ही वे अग्रसर होने देते।

संवाददाताओं को बापू प्रायः मौखिक बयान नहीं देते। उनके प्रश्नों के उत्तर लिखित रूप में देने का उनका प्रयत्न रहता। उनका मौखिक वक्तव्य भी वे तब तक प्रकाशित नहीं कर पाते, जब तक बापू उसे सुन या देखकर स्वीकृति नहीं दे देते। उन लोगों से भेंट-वार्त्ता के समय वे बहुत सावधान रहते। कभी कोई गलत बात प्रकाशित होने पर उन्हें उपालंभ दिये बिना वे नहीं रहते। यदि कोई

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

संवाददाता गलती मंजूर न करता और बताने पर भी उसे ठीक न करता तो उससे बापू फिर मिलते नहीं। विदेशी पत्रकार भी सामयिक समस्याओं पर उनके विचार जानने को उत्सुक रहते और उनके पास समुद्री तार के लिए अग्रिम पैसे भेजते। ऐसे प्रेस-तारों के संक्षिप्त, संतोषजनक उत्तर देने में बापू सिद्धहस्त थे।

कोचरब के सत्याग्रह-आश्रम में समाचारपत्रावलोकन के बजाय दिन में प्रायः डेढ़ से तीन बजे तक बापू आश्रमवासियों को गणित, संस्कृत और गुजराती-साहित्य पढ़ाते। इसी प्रकार आगा खाँ महल में महादेव भाई देसाई के देहान्त के बाद जब वातावरण बहुत उदासीन रहता, दोपहर को भोजन के बाद लेटने पर, विश्राम के पहले वे बा को गुजराती सिखाते। कभी-कभी वे उन्हें इतिहास-भूगोल भी पढ़ाते। गुजराती की पुस्तक में कोई भजन निकल आता तो वे बा को उसे सस्वर गाना सिखाते। इस पर भारतकोकिला सरोजिनी नायडू हँसतीं और कहतीं कि चौहत्तर वर्षीय वृद्ध नवविवाहित दम्पति का स्वांग-सा रचकर आनन्द ले रहे हैं। बापू का कहना था कि भले ही अच्छे-से-अच्छा काव्य या भजन क्यों न हो, भली भाँति गाये बिना व्यर्थ हो जाता है। ●

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विश्राम

समाचारपत्रावलोकन से निवृत्त होकर लगभग आध घण्टा बापू झपकी लेते। अखबार देखते-देखते प्रायः उन्हें नींद आ जाती। उस समय कोई बहन-भाई उनको पंखा झलते और उनके तलवों में घी मला जाता। माता कस्तूरबा प्रायः समाचारपत्रावलोकन के समय घी मलने का कार्य करतीं। बापू की जब आँखें लग जातीं तब वे अपने कमरे में विश्राम करतीं। अत्यधिक व्यस्तता तथा नींद की पूर्त्ति न होने से बापू रक्तचाप से आक्रांत हुए। इसी वजह से उन्होंने नींद का कर्ज अदा करने का नियम बना लिया और दोपहर में भोजन के बाद कुछ देर वे जरूर सो लेते। बालक, युवा और वृद्ध– सभी के लिये दोपहर में कुछ देर विश्राम करना वे बहुत आवश्यक मानते। उनकी मान्यता थी कि इस नियम का पालन करके दो गुना काम करने की शक्ति प्राप्त की जा सकती है।

द्वितीय गोलमेज-परिषद् के समय लंदन में बापू अत्यधिक व्यस्त रहते, उनकी नींद की पूर्त्ति नहीं हो पाती। इस कारण, जब भाषण होते रहते, वे कुर्सी पर बैठे-बैठे आँखें बन्द कर लेते और सोने लगते। इस पर घनश्यामदासजी बिड़ला ने उनसे कहा – यह कुछ अच्छा नहीं लगता कि बड़े-बड़े लोग बैठे हों, भाषण दिये जा रहे हों और आप सोते हों ! बापू बोले– फिर क्या जागरण करके बीमार पड़ना है ? और, तुमने कभी देखा भी है क्या कि एक भी महत्त्व के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

व्याख्यान को मैं न सुन पाया होऊँ ? बिड़लाजी का कथन है कि यह बात सही भी थी। यहाँ भी उनका विवेक का मापदण्ड कुछ अलग था। न मालूम कौन-सी वृत्ति काम करती ! जब कभी कोई महत्त्वपूर्ण पुरुष बोलने खड़ा होता, बापू तुरंत आँखें खोल देते और भाषण की समाप्ति पर फिर नींद ले लेते।

एक दूसरा प्रसंग है। पं० मोतीलाल नेहरू के दाह-संस्कार के बाद बापू मोटर से 'आनन्द-भवन' (प्रयाग) लौट रहे थे। कई रात तक उन्हें जागरण करना पड़ा था। मोटर में वे सो गये। दुर्योगवश मोटर पेड़ से टकराकर उलट गयी। सभी लोग छटककर इधर-उधर जा गिरे। लोग अपनी चिंता छोड़कर बापू को उठाने दौड़े। देखा कि वे घास पर पड़े सो रहे हैं। जगाने पर बोले कि मुझे दुर्घटना का कुछ पता ही नहीं और वे मोटर में आकर फिर निद्रामग्न हो गये।

तीसरा प्रसंग दिल्ली का है। प्रसिद्ध विचारक जैनेन्द्रकुमारजी बापू से मिलने पहुँचे। भोजन के अनंतर बापू के विश्राम की वेला थी। संभवतः मीरा बहन हलके हाथों उनके पाँवों की मालिश कर रही थीं। बापू की पलकें झपकने के निकट थीं। जैनेन्द्रजी बोले– आपका विश्राम का समय है, नींद में मैं बाधक न बनूँगा, चलूँ। बापू बोले– नहीं, बाधक न बनोगे। नींद अपने समय से आ जायगी। आने पर तुम समझ ही जाओगे। तब चाहो तो उठ जाना। जैनेन्द्रजी का कथन है– और, मेरे देखते-देखते चन्द सैकण्डों में नींद चुपचाप चली आयी। शिशुवत् वे सो गये और मैं अचम्भे में पड़ गया। नींद भी इस तरह किसी की चेरी हो सकती है, यह मैं संभव न मानता था। लगभग तभी मीरा बहन के हाथ रुक गये। समझ गया, नींद

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समय से आयी है। समय होने पर उसे उसी तरह चले जाना होगा। बापू की ओर से उस बेचारी का भी समय नियुक्त था!

दिन के विश्राम को बापू कितना महत्त्व देते, इसका उदाहरण एक अन्य घटना से मिलता है। बात सन् १९३९ की है और गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर से सम्बन्धित है। अप्रासंगिक होते हुए भी प्रासंगिक है।

गुरुदेव उन दिनों अस्वस्थ थे। चिकित्सकों ने उनको पूर्ण विश्राम की सलाह दी, किन्तु वे अपने सारे काम नित्य नियमपूर्वक करते रहते। इस कारण 'शांतिनिकेतन' के कुछ सज्जनों ने बापू को तार देकर बुलाया। बापू पुहँचकर गुरुदेव से मिले और बोले—मैं आपसे भिक्षा चाहता हूँ। गुरुदेव बोले— भिक्षुक भला क्या भिक्षा दे सकता है ? लेकिन बापू टस-से-मस न हुए, उन्होंने गुरुदेव को वचनवद्ध करा लिया। बोले—भोजन के पश्चात् आपको एक घण्टा पूर्ण विश्राम करना होगा। कविगुरु को विवश होकर बापू की बात माननी पड़ी।

कुछ दिनों बाद आचार्य क्षितिमोहन सेन गुरुदेव से मिलने पहुँचे। गुरुदेव ने तुरंत भोजन किया था। वे कमरे के सारे दरवाजे बन्दकर लेटे थे। दरवाजे की दरार से कुछ प्रकाश झलक रहा था। हलचल से गुरुदेव ने आचार्य सेन को पहचान लिया। प्रश्न किया—ठाकुर दा हैं क्या ? आचार्य सेन ने 'हाँ' कहते हुए आश्चर्यचकित होकर उनसे प्रश्न किया—आप भीतर कर क्या रहे हैं ? गुरुदेव का सहज उत्तर था—गांधीजी को भिक्षा दे रहा हूँ। ऐसे थे बापू और ऐसी थी उनके विश्राम की चमत्कारी चर्या! ●

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मिट्टी और जल-चिकित्सा

बापू सेवाग्राम में विश्राम के बाद पीतल के तसले में कुल्ला कर डाक का काम निबटाते। गन्ने के मौसम में दोपहर को गन्ने का सोलह औंस खूब गरम रस वे पीते। अन्यत्र वे सोलह औंस गरम जल में ताड़ के गुड़ की चाशनी या ताड़ का गुड़ मिलाकर लेते। इनमें वे सोडा-बॉय-कॉर्ब और नींबू भी मिलाते। कभी-कभी पानी में शहद और कभी नींबू का रस मिलाकर लेते और शौच जाते। आगा खाँ महल में एक झपकी लेकर उठने के बाद वे तुरंत गरम पानी में शहद लेते। नोवाखाली में दिन में एक बजे वे लगभग बारह औंस कच्चे नारियल का पानी पीते। इसके बाद यदि गिरी अच्छी और मुलायम होती, उसे चबाकर खाते। अंतिम दिन उन्होंने डेढ़-दो बजे के बीच कच्ची गाजरों और नींबू का रस लिया था। प्रार्थना-सभा में जाते समय उन्हें उसका स्मरण हो आया तो वे हँस पड़े और अपनी दोनों सहायिकाओं—मनु एवं आभा बहन गांधी को लक्ष्यकर विनोद के स्वर में बोले—अब तुम लोग मुझे पशुओं का आहार देने लगी हो। आभा बहन ने कहा—नहीं बापूजी ! गाजर को घोड़े का आहार कहा जाता है। बापू की अंतिम विनोद-वार्त्ता थी यह और उत्तर में उन्होंने कहा था—अच्छा, तुमने घोड़े का आहार मेरे लिये पसंद किया है !

दोपहर के विश्राम के समय बापू पेट और सिर पर मिट्टी की पट्टी रखा करते। मिट्टी की पट्टी का प्रयोग उन्होंने सर्वप्रथम सन् १९०५ में

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जोहांसवर्ग में किया था। वहाँ उन्हें कब्ज और सिर-दर्द की शिकायत थी। जब उपचार के बावजूद वे रोग-मुक्त न हुए तब उन्होंने जर्मन ग्रन्थकार जुस्ट-लिखित 'रिटर्न टु नेचर' नामक पुस्तक पढ़कर उससे मिट्टी के प्रयोग की प्रेरणा प्राप्त की। उससे उनको आश्चर्यजनक लाभ हुआ। उनका यह नित्य का क्रम-सा बन गया। अत्यधिक गरमी तथा थकावट के कारण रात में सोते समय वे सिर्फ पेट पर और दोपहर में सिर पर मिट्टी की पट्टी रखा करते। सेवाग्राम में सन् '४५ में ऐसा होता। उन्होंने इसके द्वारा प्लेग के कितने ही रोगी ठीक किये। बर्रे और बिच्छू के डंक मारने तथा हैजा और फोड़ा-फुन्सी पर भी उनका यह प्रयोग चलता।

मिट्टी की पट्टी रखने का बापू का क्रम साधारणतः दिन में लगभग तीन बजे शुरू होता। सेवाग्राम में भीषण गरमी में खेत की चिकनी, कपड़छन काली या लाल मिट्टी को गीली कर उसकी लगभग एक इंच मोटी पट्टी देर तक वे कनटोप की तरह सिर पर रखा करते। पेट पर ऐसी पट्टी वे बारहों मास रखते।

एक बार बापू की ठोड़ी पर मस्सा निकल आया। उस पर भी उन्होंने मिट्टी की पट्टी बाँधी। इसी प्रकार एक बार खाते समय चील झपटी और उनका अँगूठा लहूलुहान हो गया। उस समय भी उन्होंने यही प्रयोग किया। मिट्टी के प्रयोग पर उन्हें अटूट विश्वास था। स्वयं बापू का कहना था कि मनुष्य-शरीर का अधिकांश मिट्टी से निर्मित है। इस कारण, उस पर मिट्टी का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है, यह कोई नयी या अद्‌भुत बात नहीं। मिट्टी के अनेक प्रयोग, उप-प्रयोग करते हुए वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि मिट्टी अमूल्य वस्तु है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आश्रम में बापू के ऐसे कुछ प्रयोगों को देखकर विदेशी अतिथि आश्चर्यचकित रह जाते। दिसम्बर, सन् १९३५ के अंत में जापान के प्रसिद्ध राजकवि योन नागूची नागपुर से बम्बई जाते हुए वर्धा में रुके। बापू उन दिनों अस्वस्थ थे और लेटे हुए थे। उनकी मालिश हो रही थी। जब नागूची महाशय ने खद्दर में लिपटी कोई चीज उनके सिर पर देखी तब पूछा—यह क्या है ? बापू बोले—यह गीली मिट्टी है, जो मेरे चिकित्सकों के मतानुसार मुझ सरीखे रक्तचाप वालों के लिए लाभदायक है। और, फिर वे कुछ व्यंग्य तथा कुछ दार्शनिकता से युक्त मुस्कान के साथ उनसे बोले—मैं हिन्दुस्तान की मिट्टी से उत्पन्न हुआ हूँ और हिन्दुस्तान की यही मिट्टी मेरे सिर का ताज है।

एक बार जब बापू सिर पर मिट्टी की पट्टी रखे लेटे थे, एक अमेरिकन सज्जन उनका फोटो लेने पर उतारू हो गये। उनसे विनोदी स्वर में बापू ने कहा—मेरे सिर की पट्टी देखकर लोग जब आपसे प्रश्न करेंगे—अरे ! गांधी का सिर कैसे फूट गया था ? तब आप उन्हें क्या उत्तर देंगे ?

मिट्टी की भाँति बापू जल-चिकित्सा भी करते। एक बार मोटर के दरवाजे में उनकी दो उँगलियाँ दब गयीं। कुछ देर के लिए वे बेहोश-से हो गये। उस समय उन्होंने तुरन्त पानी में उँगलियाँ डुबो दीं और थोड़ी देर में वे काम करने लग गये। गरमी में सिर पर ठण्डे पानी की पट्टी भी प्रायः वे रखते। कभी-कभी उन्हें दिन भर सिर पर ठण्डे पानी की पट्टी रखनी पड़ती।

सन् १९०१ से जीवन के अन्त तक बापू प्राकृतिक चिकित्सा के विविध प्रयोग करते रहे। इससे पूर्व सन् १८९८ में वे जल तथा मिट्टी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

के प्रयोग कर चुके थे। इसे वे अपने लिये सत्य की शोध या आत्मानुभूति का अंग मानते। उनका दृढ़ मत था कि सत्य के आग्रही का स्वस्थ होना अनिवार्य है और इसी कारण वे मनुष्य में रोग को असत्य के प्रतीक की संज्ञा देते।

आचार्य कृपलानीजी ने एक बार कहा था– बापू का विश्वास था कि शरीर को पूर्णतया स्वस्थ रखना तथा रोगों से मुक्त रहना स्वर्ण सिद्धान्त है। वे मानते कि स्वास्थ्य-नियमों के अनुकूल संयत और नियमित भोजन, स्वस्थ वातावरण और क्रियाशील जीवन, स्वस्थ और प्रसन्न जीवन के लिये आवश्यक है। इसलिये वे औषधों और उत्तेजक द्रव्यों के विरुद्ध थे। इस विचार से वे औसत डाक्टर से अधिक आधुनिक और वैज्ञानिक थे। स्वास्थ्य-सम्बन्धी सभी प्रश्नों पर उन्होंने गंभीरतापूर्वक विचार किया था, व्यक्तिगत तथा राष्ट्रीय–दोनों दृष्टिकोण से। वे जब तक किसी चीज को बरतकर नहीं देख लेते, तब तक उसकी सिफारिश नहीं करते।

इस तरह, प्राकृतिक चिकित्सा पर बापू की आस्था उत्तरोत्तर बढ़ती गयी और उनके प्रयोगों की गति भी। जीवन में दो-तीन बार वे बहुत सख्त बीमार पड़े, फिर भी स्वानुभव के बल पर जोर देकर कहते कि आदमी को औषधि की शायद ही जरूरत पड़े। पथ्य, पानी और मिट्टी आदि के उपचारों से प्रायः सारे रोग ठीक किये जा सकते हैं। अप्राकृतिक उपचारों से मनुष्य अपने जीवन की अवधि घटा लेता है। इतना ही नहीं, बल्कि अपने मन पर उसका अधिकार नहीं रह जाता और शरीर का स्वामी रहने के बजाय वह उसका दास बन जाता है। शारीरिक एवं मानसिक–सभी रोगों की उनकी अचूक और अमोघ औषधि राम नाम सर्वविदित ही है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सूत्र-यज्ञ

भारत को राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक गुलामी से मुक्ति दिलाने के लिए बापू ने जिन रचनात्त्मक साधनों का आविष्कार किया, उनमें प्राचीन काल से देश के घर-घर में चलते आये चरखे का पुनरुद्धार मुख्य है। उन्होंने सूत-कताई या चरखे को नयी जान दी, नये मंत्र-बल से उसे अभिषिक्त कर, भारतीयों के सामने अपनी दीनता और दरिद्रता को दूर करने के प्रबल साधन के रूप में रखा। यज्ञ किये बिना खानेवाले को वे चोर और पाप का भागी कहते। अतः जब से उन्होंने चरखे का पुनरुद्धार किया, सूत्र-यज्ञ उनकी आवश्यक दिनचर्या हो गयी।

बापू का यह यज्ञ प्रति दिन चलता। यह मुक्ति की उनकी साधना थी। दीनता से मुक्ति का साधन इसे वे मानते ही थे, लेकिन मुक्ति की साधना के साथ ही ईश्वर-साक्षात्कार का साधन भी मानते। सूत के धागे-धागे में उन्हें ईश्वर-दर्शन होता। उनकी मान्यता थी कि जिस साधन से मानव की गरीबी हरी जाती हो, उसमें ईश्वर-दर्शन न होता हो, तो वह अपंग साधन है; लेकिन चरखा ऐसा अपंग साधन है नहीं;- इसमें दीनता से मुक्ति की शक्ति पूर्ण रूप से भरी है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सूत्रयज्ञ बापू का व्रत था। एक बार आरंभ की जेलयात्रा में उनको कताई के लिए चरखा सुलभ न हो सका। उस समय उन्होंने भोजन का परित्याग कर सत्याग्रह किया। प्रसिद्ध होने पर ऐसा प्रसंग कभी नहीं आया।

सामान्यतः अपराह्न चार बजे बापू का सूत्र-यज्ञ शुरू होता। शरीर के बिलकुल असमर्थ हो जाने तथा रोगशय्या पर पड़ जाने पर ही शायद कताई का उनका क्रम टूट पाता। लम्बे-लम्बे उपवासों की अवधि में, गोलमेज परिषद् (लंदन) में, जहाँ शयन के लिए भी समय मिलना मुश्किल था, जहाज पर, जेल में और रेल में भी उनका चरखा चलता रहता। किसी कारणवश वे दिन में न कात पाते तो सोने से पहले कातते। भोजन के बिना रहना उन्हें मंजूर था, लेकिन सूत्र-यज्ञ के बिना वे नहीं रह सकते थे।

आरंभ में रोज एक सौ साठ तार अर्थात् दो सौ पन्द्रह गज सूत कातने का बापू का नियम था, लेकिन बाद में समय के अभाव तथा हाथ की तकलीफ के कारण वे एक सौ बीस तार कातने लगे थे। दूसरे की बनायी पूनियों से कातने को वे अपूर्ण यज्ञ की संज्ञा देते। उनका कहना था कि असमर्थता के कारण उनके सरीखा व्यक्ति अपनी पूनियाँ भले ही न बना सके, लेकिन समर्थ व्यक्ति को अपनी पूनियाँ खुद तैयार करनी चाहिए।

बापू तन्मय होकर चरखा चलाते। सामान्यतः वे आध से पौन घण्टे तक सूत्रयज्ञ करते, किन्तु यरवदा जेल में सन् १९२२ में खूब सूत कातते। उन दिनों वहाँ सूत अधिक कातने के कारण आँखों में काफी दर्द होने पर चिकित्सकों ने उनसे आराम करने का आग्रह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

किया, किन्तु वे नहीं माने। उन दिनों इस काम में वे चार घण्टे लगाते। तीन घण्टे वे कातते और एक घण्टा पींजते।

वहाँ जेल का वार्डर (चौकीदार) था सोमालीलैण्ड का निवासी आदन नामक नवयुवक सिपाही, जो एक हाथ से लूला था। वह बापू का भक्त बन गया। उसने भी उनसे आराम करने का आग्रह किया। तब उन्होंने सूर्य के सदा कार्यरत रहने, निश्चित समय पर निकलने और सम्पूर्ण जगत् को प्रकाशित करने का उदाहरण देते हुए अपना कार्य छोड़ने में असमर्थता प्रकट की। बापू के अकाट्य तर्क के सामने निरुत्तर हो जाने पर भी उसकी इच्छा यही थी कि बापू काम कम करें तो अच्छा। कुछ समय बाद जब उनका स्वास्थ्य अधिक खराब हो गया और जब उन्होंने चार के बजाय दो ही टोस्ट लिये तब आदन से न रहा गया। वह बोल उठा– सूर्य अपने नियम को भंग नहीं करता, तब आप रोटी में कैसे कमी कर सकते हैं ? आदन की इस दलील पर बापू को हँसी आ गयी। उसके लिए बापू के हृदय में बड़ा स्थान था। वह बापू की सेवा का समुचित ध्यान रखता।

यरवदा में सन् १९३० और '३२ में भी बापू की कताई का यही हाल रहता। सन् '३० में साप्ताहिक पत्र लिखने, गीता के श्लोक याद करने और मराठी सीखने के बाद उनका शेष समय कातने में बीतता, यद्यपि उन दिनों उनकी बाईं कोहनी से ऊपर की हड्डी में दर्द रहता। दर्द अन्तिम दिनों तक रहा। इस कारण, वे अंत तक बराबर दोनों हाथों से रोज काता करते। बारडोली में निर्मित प्रसिद्ध यरवदा-चक्र में उन्हीं दिनों उन्होंने विशेष सुधार किया। उन दिनों बापू को बायें हाथ से चरखा चलाते देखकर सरदार वल्लभ भाई पटेल ने उनसे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विनोद किया था कि आश्रम में किसी को मालूम हो जायगा तो बायें हाथ से कातना शुरू कर देगा और यह पंथ चल पड़ेगा। सन् '४२ में आगा खाँ जेल में वे दिन में ही कात लेते। वहाँ उस समय रोज डॉ० सुशीला बहन नैयर उन्हें बाइबिल सुनातीं। कभी-कभी वे अखबार भी सुनते।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भेंट-वार्त्ता

सूत्र-यज्ञ के समय बापू का महत्त्वपूर्ण मुलाकातों और भेंटवार्त्ताओं का क्रम प्रायः चलता रहता। इससे उनकी कताई में बाधा नहीं पड़ती। लंदन में वे मिलनेवालों को प्रायः प्रातः चार-पाँच बजे का समय देते। वहाँ पहुँचने में लोगों को काफी समय लग जाता, इसलिए लोगों को बहुत तड़के उठकर आना पड़ता, तब भी लोग पहँचते। सूत्र-यज्ञ के समय भी उनसे हर कोई मिल सकता।

मुलाकातियों में सभी श्रेणियों के लोग होते। व्यक्ति और कार्य के अनुसार पहले बापू के संचिव उनके पास लोगों के संदेश पहुँचाते और समय निर्धारित कर उनसे भेंट कराते।

सेवाग्राम में सन् १९३६ से '४६ के मध्य मिट्टी और देशी बल्लियों के छप्परवाली बाहर-भीतर मिट्टी से लिपी अपनी कुटिया में बापू लोगों से मिलते। वहाँ खजूर की चटाइयाँ बिछी रहतीं। इन्हीं पर राजेन्द्र बाबू, नेहरूजी, राजाजी, मौलाना अबुल कलाम आजाद और अन्य बड़े नेता बैठा करते। सन् १९४२ के ऐतिहासिक 'भारत छोड़ो' आंदोलन का प्रस्ताव वहीं स्वीकृत हुआ।

अन्तिम दिनों में दिल्ली में मुलाकातियों की संख्या अत्यधिक बढ़ जाने से जब बापू कभी-कभी बहुत थक जाते और प्रेमपूर्वक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कहते– क्या और सारे काम बन्द करके मुलाकातें ही करता रहूँ ? और, उनके सचिव पूछते– तो क्या आज की मुलाकातें मुल्तबी कर दूँ ? तब बापू तुरन्त कहते– नहीं, जो आ गया, वह लौटकर क्यों जाय ? आने दो उसे।

लोग अपनी भाँति-भाँति की समस्याएँ, तरह-तरह के दुःख-दर्द लेकर पहुँचते। मन्त्रियों के लिए मुलाकात का कोई समय निश्चित नहीं था, वे किसी समय पहुँच सकते। बापू अपने समय से अधिक महत्त्व उनके समय को देते। उनका कहना था कि उन्हें हुकूमत चलानी है न ? अवकाश मिलने पर ही वे आ सकते हैं। जब दूसरों की मुलाकात के बीच कोई मंत्री पहुँच जाते तब लोगों को असुविधा अवश्य होती ; फिर भी मुलाकातियों के लिए बापू समय निकाल लेते। कहने को मुलाकात के लिए घण्टे-दो घण्टे का समय रखा गया था, लेकिन प्रातःकाल से ही यह सिलसिला शुरू हो जाता।

ब्रजकृष्णजी चाँदीवाला के शब्दों में मुलाकातियों के बीच बापू की मार्मिक झाँकी यहाँ प्रस्तुत है। मुलाकात के समय बापू इतने विभिन्न विषयों पर बातें करते कि चकित रह जाना पड़ता। अभी वे आकाश की बातें करते तो दूसरे क्षण पाताल की बातें करने लग जाते। अभी वे गवर्नर जनरल से भारत के भविष्य की बातें करके ही आये कि किसी ने उनके सामने अपने घर के झगड़े छेड़ दिये। पति-पत्नी की नहीं बनती, विवाह किसका किससे हो, घर का खर्च कैसे चले, व्यापार कौन-सा हो आदि बातें तक उनकी मुलाकातों में होतीं। सरदार पटेल और नेहरूजी अभी हुकूमत-सम्बन्धी बातें करके गये ही कि ताड़ का गुड़ कैसे बने, चावल कौन-सा खाना चाहिए,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सब्जी और फल के क्या गुण हैं, प्राकृतिक चिकित्सा से क्या लाभ है, इन विषयों पर बात छिड़ गयी। कोई राजदूत अभी अपने देश की बातें करके गया कि वैज्ञानिक ने विज्ञान की बातें शुरू कर दीं। कभी तारों की बातें चल पड़ती तो कभी एटम बम की, कभी लड़ाई की, तो कभी अध्यात्म की। मतलब यह कि मुलाकातों के विषय इतने भिन्न होते और बापू हर विषय पर इतनी सरलता और जानकारी के साथ बातें करते कि सुननेवाले के मन में अनायास यह प्रश्न उठ खड़ा होता कि क्या वे कोई विश्वकोश हैं, जो सभी बातों का पता रखते हैं ?

बापू की याददाश्त कमाल की थी। हम क्षण भर पहले की बात भूल जाते हैं, मगर उन्हें पचास वर्ष पहले की घटना याद रहती, जैसे वह आज सुबह हुई हो। हजारों व्यक्ति उनसे मिलने आते, लेकिन वे एक बार जिसका चेहरा देख लेते, उसका नाम उन्हें सदा के लिए याद हो जाता। यदि कोई उनकी कही किसी बात का गलत हवाला देने लगता तो वे तुरन्त उसकी भूल पकड़ लेते।

बापू की समय की कठोर पाबन्दी छोटे-बड़े सभी लोगों पर समान रूप से लागू होती। वे स्वयं निश्चित समय पर तैयार हो जाते। यदि कताई या चल रहा अन्य कार्य पहले पूरा हो जाता और मुलाकातियों को दिये गये समय में दस-पाँच मिनट की भी गुंजाइश होती तो वे अभी समय है, जरा सो लूँ--यह कहकर शरीर पर पड़ी चादर ओढ़कर तुरन्त सो जाते और निश्चित समय से आध मिनट पूर्व जाग जाते।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सायंकालीन आहार

बापू को आरंभ में आहार ग्रहण करने में यद्यपि रात के आठ-नौ बज जाते, किन्तु सन् १९१५ से वे सूर्यास्त से पूर्व लगभग पाँच से छः बजे के बीच भोजन कर लिया करते। भोजन के बाद प्रायः कुछ नहीं खाते । देर हो जाने पर शाम को वे कभी-कभी कुछ खाये बिना रह जाते।

उन दिनों वाइसराय से बापू की आवश्यक बात लगभग बीस दिनों तक बेनागे हुई और उनका सारा दिन प्रायः वहीं बीत जाता। कभी-कभी वे बहुत रात बीतने पर लौट पाते। जिस दिन रुक जाते, मीरा बहन उनका भोजन वहीं ले जातीं और वे बातचीत के बीच अपने समय पर आहार कर लेते। सन् १९४४ में बम्बई में मुहम्मद अली जिना से अपनी वार्त्ता के समय बापू शाम का भोजन उनके घर पर मँगवा लिया करते, क्योंकि अक्सर देर हो जाती।

बापू ने सन् १९१५ में हरिद्वार के कुंभ मेले के अवसर पर रात्रि में भोजन न करने का व्रत लिया था। इसमें अपवाद यह था कि भारत के बाहर जाना पड़े तो रात्रि के भोजन का नियम बदला जा सकता है। शीघ्र सोना और शीघ्र उठना—इस दृष्टि से रात्रि-भोजन का त्याग उन्होंने किया था। शाम सात बजे के बाद बापू कुछ नहीं लेते ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जिन्हें जल्दी सोना और जल्दी उठकर कार्यरत हो जाना पड़ता है, उनके लिए किये हुए आहार के पाचन के लिए समय चाहिए। सायंकाल में रात्रि का आहार ग्रहण कर लेने से उपर्युक्त सारी सुविधा हो जाती है। अधिकतर मानव प्राणी से भिन्न प्राणी दिन रहते आहार कर लिया करते हैं। प्रकृति के निकटतम जीवन व्यतीत करने के अभ्यासी बापू की दृष्टि इस विषय पर वहाँ तक भी पहुँची थी!

दक्षिण अफ्रीका के टॉलस्टॉय फार्म में बापू शाम को साढ़े पाँच बजे भोजन करते। उसमें गेहूँ की लपसी, दूध या रोटी और गेहूँ का कहवा— ये चीजें रहतीं। जोहान्सवर्ग में संध्या के ब्यालू में बहुत सादगी रहती। वहाँ पहले दो-तीन साग-भाजियाँ, कढ़ी, दाल, रोटी, मूँगफली या किसी दूसरी चीज का पीसकर बनाया गया कचूमर— ये वस्तुएँ रहतीं। दुबारा दूध और फल आदि लेते। वहाँ वे भोजन की सामग्री मेज पर सजाकर खाने बैठते। अतिथि भी प्रायः उस समय के आहार में सम्मिलित होते।

लंदन में अपनी अस्वस्थता के समय डॉ० एलिन्सन् के परामर्श के अनुसार शाम के आहार में बापू दो चम्मच भात के साथ पूर्वोक्त रीति से कच्चा साग, भिंगाये हुए अंजीर, केले तथा गेहूँ के आटे की रोटी का छोटा-सा टुकड़ा लेते।

कोचरब के सत्याग्रह-आश्रम में शाम को ठीक पाँच बजे भोजन होता। बारहों मास वहाँ यह क्रम चलता। वहाँ बापू पहले सब आश्रमवासियों को खिलाकर स्वयं खाने बैठते। साबरमती में भी सायंकालीन आहार का यही समय था। वहाँ शाम को खिचड़ी, डबल रोटी और साग— ये चीजें विशेष रूप से बनतीं। सेवाग्राम में वे साढ़े

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पाँच-छः बजे भोजन करते। सन् १९४५ से '४६ के मध्य वहाँ वे शाम का भोजन पाँच बजे कर लिया करते। आगा खाँ महल में बा की बीमारी के अंतिम दिनों में वे शाम को लगभग साढ़े छः बजे आहार ग्रहण करते, जिसमें केवल आठ औंस दूध और १ औंस गुड़ होता।

बापू, चीनी के बदले गुड़, अंजीर एवं खजूर का उपयोग करते। बाजारू गुड़ पर मक्खियों आदि के बैठने तथा उसमें मिट्टी, घास आदि का अंश प्रायः रह जाने के कारण, उनके गुड़ को पानी में घोल और कपड़े से छानकर उबाला और गुड़ शेष रहने पर उतार लिया जाता। इस प्रकार उसकी शुद्धि हो जाती। जब वे बोलते-बोलते थक जाते, तब भी, शक्ति बनाये रखने के लिए गुड़ खाया करते।

नोवाखाली में बापू सायंकाल का आहार पाँच बजे किया करते, जो बिलकुल दिन के जैसा होता। दिल्ली में अंतिम दिनों में रात्रि का आहार वे शाम को चार बजे के लगभग कर लिया करते, जिसमें उबाला हुआ साग, थोड़ा संतरा या इसी तरह का कोई रसदार फल और सोलह औंस दूध– ये चीजें होतीं। अपने अंतिम दिन का आहार उन्होंने साढ़े चार बजे ही कर लिया था, जिसमें चौदह औंस बकरी का दूध, चौदह औंस सब्जी का रस और तीन संतरे थे।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सायंकालीन वायु-सेवन

सायंकाल के भोजन के बाद बापू घूमने निकल जाते। किसी कारणवश कभी वे शाम को न टहल पाते तो सोने के पहले अवश्य टहलते। अपनी इसी प्रवृत्ति के कारण, एक बार सन् १९२० में, जब उनका शाम का टहलना न हो सका और आधी रात बीत गयी तब वे आधी रात के बाद टहले।

यरवदा में सन् '३० में बापू शाम को भोजन के बाद नियमित रूप से टहलते। सेवाग्राम में सायंकालीन आहार से निवृत्त होकर वे उसी मार्ग पर प्रातःकाल की तरह टहलने जाते। जाड़े के दिनों में वे शाम को लगभग छह बजे टहलने निकलते।

शाम को बापू लगभग आध घण्टा तक टहलते, किन्तु सन् १९३० में उन्होंने एक बार अपने सायंकालीन वायु-सेवन का समय लगभग दूना कर दिया था, जबकि उन दिनों वे सुबह भी देरतक घूमते। इस पर काका साहब ने उनसे कहा कि स्वास्थ्य पर इसका कहीं विपरीत प्रभाव न हो। उस समय बापू ने बताया कि उनको भीतर से कुछ विशेष शक्ति प्रतीत होने लगी थी। इसीलिए उन्होंने जान-बूझकर वायु-सेवन के समय में वृद्धि की।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बापू .वायु-सेवन को ब्रह्मचर्य-व्रत के पालन का अंश मानते और कहते कि मनुष्य को नित्य प्रातःकाल दिनभर कार्य करने के लिए जो शक्ति प्राप्त होती है, उसे उसको शयन के समय तक खर्च कर डालना चाहिए। यही सच्चा अपरिग्रह है। यदि श्रद्धापूर्वक ऐसा नहीं किया जाता है तो शक्ति विकार का रूप ले लेती है। जब हमें नित्य अपेक्षित शक्ति प्राप्त हो ही जाती है, तब उसे खर्च करने में कंजूसी क्यों की जाय ? उसे क्यों बचाया जाय ? उनकी मान्यता थी कि शरीर में जो वीर्य उत्पन्न होता है, परिश्रम द्वारा पसीने के रूप में उसे निकाल देना या रूपान्तरित कर देना रात्रि में अच्छी नींद आने और विकार से बचने की दृष्टि से अत्यावश्यक है। दूसरे शब्दों में—अपरिग्रह और ब्रह्मचर्य— दोनों दृष्टियों से पूर्ण परिश्रम—खासकर सायंकालीन वायु-सेवन उपयोगी है।

प्रातःकाल की भाँति सायंकाल के वायु-सेवन के समय भी जनसमूह बापू के साथ हो लेता। कभी-कभी तो वे अपने परिवार के अतिरिक्त, आश्रम से सम्बन्धित लोगों के बालकों के साथ निकल पड़ते और उनको दौड़ाकर स्वयं भी उनके साथ दौड़ लगाने लगते। विश्ववंद्य महापुरुष की यह क्रीड़ा अत्यन्त आह्लाददायिनी होती। जो व्यक्ति सदा चिंतनशील हो और जिसके कंधों पर बड़े राष्ट्र का भारी बोझ हो, वह बालकों के साथ क्रीड़ारत रहकर कुछ क्षण मनोरंजन कर ले, यह खासकर चिंतनपरायण बुद्धिजीवियों के लिए अनुकरणीय है।

साबरमती में बापू दोनों समय टहलने निकलते तो साथ के लोगों के कंधों पर हाथ रखते। जिनको यह सौभाग्य प्राप्त होता, वे उनकी 'लाठी' बन जाते। ऐसी मानवी लाठी के सहारे चलने में उनको

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

क्या सुख मिलता, इसे तो वे ही जानते, किन्तु वे 'लाठियाँ' या 'लकड़ियाँ' इसमें जरूर गर्व महसूस करतीं। बापू के दोनों ओर चलने की होड़ में यदा-कदा ये टकराती हुई भी देखी जातीं। नित्य प्रातः-सायं बापू के निवासस्थान 'मगनकुटी' या 'हृदयकुंज' से निकलकर साबरमती केंद्रीय कारागार के द्वार तक जाकर लौटने का उनका नियम था।

बापू यों भी आश्रम के अन्य लोगों की अपेक्षा तेज चलते, परन्तु जेल का फाटक निकट आ जाता और उस समय किसी से उनकी गंभीर बात न चलती होती तो अंतिम पचास गज की दूरी वे मानों दौड़कर तय करते। यदा-कदा साथ के लोग उनका हाथ अपने कंधों से हटाकर दौड़ते हुए आगे पहुँच जाते। लक्ष्य तक पहुँचते समय गति तेज करने में उन लोगों को विशेष सुख मिलता। कभी-कभी लोगों के ऐसा करने से पूर्व ही बापू उनके कंधों पर अपना पूरा भार डालकर पैर ऊपर उठा लेते और कहते– अब दौड़ो तो जानें। ●

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सायंकालीन प्रार्थना

दक्षिण अफ्रीका में शाम के भोजन के बाद सात या साढ़े सात बजे प्रार्थना होती। बापू के भारत लौटने पर आहार तथा वायु-सेवन के पश्चात् प्रार्थना का क्रम चलता। दक्षिण अफ्रीका में नित्य एक-सी प्रार्थना नहीं होती। वहाँ के फिनिक्स आश्रम में सिर्फ शाम को प्रार्थना होती। साबरमती में सन् १९२७ में सायंकालीन प्रार्थना का समय छः-साढ़े छः बजे और सेवाग्राम में सामान्यतः साढ़े सात बजे था। लंदन में गोलमेज--परिषद् के समय बापू शाम सात बजे प्रार्थना करते! वहाँ से भारत लौटते समय बापू इटली में रुके थे—रोमा रोलाँ से मिलने। वे उस समय भी शाम को ठीक सात बजे प्रार्थना करते। वहाँ वे जमीन पर रोशनी की शेड के नीचे चटाई बिछाकर बैठ जाते और उनके इर्द-गिर्द उनके अनुयायी। प्रार्थना में मीरा बहन का गंभीर स्वर विशेष प्रभाव डालता। नोवाखाली-यात्रा के समय शाम की प्रार्थना पाँच बजे होती। वे प्रार्थना के बाद वायु-सेवन के लिए निकलते। दिल्ली में अंतिम दिनों में शाम की प्रार्थना में वे ठीक पाँच बजे पहुँच जाते।

यात्रा या मुसाफिरी में निश्चित समय पर प्रार्थना करने में पहले प्रायः बहुत कठिनाई और गड़बड़ी होती। सन् १९२६ का आंध्र के चिकाकोल नामक स्थान का प्रसंग है। बापू प्रवास में थे। वहाँ रात्रि में

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कत्तिनों का दंगल होने वाला था, जिसे देखने के लिए वे रुक गये। दिन भर की थकावट थी। दंगल से जब वे अपने स्थान पर पहुँचे तब उन्हें नींद आ गयी। रात्रि में दो-ढाई बजे जब उनकी नींद टूटी तब उन्हें याद आया कि आज सायंकालीन प्रार्थना नहीं हुई। उन्हें ऐसा आघात पहुँचा कि उनका शरीर काँप उठा। पसीने से वे तर-ब-तर हो गये। उठ बैठे और पश्चाताप करने लगे। जिनके अनुग्रह से प्राणी जीवित है, उसकी जीवन-साधना चलती है, उन भगवान् का ही विस्मरण हो जाने से उन्होंने इसे अपनी बहुत बड़ी भूल बताते हुए प्रभु से क्षमा-याचना की।

इसके बाद बापू की नींद ही भाग गयी। वे रात भर बैठे रहे। प्रातःकालीन प्रार्थना में उन्होंने कहा कि प्रवास या यात्राकाल में भी हमें अपनी सायंकालीन प्रार्थना निश्चित समय पर करनी चाहिए। दिन भर का कार्यक्रम निबटाकर शयन से पूर्व प्रार्थना करना अनुचित है। उन्होंने घोषणा की कि हम चाहे कहीं भी रहें, सायंकालीन प्रार्थना सात बजे होगी और, इस घटना के बाद बापू और उनके संग-साथ के सभी लोग, जंगल में होते या बस्ती में, शाम की प्रार्थना ठीक सात बजे कर लिया करते।

गोलमेज-परिषद् के समय लंदन में एक दिन सी० एफ० एण्ड्रयूज ने जब बापू से शाम को कुछ अंग्रेज पादरियों द्वारा स्वागत किये जाने तथा सात बजे लंदन के लाट पादरी के आवश्यक कार्यवश आने के सम्बन्ध में कहा, तब उन्होंने तीव्र दृष्टि से ऊपर देखा और कहा– सात बजे की प्रार्थना का क्या होगा ? एण्ड्रयूज बोले– आगे-पीछे कर लेंगे। बापू ने रास्ते में मोटर में ही प्रार्थना कर लेने का निश्चय किया।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सरदार पटेल से बातें करने में तन्मय हो ज़ाने के फलस्वरूप दिल्ली में सायंकाल की अंतिम प्रार्थना-सभा में सम्मिलित होने में बापू को कुछ विलंब हो गया। उस समय भी उनकी आत्मग्लानि स्पष्ट झलक रही थी। काका साहब कालेलकर के शब्दों में– अनिश्चितता, अव्यवस्था और ढीलापन वे बिलकुल सहन नहीं कर सकते थे। कर्त्तव्यपालन में उनकी ओर से कभी प्रमाद नहीं होता और कदाचित् तनिक प्रमाद हो जाता तो वे दुखी होते और अपने प्रति उनकी इतनी नाराजगी होती कि वही बड़ा प्रायश्चित्त होता। सब व्यक्तियों के प्रति क्षमासागर होते हुए उन्होंने अपने प्रति तनिक क्षमा-वृत्ति नहीं धारण की। वे हमेशा कहते कि मनुष्य का सारा जीवन हर क्षण विचारमय होना चाहिए। उन्होंने अपने जीवन में यह साधना पूरी की और इस तरह अपना सारा जीवन प्रार्थनामय बनाया।

स्थितप्रज्ञ एवं अनासक्त होने की बापू की इच्छा और कोशिश बराबर रहती। सतत प्रयास करने से व्यक्ति अवश्य सफल होता है। समस्त आर्यग्रंथ एक स्वर में कहते हैं कि प्रभु का अन्तस्मरण जीवात्मा के विश्वात्मा में विलीन होने की स्पष्ट सूचना है। 'जनम-जनम मुनि जतन कराहीं। अंत राम कहि आवत नाहीं॥' अंतिम समय उनके श्रीमुख से राम शब्द ही निकला था। ऐसी थी उनकी ईश्वर-निष्ठा और जीवन-साधना!

फिनिक्स आश्रम में प्रार्थना में मानवमात्र को पूर्ण संयत तथा विकार-रहित करने और ऊपर उठानेवाले गीता के कृष्णार्जुन के कथोपकथन-रूप में बताये दार्शनिक तत्त्व का पारायण विशेष रूप से होता। दूसरे शब्दों में–गीता के द्वितीय अध्याय के अंतिम उन्नीस

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्लोक पढ़े जाते, जिनमें स्थितप्रज्ञ के लक्षण हैं। बापू के कथनानुसार सत्याग्रही के ये ही लक्षण होने चाहिए। उनकी दृष्टि में स्थितप्रज्ञ और सत्याग्रही—दोनों के लिए यही उपयुक्त साधना है। यह बात नित्य स्मरण रहे, इसीलिए आरंभ से उनकी सायंकालीन प्रार्थना में उन श्लोकों का पारायण होता रहा है।

गीता के श्लोकों के बाद वहाँ कुछ गुजराती और हिन्दुस्तानी भजन गाये जाते। वहाँ उनके आश्रम में विविध धर्मावलंबी थे, जिनमें गोरे ईसाई भी थे। उनके संतोष की दृष्टि से बापू ने कुछ अंग्रेजी सुभाषित चुने थे, जिन्हें वे सबके साथ तन्मय होकर गाते। एक तमिल गीत भी था। इन सबका संग्रह फिनिक्स आश्रम द्वारा 'नीतिनां काव्य' के नाम से प्रकाशित हुआ था। भारत आने पर बापू की सायंकालीन प्रार्थना में गीता के पूर्वोक्त उन्नीस श्लोकों के अतिरिक्त भजन और रामधुन का कार्यक्रम चलने लगा। कभी भजन गाये जाते तो कभी 'रामचरितमानस' के कुछ अंशों का पाठ होता, कभी इस्लाम के धर्मग्रन्थों से कुछ अंशों का पारायण होता। साबरमती में जब स्वामी सत्यदेव परिव्राजक आश्रम के आरंभिक दिनों में थे, तब से प्रार्थना में 'रामचरितमानस' का पाठ शुरू हुआ। सेवाग्राम-आश्रम में शाम की प्रार्थना में मानस के कुछ अंशों का पारायण ठाकुर बलवंत सिंह के आग्रह से शुरू हुआ। बापू की सायंकालीन प्रार्थना में बौद्ध मंत्र, उपनिषद्-मन्त्र, 'यं ब्रह्मा...' वाला श्लोक, गीता अध्याय दो के अन्तिम उन्नीस श्लोक, एकादश व्रत, कुरान की आयतें, जरथोस्ती प्रार्थना, भजन और धुन का समावेश रहता। उन दिनों सायंकालीन प्रार्थना के बाद कुरान शरीफ की आयतें पढ़ी जातीं, तो एकाध भाइयों के द्वारा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उसका विरोध होता। यह देखकर बापू को दुःख होता। सो, उन्होंने कुरान की आयतें शुरू में पढ़ने का नियम बना दिया और प्रार्थना के बड़े समुदाय में से किसी के द्वारा विरोध करने पर वे प्रार्थना ही बंद कर केवल प्रवचन करते।

एक बार एक भाई ने बापू की सायंकालीन प्रार्थना-सभा का बहुत मार्मिक चित्रण इन शब्दों में किया था– प्रार्थना के समय विशाल क्षेत्र के खुले प्रांगण में, वर्तुलाकार रेती पर जनसाधारण और आश्रम-निवासियों के बीच, एक छोटे-से लकड़ी के पटरे के सहारे बैठे बापू ऐसे मालूम होते, मानों ग्रन्थों में वर्णित वैदिक युग का कोई ऋषि अपनी शिष्यमण्डली के साथ आसीन हो। प्रार्थना की घण्टी बजते ही जब अपने-अपने कार्यों में दक्ष, भिन्न-भिन्न प्रदेश, जाति और देश के लोग प्रार्थना-स्थल की ओर दौड़ते, तब ऐसा प्रतीत होता, मानों कोई महामानव सबको अपने में मिला लेने का आह्वान कर रहा हो। मानों रवीन्द्रनाथ के शब्दों में कह रहा हो– ऐ हिन्दू, मुस्लिम, बौद्ध, पारसी, ईसाई और अंग्रेज– तुम सब आओ। मनुष्यों का महासागर भारत तुम सबका स्वागत करता है और, फिर रात्रि की निस्तब्धता में साथ लायी हुई लालटेनों का प्रकाश भी जब मद्धिम कर दिया जाता, तब सचमुच रूप और रंग से परे उस मनुष्यों के समुदाय में अपने अधखुले बदन पर श्वेत खादी वस्त्रों के बीच, सत्य व शांति के आशीर्वाददाता की तरह, पालथी मारे शांत, अडिग, ध्यानस्थ और स्थितप्रज्ञ बापू ऐसे लगते, मानों साक्षात् बुद्ध हों।

आश्रम में कातना सब के लिए अनिवार्य था। दिन भर में काते गये सूत के तारों का हिसाब सायंकालीन प्रार्थना के बाद लिखाया जाता। यही उपस्थिति समझी जाती।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रवचन और हरिजन-सेवा

सन् १९२६ में साबरमती-आश्रम में शाम की प्रार्थना के अनन्तर बापू आश्रमवासियों को अपनी मातृभाषा गुजराती के माध्यम से नित्य 'रामचरितमानस' पढ़ाते। दोपहर के विश्राम के बाद वे 'मानस' का अध्ययन करते। उस दिन शाम को पढ़ाई जानेवाली पंक्तियों को वे अच्छी तरह पढ़ लिया करते। बाद में प्रार्थना के पश्चात् कुछ-न-कुछ सदुपदेश देने, आश्रम की व्यक्तिगत अथवा राष्ट्रीय समस्याओं पर प्रवचन करने, आध्यात्मिक विषयों पर बोलने तथा देश-विदेश के मानव-समूह को लक्ष्यकर उचित मार्ग-दर्शन करने का उनका क्रम आरंभ हुआ। यह विशेष रूप से सन् १९४४ में आगा खाँ जेल से छूटने पर शुरू हुआ। जीवन-दीप बुझने के एक दिन पूर्व तक यह सिलसिला जारी था।

साबरमती में सायंकालीन प्रार्थना में बाहर के अत्यधिक लोग सम्मिलित होते। वहाँ बापू के प्रातःकालीन प्रवचन गंभीर एवं अन्तर्मुख और सायंकालीन प्रवचन आश्रम एवं राष्ट्र की रचनात्मक प्रवृत्ति से सम्बन्धित हुआ करते। यात्रानुभव एवं आगामी कार्यक्रमों की चर्चा भी प्रायः प्रवचनों का विषय होता। आश्रम के सभी लोगों से सामूहिक रूप से वार्त्तालाप करने का वही एक अवसर उनको मिलता। वे उस समय

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अधिकांश व्यावहारिक चर्चा करते। यदा-कदा उस समय बापू विद्यार्थियों को बहुमूल्य सीख दिया करते। उनके लिए सभी बातों का समान महत्त्व था।

सेवाग्राम में सायंकालीन प्रार्थना-सभा सार्वजनिक मानी जाती। बापू सामने अकेले बैठते। उनकी बायीं ओर बहनें, दाहिनी ओर भाई लोग और उनके सामने प्रार्थना करानेवाले, रामायण का भावार्थ समझानेवाले खास लोग बैठते। अतिथि अन्य लोगों के साथ ही बैठते।

प्रार्थना के बाद बापू किसी महत्त्वपूर्ण घटना या परिस्थिति को अपने प्रवचन का विषय बनाते। आश्रम या सार्वजनिक समस्याओं से सम्बन्धित घोषणा भी वे कभी-कभी उस अवसर पर करते। ऐसी कुछ बहुमूल्य जानकारी प्राप्त करने की उत्सुकतावश उनकी वहाँ की सायंकालीन 'सभा' में भारी समूह उपस्थित होता।

साबरमती में आश्रम के आरंभ में गुजरातीभाषियों की संख्या अधिक थी। तब बापू गुजराती में बोलते। बाद में अन्य प्रदेश के लोगों की संख्या वहाँ बढ़ने लगी। उन दिनों जमनालालजी बजाज भी आश्रम में आने लगे। उनके लिए न केवल मारवाड़ी और हिन्दी, अपितु गुजराती और मराठी भाषाएँ समान थीं। उन्होंने बापू से आश्रम का समस्त कार्य राष्ट्रभाषा हिन्दी में चलाने का अनुरोध किया। उन्होंने स्वीकार कर लिया और तभी से आश्रम एवं प्रार्थना-प्रवचन की भाषा हिन्दी बन गयी।

बापू की प्रार्थना-सभा जनसाधारण को शिक्षित करने एवं लोकमत जागृत करने का सुन्दर साधन था। इसकी पूर्त्ति समाचारपत्रों अथवा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पुस्तकों के द्वारा नहीं हो सकती। यह कार्य वे अपनी दैनिक प्रार्थना-सभा से कर देते। यदा-कदा वे अपने नाम आये पत्र उस समय पढ़कर सुनाते और उनके उत्तर दे दिया करते। उनकी प्रार्थना-सभा में आनेवाले अनेक महान् विद्वान् एवं विदेशी उनके प्रवचनों को सुनकर तथा जन-साधारण का उनके प्रति असाधारण आदर भाव देखकर चकित रह जाते।

सायंकालीन प्रार्थना-प्रवचन के अनन्तर बापू हरिजन-कोष के लिए झोली फिरवाया करते। इससे प्रति वर्ष लगभग दो लाख रुपयों की आय हो जाती। उसी समय उनके निकट हस्ताक्षर करानेवालों का झुण्ड पहुँच जाता। हस्ताक्षर-शुल्क वे पाँच रुपया लेते। यह आय हरिजन-कोष में जमा होती। एक बार एक श्रद्धालु ने उनको हस्ताक्षर-शुल्क-स्वरूप पाँच सौ रुपयों का चेक भेंट किया था।

रेल-यात्रा में भी बापू का यह क्रम चलता। उस समय जब वे जनता को दर्शन देने के लिए खिड़की पर आते तब चंदा प्राप्त करने के लिए हाथ फैला दिया करते। हरिजन-यात्रा के समय से सन् १९३४ से यह क्रम शुरू हुआ और अंत तक जारी रहा। यदा-कदा ऐसा होता कि बापू कुछ लिख रहे हैं कि स्टेशन आ गया तो लेखन जारी रखते हुए वे एक हाथ खिड़की से बाहर निकालते और बिना कुछ कहे देखते-देखते रुपयों तथा छोटे-मोटे गहनों का ढेर लग जाता। बाद में वे आभूषण नीलाम कर दिये जाते। प्यारेलालजी के शब्दों में बापू का यह पुराना रिवाज था। इस प्रकार देश की जनता मानों साक्षात् दरिद्रनारायण की पूजा करती।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बापू अस्पृश्यता का आरंभ से अंत तक विरोध करते रहे। उसके निवारण का कार्य उनके जीवन का प्रमुख अंग बना रहा। बचपन में उनके हृदय में यह बीज अंकुरित हो चुका था कि कोई मानव अछूत या अस्पृश्य नहीं। उनके इन विचारों ने क्रियात्मक रूप लिया दक्षिण अफ्रीका में। इसके कारण उनके परिवार में तूफान उठ खड़ा हुआ। वहाँ से लौटने पर जब कोचरब-आश्रम स्थापित हुआ, इस कार्य ने उनके जीवन में स्थायी रूप ग्रहण कर लिया। इस समस्या पर उन्होंने कई बार अपने जीवन की बाजियाँ लगायीं, अपने पत्रों का नाम 'हरिजन' रखा और यहाँ तक कामना की कि यदि उनका पुनर्जन्म हो तो हरिजन के यहाँ हो। ●

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

डायरी-लेखन और माला-जप

शयन से पूर्व बापू आश्रम की व्यवस्था तथा उसके हिसाब-किताब की जाँच करते, कुछ लिखते-पढ़ते और सार्थक चर्चा करते। पैसे-पैसे का वे हिसाब माँगते। सच्चे अर्थों में वे सार्वजनिक धन के सजग प्रहरी थे। लिखने-पढ़ने में डायरी-लेखन का मुख्य स्थान होता।

बापू दिनचर्या का क्रम बनाकर और नियमपूर्वक डायरी लिखकर अपने जीवन के सभी कार्य संतुलित रखा करते। आश्रमवासियों के लिए उनका यही आदेश सदा रहता। सत्य एवं नैतिकता के हर साधक के लिए डायरी-लेखन वे आवश्यक मानते।

डायरी-लेखन बापू की आत्मपरीक्षण या आत्मशुद्धि की निरन्तर प्रक्रिया थी। अपने लिए उसे वे बहुमूल्य वस्तु मानते। कहते कि सत्य के आराधक के लिए वह रखवाले का काम करती है, क्योंकि उसमें सत्य का उल्लेख होता है। आलस्य या पूरा काम न करने पर भी उसमें स्पष्ट उल्लेख किये बिना चल नहीं सकता। इस तरह वह हर प्रकार से हमारे रक्षक या पहरेदार की भूमिका अदा करती है। वे इसका महत्त्व महसूस करने पर हमेशा बहुत बल दिया करते। कहते कि एक बार नियमपूर्वक लिखना आरंभ करने पर खुद सारी बातें अपने-आप सूझने लगती हैं; किन्तु मुख्य बात सत्य की है, जिसके कारण वह स्वर्ण की मुहर से भी मूल्यवान् हो जाती है। असत्याचरण या सत्य के अभाव में उसे वे मुहर के बजाय खोटे सिक्के की संज्ञा देते।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बापू, डायरी बे-नागे, नियमित लिखने को कहते। उनके अनुसार इसका लाभ तत्काल नहीं, बाद में ज्ञात होता है। बताते थे कि इस नियम का पालन करने से हम अनेक दोषों से बच सकते हैं, क्योंकि वह हमारे अपराधों अथवा हमारी त्रुटियों की साक्षी होती है। अपने दोषों का उसमें अवश्य जिक्र होना चाहिए, किन्तु दूसरों के दोषों का जिक्र तथा उनकी आलोचना करने की आवश्यकता नहीं। आत्मप्रशंसा को भी उसमें स्थान नहीं मिल सकता। किये गये कार्यों और बन बड़े अपराधों का उल्लेख मात्र होना आवश्यक है।

बापू का यह भी कथन था कि रोज-रोज डायरी लिखने से ऊबना और उसमें 'इत्यादि' जैसे शब्द का उल्लेख सर्वथा अनुचित है। हमारा सारा कार्यक्रम पूरी तरह व्यवस्थित रहे– समय पर हमारे सभी काम सम्पन्न हों, तो डायरी लिखने में कठिनाई उपस्थित होने का कोई प्रश्न नहीं। इस प्रसंग में वे सूर्य के नित्य उदय होने की मिसाल देते हुए उससे सबक लेने को कहते। उनका कथन था कि मनुष्य को यंत्र बनकर नहीं, बल्कि यंत्र की भाँति अपने कार्यों को पूरा करना चाहिए। सर्वविध सफलता के लिए यह अमोघ अस्त्र है।

डायरी को न इतिहास कहना संभव है, न आत्मकथा, लेकिन इन दोनों का जितना प्रभावी संयोग डायरी में होता है, उतना किसी अन्य विधा में नहीं। डायरी की प्रत्येक घटना या उसके हर प्रसंग से उसके लेखक का व्यक्तित्व कुछ इस प्रकार जुड़ा रहता है कि जहाँ उससे इतिहास के कई पहलू स्पष्ट होते हैं, वहीं उसकी जीवनयात्रा का चित्र भी बनता रहता है। यह चित्र यदि निष्ठापूर्वक प्रस्तुत किया गया हो तो आत्मकथा से कम सरस या निमग्नकारी नहीं होता। साथ ही, यदि डायरी लेखक अंतर्मुखी प्रवृत्ति का हो तो डायरी रूपी चित्रों से वह सुशोभित हो सकता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

डायरी स्वयं से स्वयं की बातचीत है। दर्पण में हम तन देखते हैं, डायरी में मन। इस कारण उसमें समाविष्ट होनेवाला निजत्त्व या आत्मीयता पत्र के निजत्त्व या आत्मीयता से आगे की चीज है। डायरी-लेखन का कार्य बापू के शब्दों में सत्य की आराधना के समान है और सत्य का उनसे बड़ा आराधक इस युग में या इस शताब्दी में दूसरा कौन हो सका ?

शयन से पूर्व, अंतिम कार्य के रूप में बापू अपने राम को अवश्य स्मरण करते। उनके बिस्तर पर तकिये के पास उनकी माला रहती। जब वे अफ्रीका में थे, तब भी राम-नाम की माला जपा करते। अंत तक उनका यह क्रम चलता रहा, किन्तु उनके जीवनकाल में इस तथ्य की जानकारी बहुत कम लोगों को थी। उनका जीवन पुस्तक के खुले पृष्ठों के समान था। वे रात-बिरात चुपके-चुपके राम-नाम जपा करते। उनका जप आत्मसंतोष के लिए होता और वे यह नहीं चाहते थे कि कोई दिखावे के लिए उनका अंधानुकरण करे।

एकाध बार खास समय और संख्या के लिए वचनवद्ध होने का प्रसंग आने पर बापू ने ऐसा करने से स्पष्ट इनकार कर दिया था, क्योंकि वे रात-दिन जो-कुछ करते, सब राम-नाम के लिए करते। इसका मतलब यह नहीं कि वे निश्चित संख्या और समय के विरुद्ध थे, बल्कि ऐसे आयोजनों की मुक्तकण्ठ से प्रशंसा करते। उनकी मान्यता थी कि जप करनेवालों में यदि कुछ लोग भी हृदय से जप करनेवाले निकले तो उनका तथा देश का बहुत कल्याण होगा। 'कल्याण'-सम्पादक भाईजी हनुमानप्रसाद पोद्दार से एक भेंट-वार्त्ता में बापू ने उपर्युक्त विचार प्रकट किये थे।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रामनाथ 'सुमन'जी ने एक बार कहा था और बिलकुल सही कहा था कि बापू परम भागवत थे। चैतन्य-प्राप्ति के पश्चात् कभी उन्होंने भगवान् का विस्मरण नहीं होने दिया। आँधी में, पानी में, यात्रा में, अत्यंत व्यस्तता में कभी वे इसे नहीं भूलते कि उनका अपना कुछ नहीं है, जो है राम का है, राम-द्वारा ही प्रेरित एवं प्रवर्त्तित है और राम के लिए ही है। अपना कोई कर्त्तृत्व नहीं, वही राम उनसे काम ले रहा है।

बहुत-से बुद्धिवादी साथियों एवं सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओं को बापू की इस वृत्ति पर आश्चर्य होता, किन्तु अनुभव से बापू की निष्ठा इतनी दृढ़ हो गयी थी कि अपने उत्तर जीवन में उन्होंने और सब अवलम्ब छोड़ दिये थे और बच्चा जैसे माँ के आँचल से चिपटकर सब-कुछ भूल जाता, ऐसी स्थिति उनके मन की हो गयी थी। संसार ने, युगों तक साथ काम करनेवालों ने सिद्धान्त एवं मनोजगत् में उनका त्याग कर दिया था। इससे वे सब अवलंबों का जो अवलम्ब है और सब प्रकार के सहारे जब छूट जाते हैं, तब भी जो एक सहारा—सब सहारों, सब अवलम्बों का मूल रह जाता है, वही उन्होंने पकड़ लिया था। उनके मन-प्राण 'निरालम्बमीशं'—सब बल जब थक जाते हैं, उस वक्त हारे हुए के एकमात्र बल ('...सब बल हारे को हरि नाम') राम को सर्वांग रूप से ग्रहणकर ऊर्जस्वित एवं आलोकित हो उठे थे।

राम नाम बापू को इतना सिद्ध हो गया था कि उत्तर जीवन में उठते-बैठते, चलते-फिरते वह जप स्वतः चलता रहता। यह प्रायः वही स्थिति है, जिसे संतों ने 'अजपाजप' कहा है। इस अवस्था में माला

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भी विघ्न-रूप हो जाती है। वे स्वयं स्वीकार करते कि जब माला उनको राम-नाम जपने में मदद करती, तब माला जपते। जब वे इतने एकाग्र हो जाते कि वह विघ्नरूप मालूम होती, तब उसे छोड़ देते। ●

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शयन

बापू साधारणतः रात में नौ बजे शयन करते। उनके शयन का यह समय आरंभ से निश्चित-सा था। कोचरब-आश्रम के प्रारंभिक दिनों में बिस्तर पर जाते ही वे नहीं सो पाते। वहाँ उस समय अस्पृश्यता-निवारण पर बा से उनकी चर्चा होती। कभी-कभी बहुत रात तक दोनों में बहस होती रहती। एक बार सन् १९३२ में यरवदा जेल में दिन में काफी थके रहने के कारण वे आठ बजे के पहले ही सो गए, किन्तु लंदन में द्वितीय गोलमेज-परिषद् के समय सन् १९३१ में अत्यन्त व्यस्त रहने के कारण आधी रात से पहले शायद ही कभी सो पाते। वहाँ उनको काम करते-करते रात दो बज जाते। उन दिनों मुश्किल से कुल मिलाकर चार घण्टे से अधिक वे नहीं सो पाते। अन्तिम दिनों में भी उन्हें ग्यारह-साढ़े ग्यारह बजे तक जागना पड़ता, इसके बाद वे सो पाते। रात में दो-तीन बार उनकी आँखें खुलतीं, किन्तु जल्दी ही फिर नींद आ जाती।

प्रति दिन रात्रि में शयन के समय बापू के सिर में गरी या आँवले जैसा सादा तेल लगाया जाता। अत्यन्त व्यस्त रहने के कारण बा को उनसे पाँच मिनट बात करने का भी समय नहीं मिल पाता। एक बार बा ने उनसे यह शिकायत की। उन्होंने रात में सोते समय सिर में तेल

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लगाने के व्याज से बातें करने का उनको वचन दिया और वे यह कार्य करती रहीं। बा को अवकाश न रहने पर उनके आदेश से ही कोई दूसरा यह कार्य कर सकता, किन्तु बापू की सेवा सुचारु रूप से हो रही है या नहीं, इसका वे पूरा ख्याल रखतीं। बापू की सेवा के ऐसे अवसर प्यारेलाल जी, कनु भाई और मनु बहन को भी मिले थे। दिल्ली में अन्तिम दिनों में मनु बहन यह कार्य करतीं। सन् १९३२ में यरवदा में संभवतः महादेव भाई देसाई को यह सौभाग्य मिला।

आभा बहन, सुशीला बहन, मीरा बहन, ठाकुर बलवन्त सिंह और ब्रजकृष्ण चाँदीवाला जैसे बापू के निकट सम्पर्कीय जन सोते समय उनके चरण दबाया करते। अन्य भाई-बहनों को भी उनकी चरण-सेवा के ऐसे अवसर मिल जाते। प्यारेलालजी का कथन अक्षरशः सही है कि यह सब करने में उन्हें अपना नहीं, बल्कि सेवकों की भावनाओं का अधिक ख्याल रहता, यद्यपि उनके शरीर को इन छोटी-मोटी सेवाओं की जरूरत थी।

वृद्धावस्था के कारण जाड़े के दिनों में बापू का शरीर और पैर बहुत ठण्डे हो जाते। अतः शयन के समय, खून की गति बढ़ाने, ठीक करने या शरीर में गरमी पहुँचाने की दृष्टि से कुछ क्षणों तक वे व्यायाम करते। उनका यह व्यायाम जिमनाजियम के पैरेलल बार की भाँति होता। दो बहनों के कन्धों के माध्यम से वे उस क्रिया को करते। रक्तचाप के कष्ट को दूर करने के लिए पहले वे कई प्रकार के यौगिक आसनों का अभ्यास किया करते।

कड़ाके की सरदी और बरसात में भी बापू खुले में सोते और बहुत आवश्यकता पड़ने पर रात में कुछ ओढ़ते। दक्षिण अफ्रीका में

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ऐसा होता, बल्कि उसके पूर्व से वे इसके अभ्यस्त थे। एक बार यरवदा जेल में महादेव भाई से इस विषय पर उनकी चर्चा हुई। उस समय उन्होंने बताया कि अफ्रीका में कड़ी सरदी में ही नहीं, बरसात में भी वे खुले में सोते; किन्तु सख्त ठण्ड मे अच्छी तरह ओढ़ने की व्यवस्था रहती। मि० कलनबक काफी कम्बल इकट्ठे कर लेते और बरसात के समय ऊपर मोमजामे के कपड़े की तरह कुछ लगा लेते, जिससे पानी बह जाता। मुँह ढँकने के लिए भी युक्ति सोच ली थी।

सन् १९२९ में कुछ समय तक बापू हिमालय के कौसानी नामक स्थान में थे, जहाँ सरदी और कुहरा दोनों की बहुतायत रहती। उस समय गरमी का मौसम था। बापू वहाँ बरामदे में सोते। साबरमती में उनकी खाट कुटिया (हृदयकुञ्ज) और साबरमती नदी के बीच में किनारे के थोड़े-से मैदान में लगा करती। सन् १९२९ में एक बार जाड़े के दिनों में वहाँ वे अपनी उक्त कुटिया के बरामदे में सोये थे।

'गोलमेज' के समय लंदन में भयंकर शीत के समय बापू जमीन पर बिस्तर लगाकर सोते। भारत से लंदन जाते समय समुद्री जहाज पर तीसरे दर्जे के यात्रियों की तरह खुले आकाश के नीचे बापू सोते। खुले डैक पर उन्होंने अपना आसन जमाया। वहीं उनका प्रार्थना, भजन, सूत्रयज्ञ आदि का क्रम चलता। समुद्री लहरों की ताल के साथ जहाज पर उनकी रामधुन चलती और शोरगुल के बीच भी वे लिखते-पढ़ते। सन् १९३० में यरवदा में वे बगीचे के बीच खुले में सोते। सेवाग्राम में उनका बिस्तर प्रार्थना-भूमि पर खुले मैदान में लगता। वहाँ उनके इर्द-गिर्द अन्य लोग सोते। बाद में जनसंख्या में इतनी वृद्धि हुई कि प्रार्थना-भूमि रेलवे के मुसाफिरखाने जैसी हो गयी। वहाँ कुछ लोग इधर, कुछ उधर और कुछ पैरों के पास सोते।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बापू का कहना था कि खुली जगह में दो-तीन घण्टे की नींद छत के तले ली जाने वाली सारी रात की निद्रा की पूर्त्ति कर देती है। खुले में अधिक लोगों के सोने से किसी प्रकार की हानि नहीं हो सकती, जब कि छत के तले ऐसा होने पर वहाँ की वायु दूषित हो जाती है। खुली जगह में अंदर से निकलने वाली दूषित वायु खुले आकाश में पहुँच जाती और स्वच्छ वायु प्राप्त होती रहती है। खुले में शयन करने का सर्वाधिक लाभ तो वे आकाश-दर्शन का बताते, जो तन और मन दोनों के लिए लाभदायक होता है।

बापू का कहना था कि ब्रह्मचर्य का पालन करनेवाले को खुली जगह में शयन करना चाहिए। बरसात के अलावा वे छत के तले सोने की आवश्यकता नहीं बताते, ओस तथा शीत से रक्षा होने भर वस्त्र भले ही रख सकते हैं। इसी प्रकार बरसात के समय एक छतरी-सरीखी छाया की व्यवस्था करने के पक्ष में वे थे ; किन्तु इसके अलावा सदा खुले आकाश की छतरी के तले सोने को कहते, जिसमें असंख्य तारे जड़े रहते हैं। ऐसा करनेवाला आँख खुलते ही हर क्षण नित-नवीन दृश्य का अवलोकन करता है। उसकी आँखें कभी ऐसा करते हुए चौंधिया नहीं सकतीं, वह ऊब नहीं सकता, अपितु उसके नेत्रों को शीतलता प्राप्त होती और भव्य तारकमण्डल उसे घूमता हुआ दृष्टिगोचर होता है। अपने हृदय को साक्षी करके और उससे मैत्री स्थापित करके सोने वाला व्यक्ति कभी अपवित्र विचारों के चक्कर में नहीं पड़ सकता और उसे शांत निद्रा आती है।

बापू खुले में धूल और गंदगी से भरी हवा लेने, धूल तथा सरदी से बचने के लिए सिर से पैर तक ओढ़ने और मुँह से साँस लेने के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विपक्ष में थे। नथुनों के जरिए छनकर और स्वच्छ होकर हवा फेफड़ों में पहुँचती है और वह उतनी गरम होती है, जितनी होनी चाहिए।

बापू, नारियल की रस्सी की बनी खाट को निवाड़ की खाट की अपेक्षा अधिक उपयोगी मानते। सेवाग्राम में उनके बैठने और सोने का विशेष प्रकार का तख्ता था, जिसके दो भाग थे। एक पर बैठकर वे पैर फैला सकते और दूसरा सोते समय सिरहाने तथा बैठते समय पीठ के सहारे का काम देता। उस सहारे पर एक गादी लगी रहती, जिस पर वे सोते। अफ्रीका के टॉलस्टॉय फार्म में खाट जैसी कोई चीज नहीं थी और उनका तकिया वहाँ भी काठ का होता। वहाँ जेल में तकिये का काम वे पुस्तकों से लेते। पहले वे तीन तकियों का व्यवहार करते।

सेवाग्राम में, मलेरिया के मच्छरों के प्रकोप के समय बापू साधारण मच्छरदानी का उपयोग करते और रात में मच्छरों से बचने के लिए अपने शरीर, विशेषकर हाथ-पैरों में मिट्टी का तेल लगाते। उन दिनों वहाँ साँप और बिच्छुओं का विशेष उपद्रव था। रात को सोते समय वे अपने पास पोटैशियम परमैगनेट, इमली का सत्त्व तथा ब्लेड–चिकित्सा की दृष्टि से रखते। उनके बिस्तर के पास पीने का जल, पीकदान रहते।

बापू का शयन का समय कुछ हँसने-हँसाने का होता। उनका सात्त्विक विनोद प्रायः चलता रहता। महादेव भाई के कथनानुसार हास्य-विनोद ही उनका एकमात्र मित्र था। स्वयं बापू ने भी स्वीकार किया था कि उनमें यदि यह वृत्ति न होती तो उनका जीवित रहना असंभव था। यही बात बापू की अनासक्त निद्रा के सम्बन्ध में है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

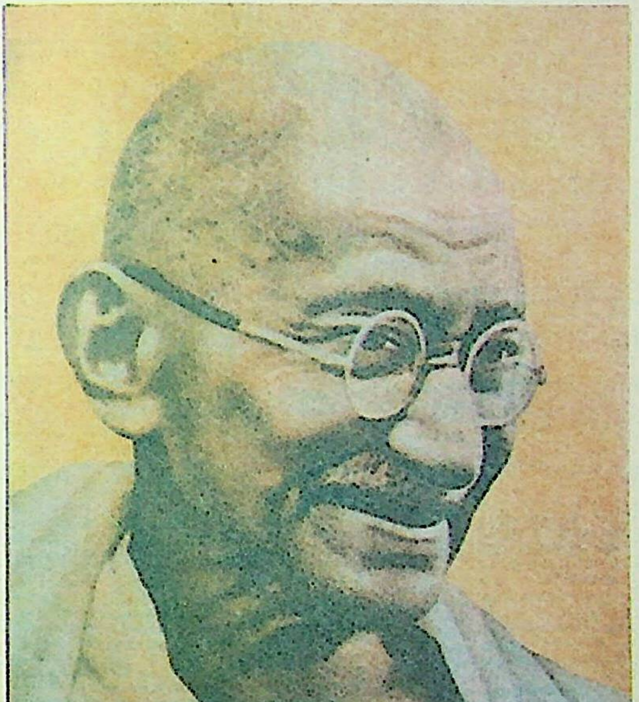

बापू की प्रसन्न मुद्रा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ईश्वर- प्रदत्त इस शक्ति के रहने तक ही वे अपनी कुशल और उसके क्षीण होने पर अपना पतन बताते।

बापू के देहावसान से लगभग डेढ़ वर्ष पूर्व (जून ३०, सन् '४६) का प्रसंग है। वे बम्बई से पुणे जा रहे थे। बीच में रेल की पटरियों पर पत्थर रखने के कारण गाड़ी पटरी से फिसल गयी। बापू सो रहे थे। गाड़ी के धक्के से वे जाग गए। उन्होंने पूछा—क्या बात है ? और, तुरंत वे गहरी नींद में सो गये, मानों कुछ हुआ न हो।

इसी प्रकार सन् १९३० में, जब बापू दाण्डी-यात्रा में थे, उन दिनों देश के लाखों लोग रातभर नींद नहीं ले पाते। सरकारी कर्मचारी अपनी चिंताओं के कारण ऐसा नहीं कर पाते, देश के स्वयंसेवकों को कार्य-साधन की चिंता सताती, जिससे उनकी नींद उचटजातींऔर लक्ष-लक्ष भारतीय दाण्डी-यात्रा के संवाद तथा उसके परिणाम से परिचित होने की उत्सुकता के कारण शयन नहीं कर पाते। उन दिनों भी यदि कोई व्यक्ति सही समय पर और निश्चिंतततापूर्वक गाढ़ी नींद ले पाता तो वे बापू ही थे।

आखिर एक दिन उनसे कोई प्रश्न कर ही बैठा—आपने सम्पूर्ण देश की नींद हराम कर डाली है और स्वयं इस प्रकार निश्चित समय पर गहरी निद्रा में लीन हो जाते हैं ! इसका क्या रहस्य है ? बापू का उत्तर था—देखो भाई, जब सोने लगता हूँ, तब अपने प्रभु को स्मरण करता हूँ। अपने राम से कहता हूँ—हे मेरे राम ! तेरे काम की गठरी दिन-भर मैंने पूरी ईमानदारी से सम्हाली है, अब मैं आराम करने जा रहा हूँ ; सो अब अपनी गठरी तू सम्हाल ! और, सारी चिंताओं का बोझ भगवान को सौंपकर निश्चिंत सो जाता हूँ। ●

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मौन

बापू , बाईस वर्षों तक दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों की सेवा करने के अनंतर सन् १९१५ में भारत लौटे। यहाँ आने पर जनमानस के अध्ययन की दृष्टि से अपने राजनीतिक गुरु गोखलेजी के आदेशानुसार वे एक वर्ष तक देशभर में मौनपूर्वक भ्रमण करते रहे। इस अवधि में उन्होंने लोगों से विचार-विमर्श किया और लेख लिखे, किसी कार्य का श्रीगणेश नहीं किया। बाद में सन् '१६ से उन्होंने स्वराज्य एवं जन-जागरण का कार्य आरंभ किया। उनको भाषण, लेखन तथा पत्राचार करना पड़ा। स्थान-स्थान पर विभिन्न भाषाओं में भाषण, चर्चा तथा भेंट-वार्त्ता करते-करते उनकी वाणी और कण्ठ, दोनों में इतनी थकावट आ गयी कि उन्हें इन दोनों को विश्राम देने की आवश्यकता का अनुभव हुआ और सन् १९२१ से उन्होंने प्रत्येक सोमवार को चौबीस घण्टे का मौनव्रत आरंभ किया। कुछ काल के अभ्यास के पश्चात् उन्होंने इसके मानसिक तथा आध्यात्मिक महत्त्व का अनुभव किया। सहसा उन्हें ऐसा आभास हुआ कि परमात्मा से सम्पर्क बनाये रखने का सर्वश्रेष्ठ मार्ग मौन ही है। बाद में उन्होंने इसे अपने स्वभाव का अंग महसूस किया।

मौन-व्रत आरंभ करते समय बापू ने अपने लिए एक अपवाद रखा और वह यह कि स्वयं को असह्य शारीरिक पीड़ा होने या किसी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्य की शारीरिक अथवा मानसिक पीड़ा-निवारण करने की स्थिति उत्पन्न होने पर वह भंग हो सकता। वाइसराय तथा देश के प्रमुख नेताओं से मौनवार को ही अत्यावश्यक वार्त्ता की स्थिति आने पर वे या तो मौन-व्रत शीघ्र आरम्भ करते, जिससे सोमवार की शाम तथा रात्रि में बोल सकते अथवा सोमवार को प्रातःकाल आवश्यक वार्त्ता निबटाकर कुछ देर बाद मौनारम्भ करते और चौबीस घण्टे व्यतीत करके मंगलवार को मौन त्याग करते। सोमवार को अत्यावश्यक वार्त्ता का कार्यक्रम होने पर वे कभी-कभी एक दिन पूर्व—रविवार को मौन रहते। सामान्यतः हर रविवार की शाम को वे मौन शुरू करते जो सोमवार की शाम तक चलता। महादेव भाई की गंभीर बीमारी के समय बापू ने अपना मौन भंग कर दिया था। मगनलाल भाई के देहावसान के पश्चात् बापू ने सर्व प्रथम मौन तोड़ा था। इसी प्रकार ७ जून सन् '४२ को रविवार था। अगले दिन पं० जवाहरलाल नेहरू को उनसे बातें करनी थीं, अतः उन्होंने रविवार को मौन रखा।

काका साहब कालेलकर के शब्दों में सिद्धांत-निष्ठा के साथ व्यवहार को सँभालने की बापू की खूबी सचमुच अद्भुत् थी। कई लोग व्यवहार की अनिवार्यता की दुहाई देकर सिद्धांत को छोड़ देते हैं। बापू को यह पसंद नहीं था। अपनी शक्ति-अशक्ति का ठीक हिसाब कर वे सिद्धांत को स्वीकार करते; लेकिन एक बार जिस सिद्धांत को स्वीकार किया, उसके पालन के लिए वे अपनी पूरी शक्ति लगाते, सिद्धांत को ढीला नहीं होने देते।

मौन-काल में साधारणतः कोई बापू के पास बात करने नहीं जा सकता, किन्तु बहुत ही अनिवार्य होता तो वे मिलते और भेंट-कर्त्ता को

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लिखकर उसकी बातों का उत्तर देते। अपने 'हरिजन' पत्र के लिए अधिकतर सोमवार को वे लिखते, यों नित्य ही उसके लिए उन्हें कुछ-न-कुछ करना पड़ता। उस दिन वे अपने हृदय के विचारों को कागज पर उतारते या कुछ चिंतन करते। जिन कामों को न निबटा पाते, उनको उस दिन पूरा करते। इस प्रकार मौन-व्रत धारण कर भीड़ से सदा घिरे रहते हुए असंख्य जनों के मध्य रहते हुए भी वे मुनिवत् एकांतवास कर लेते। ●

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उपवास

बापू के उपवासों का ऐतिहासिक महत्त्व है। भारत में वे उपवास के मूर्धन्य आचार्य माने जाते हैं। उन्होंने अपने जीवन में कुल मिलाकर सत्रह उपवास किये, जिनमें इक्कीस-इक्कीस दिनों के कई उपवास सम्मिलित हैं।

उपवास बापू के रक्त में घुला-मिला था। इसे उन्होंने अपनी माता के दूध से प्राप्त किया था। उनकी ही भाँति भय एवं विपत्ति में, रोग तथा व्याधि में—उपवास से ही वे सुख और शांति प्राप्त करते। उपवास से घबराने के वे विरुद्ध थे। इसे वे यम-नियम का अंग बताते। साथ ही वे इसे बड़े आध्यात्मिक प्रयत्न से उपार्जित अधिकार तथा सत्य एवं अहिंसा के पुजारी के शस्त्रागार में सबसे शक्तिशाली अस्त्र मानते। इसीलिए खास अवसरों पर और बहुत सावधानी के साथ इसका वे प्रयोग करते। हर व्यक्ति निश्चित रूप से इस अस्त्र का उपयोग नहीं कर सकता। बापू आध्यात्मिक दृष्टि से ही इसका उपयोग करते। इससे सामान्यतः उनके स्वास्थ्य को हानि नहीं पहुँचती। वे वृद्धावस्था में भी उपवास करना कठिन नहीं मानते। कहते कि आध्यात्मिक दृष्टि से किये जाने वाले उपवास को सहन करने में कठिनाई होती ही नहीं। शरीर क्षीण होता ही, क्योंकि उसकी चरबी घटती है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पं० हरिभाऊ उपाध्यायजी ने एक बार कहा था कि बापू को उपवास से कोई आँच नहीं आती। यद्यपि उनका शरीर कमजोर हो जाता, तथापि उसमें इतनी सात्त्विक शक्ति संचित रहती कि उनका बाल बाँका नहीं हो पाता। दूसरे भोगी लोग अधिक खाते और अधिक गँवाते हैं, योगी थोड़ा खाते और अधिक संचित करते हैं। बापू अपनी इन्द्रियों द्वारा जितनी शक्ति ग्रहण करते, उससे बहुत कम खर्च करते। अतः उनकी पूँजी बहुत थी। साधारण भोगी जहाँ एक ही उपवास में ढीला-ढाला हो जाता, वहाँ बापू-जैसे योगी कई उपवासों को सहन करने की शक्ति नहीं गँवाते, बल्कि उलटा अधिक प्राप्त करते। अतः हमें उनके विषय में चिंतित होकर हतबुद्धि होने की आवश्यकता नहीं रहती।

एक प्रसंग सन् १९१४ का द० अफ्रीका का है। वहाँ चौदह दिन का अपना लम्बा उपवास तोड़ने के छठें दिन बापू मि० कलनबक को लेने फिनिक्स आश्रम से फिनिक्स स्टेशन पैदल गये और उन्होंने कलनबक को आश्चर्यचकित कर दिया।

डा० एस० सी० दास का यह कथन उल्लेख्य है कि बापू उपवास करने में बहुत निपुण थे। उन्हें उपवास-विज्ञान का गंभीर ज्ञान था। ईश्वरीय विधान में उनका पूर्ण विश्वास था। अतः वे जानते थे कि मानवजाति की सेवा के लिए उनकी और जरूरत समझी गयी तो ईश्वर उन्हें जरूर जीवित रखेगा। इसलिए उन्हें किसी प्रकार की चिंता नहीं होती और उपवास-भर वे एक दार्शनिक की भाँति शांति का उपयोग करते। इस प्रकार शारीरिक शक्ति कायम रखने के लिए

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

देहगत भोजन के रासायनिक परिवर्तन में जो शक्ति खर्च होती है, उसे भी वे कम-से-कम खर्च करते। बापू के उपवास-परीक्षाओं में से अक्षत निकल आने का कारण विविध शक्तियों का विकास, उनके आत्मनियंत्रण की विशेष शक्ति, उम्पवास-सम्बन्धी गूढ़ ज्ञान और उनके तापसिक जीवन में ढूँढ़ा जा सकता है।

बापू उपवास को ब्रह्मचर्य-पालन का अनिवार्य अंग मानते। वे कहा करते कि इन्द्रिय-दमन के हेतु से इच्छापूर्वक किये गये उपवास से उसमें बहुत सहायता प्राप्त होती है। अधिकतर उपवास करनेवालों की विफलता के सम्बन्ध में उनका कहना था कि यह मान लेना बिलकुल गलत है कि उपवास मात्र से सारा कार्य बन जायगा। ऐसे उपवास को वे बाहरी उपवास बताते, क्योंकि उस अवधि में मन छप्पन भाँति के भोगों में लिप्त रहता है, इन विचारों का स्वाद लिया जाता है कि उपवास पूर्ण होने पर अमुक वस्तुए खायेंगे। बाद में ऐसे लोग स्वादेन्द्रिय तथा जननेद्रिय दोनों पर संयम न हो सकने की बात करते हैं। उपवास से लाभ वस्तुतः तभी होता है, जब मन भी देह-दमन में सहयोग देता है। दूसरे शब्दों में—मन में विषय-वासना का लेश भी नहीं रहना चाहिये, क्योंकि उसका मूल मन है। उपवास जैसे साधनों से प्राप्त होनेवाली सफलता बहुत होते हुए भी अपेक्षाकृत कम होती है। यह कहा जा सकता है कि उपवास करनेवाला भी विषयलिप्त रहता है, लेकिन उपवास के बगैर विषय-वासना का समूल विनाश हो नहीं सकता। इसीलिए बापू इसे ब्रह्मचर्य-पालन का अनिवार्य अंग मानते।

सामाजिक कुरीतियों तथा अनेक शारीरिक व्याधियों के निर्मूलन, अपने निकट के लोगों में सद्भावना या विवेक जाग्रत करने तथा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आत्मशुद्धि के लिए भी बापू प्रायः उपवास करते। वे सदा सत्याग्रही सद्भावना और सद्उद्देश्य से किये जानेवाले उपवास के पक्ष में रहे। उनके मतानुसार सत्याग्रही उपवास सम्पत्ति आदि का अधिकार प्राप्त करने लिए नहीं होना चाहिए। अपने पिता तक के दुर्व्यसन को छुड़ाने के लिये किये उपवास को सत्याग्रही कहा जा सकता है, लेकिन पैतृक सम्पत्ति की प्राप्ति के लिये किये गये उपवास को वे दुराग्रही बताते। इसी भाँति जिनकी हमारे प्रति सहानुभूति वा मैत्री-भावना नहीं, उनके विरुद्ध किये जाने वाले उपवासों को दुराग्रही मानते। हिंसा का अवसर लानेवाले ऐसे उपवासों को वे दुराग्रही कहते। उनकी दृष्टि में सच्चा सत्याग्रही उपवास परमार्थ के लिए होता है। निजी लाभ के उद्देश्य से किये जाने वाले उपवास को वे कायरता और मूर्खता की निशानी बताते।

बापू ने यद्यपि अधिकतर उपवास आध्यात्मिक उद्देश्यों से किये, किन्तु शारीरिक लाभ के लिए वे उपवास की महत्ता पर बल देते। अधिकांश रोग व्यर्थ वस्तुएँ शरीर में पहुँचाते रहने से होते हैं। उपवास से शारीरिक पाचन-क्रिया में सुधार होता और आंतरिक स्वच्छता हो जाती है।

बापू रक्त-विकार, कब्ज, ज्वर, अरुचि, अनपच, सिर-दर्द, गठिया, वायु-विकार, वमन एवं मिचली तथा चिंताजन्य उदासी के समय उपवास की सलाह देते। कहते कि केवल उपवास से अन्य उपचार वा औषधि के बिना उपर्युक्त विकारों से मुक्ति मिल सकती है। वे न केवल रोग और शोक की अवस्था में, अपितु बेहद खुशी की हालत में भी उपवास करने को कहते।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आचार और व्यवहार

भगवान् बुद्ध के जीवन में संसार के कष्टों को देखकर जिस प्रकार त्याग की भावनाओं का उदय हुआ और जरा-व्याधि, दुःख-दारिद्र्य एवं नानाविध क्लेशों की खान के रूप में सांसारिक प्राणियों को देख वे उद्विग्न हो उठे, बापू के जीवन में अनेकानेक घटनाओं के फलस्वरूप इसी प्रकार की मनोदशा पैदा हुई थी। बापू की दिनचर्या में अत्यन्त सादगी, मितव्ययिता और उपयोग की वस्तुओं की संख्या घटाकर थोड़ी वस्तुओं द्वारा जीवन-निर्वाह की जो प्रवृत्ति देखी जाती, वह उनके जीवन के दीर्घकालिक अनुभवों से तप-तपाकर बने हुए सिद्धान्त के रूप में मानसिक भावना में ही निखर उठी। आचरण के द्वारा बापू प्रारम्भ में व्यक्ति और उसके पश्चात् समूह को सद्शिक्षा देते। बुद्ध ने अपने युग के अनुरूप कार्य किया और सर्वोपरि सत्ता को शून्यवाद के रूप में समझकर अपने आचरण और प्रयोगों के द्वारा पाली (पल्लियों या ग्रामों अर्थात् सर्वासाधारण के बोलचाल की) भाषा में उस ज्ञान का वितरणकर एशिया-खण्ड के अज्ञानांधकार को प्रकाश में परिवर्त्तित कर दिया। परम् भागवत बापू ने अपनी आती-जाती साँसों में 'सोऽहं' या अजपाजप के स्थान पर उस परम सत्य-तत्त्व को ही राम के रूप में पहचानकर प्रबल विश्वास के साथ उसे जन-जीवन में उतार दिया। देश के लाखों गाँवों के उत्थान का

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रयोगात्मक ढंग सिखाकर वे अपने युग के अनुसार बुद्ध से भी आगे बढ़कर सत्य, अहिंसा, सेवा और आत्मसम्मान, जो मानव को पशुओं से भिन्न करने वाले तत्त्व हैं, का आचरण और प्रचारकर एशिया में ही नहीं, विश्व के कोने-कोने में उच्च स्त्तरीय मानवता की प्रेरणा देनेवाली शक्ति का विकास करने में समर्थ हुए। विदेशों के मानवतावादी जनों का समूह, दुःख-द्रारिद्र्य और संघर्षरत मानव की समस्याओं का एकमात्र हल गांधी-दर्शन में ही समझ रहा है।

बुद्धकाल में प्राणियों को संसार से विरक्ति की प्रेरणा मिलती, लेकिन बापू उनकी सांसारिकता छीनना नहीं चाहते । वे उन्हें सांसारिकता में रहने की दशा में ही आचरण के माध्यम से पावन बनने की प्रेरणा दिया करते। इस प्रकार व्यष्टि और समष्टि नीचे से ऊपर उठता। बौद्धकालीन महाकवि अश्वघोष ने 'सौन्दरानन्द' महाकाव्य में बौद्ध-धर्म में दीक्षित दंपती का चित्रण किया है। वह कितना मार्मिक और संसार के विकास में बाधक है! जीवन की मधुमय आकांक्षाओं को हृदय-पेटिका में सँजोये, हलदी के पीले हाथवाली षोड़शी ललना और उसके संपूर्ण जीवन की बागडोर को अपने वश में किये यौवन की अरुणिमा से ओतप्रोत विह्वल युवक–दोनों उस युग के महान् नेता तथागत से प्रेरणा पाकर अपनी उठती हुई कुसुम-कोमल उमंगों पर शिला रख मुण्डित होते और क्षण भर में जनक-जननी को मूर्च्छित छोड़ घर से निकल जाते हैं। राजपथ के चौराहे पर पहुँचकर एक कहता है–-प्रिये! और दूसरी ओर से ध्वनि निकलती है–कहो, प्राण! अब हाथ छोड़ो और अपना रास्ता लो। महान् नेता तथागत के उपदेशों से उत्पन्न आवेश अभी दोनों में कार्यरत था। सुनकर ललना

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

के अंतःकरण में छिपा पौरुष-भाव जाग उठा। उसने हलदी से रँगी अपनी उँगलियों का संकेत कर कहा—तो, प्रियतम ! तुम्हारा मार्ग भी तो यह है—जाओ। और, दोनों एक-दूसरे को देखे बिना ही दो दिशाओं की ओर सदा के लिए चल पड़े। उस समय समीप के पेड़-पौधे, लता-गुल्म तथा पशु-पक्षी सभी करुणा की गुहार कर मौन हो गये !

बुद्ध अपनी प्रेयसी यशोधरा और पुत्र राहुल को सोते छोड़ चुपचाप चल पड़े थे। यशोधरा, बुद्ध के प्रतिबिंब राहुल को गोद में लिये-लिये 'सखि, वे मुझसे कहकर जाते' की रट लगाकर क्षीण कलेवरा होती गयी। उस युग के युवक-युवतियों को उन्होंने अपने अनुरूप ढालने की कोशिश की। बापू ने दक्षिण अफ्रीका या भारत जहाँ कहीं भी जन-जागरण किया, नर-नारी को समष्टि रूप में देखा और सदा साथ रहने की शिक्षा दी। इसके बावजूद, वे विधुरों को पुनर्विवाह करने से सदा रोकते। केवल बाल विधवाओं के पुनर्विवाह का उन्होंने समर्थन किया। कोई बाल विधवा बहन पुनर्विवाह कर बापू को प्रणाम करने जाती, तो वे अति आह्लाददायक संबोधनों से उसका स्वागत करते और अपना आशीर्वाद-रूपी प्रेम बरसाकर उसके उस नये सम्बन्ध को भारतीय संस्कृति के अनुरूप पावन बनाये रखने की सलाह देते। उनका कहना था कि अनिष्टकारक इच्छाओं का दमन करते हुए साथ रहकर कल्याणकारी जन-सेवा-कार्य में रत रहो। वे बा को कल्याण-मार्ग की प्रेरिका और अपने सत्कार्यों की सहायिका के रूप में देखते और बा के बिना उनके सभी कार्य अधूरे लगते। बापू के आश्रम में दम्पती-रूप में रहते हुए नर-नारियों ने वह साधना की, जिसका उदाहरण इतिहास में मिलना कठिन है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बापू ने अपने रहन-सहन और अपनी दिनचर्या को, इस प्रेरणा से, सादगी से पूर्ण बनाया कि भारत के करोड़ों मनुष्य विवशता के कारण जिस प्रकार जीवन-यापन करते हैं, उनका विशेषतः जैसा आहार, वस्त्र और वास-स्थान होता है, शक्ति और साधन रहते हुए हम भी वैसे रहने का व्रत लें। हमारे व्रत में प्रेमवश सहायक बनने के लिए जो आश्रमवासी बनकर हमें सहायता पहुँचाने के इच्छुक हों, वे सहर्ष हमारे सम्पर्क में आयें। श्रीमद्भागवत मे कहा गया है कि जो एक ओर अधिक संग्रह करके अपने पास रखता है और दूसरी ओर लोग भूखों मरते रहते हैं, ऐसी परिस्थिति में संग्रह करने वाला चोरी का माल रखने का अपराधी है। आधुनिक अर्थशास्त्री भी इसी नतीजे पर पहुँचते हैं। कृष्णद्वैपायन व्यास का प्राचीन अर्थशास्त्रीय दर्शन, पाश्चात्त्य दर्शन तथा गांधीवादी अर्थव्यवस्था–सभी का निष्कर्ष अंततः एक ही है और वह यह कि पूर्ण श्रम से प्राप्त होनेवाले धन से आगे और अधिक के जो तुम स्वामी बने बैठे हो, वह कहाँ से आया?

बापू भोजन और वासस्थान की सादगी से अधिक वस्त्रों की सादगी के अभिलाषी थे। ब्रिटेन के तत्कालीन प्रधानमंत्री चर्चिल उन्हें 'अर्द्ध नग्न फकीर' कहा करते। आचार्य कृपलानी का यह कथन सही है कि उन्होंने संत होने का स्वांग भरने के लिए वस्त्रों का त्याग नहीं किया। क्या आप जानते हैं कि उन्होंने आखिर यह अधूरा और अजीब-सा वेश क्यों धारण किया था?

बात सन् १९२१ या '२२ की है– असहयोग आन्दोलन के समय की। मदुरै में मजदूरों की सभा में बापू ने विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार का आग्रह किया। इस पर एक मजदूर उठा और बोला–महात्माजी,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आपका कहना ठीक है, पर जिनके पास मात्र एक-दो ही कपड़े हों, वह उन्हें जला देने के बाद अपनी लज्जा का निवारण कैसे करेगा ? यह सुनकर बापू कुछ क्षण स्तब्ध रहे और उनकी आँखें डबडबा आयीं। उसी दिन उन्होंने सिर्फ एक छोटी-सी धोती पहनने का निश्चय किया। दूसरी सभा में वे केवल एक छोटी-सी धोती पहने, खुले बदन पहुँचे और बोले कि यदि तुम्हें पर्याप्त कपड़ा न मिल सके तो मेरे-जैसा वेश रखो, किन्तु विदेशी वस्त्र मत छुओ।

ऐसा ही एक प्रसंग संभवतः उड़ीसा का है। उन दिनों बापू पूरी धोती, काठियावाड़ी अँगरखा और पगड़ी पहनते। एक दिन उन्होंने वहाँ एक महिला को देखा, जो अपना तन बहुत मुश्किल से और फुटे-पुराने गन्दे कपड़ों से ढँके थी। दूसरे शब्दों में—वह अर्धनग्ना थी। बापू ने उससे उसकी फटेहाली तथा मलिनता का कारण पूछा तो वह बोली— मेरे पास दूसरा वस्त्र है ही नहीं, जो मैं रोज नहा सकूँ, स्वच्छता से रह सकूँ और कपड़े बदल सकूँ। बापू सुनकर अवाक् रह गये। उनकी आँखों में आँसू भर आये। उन्होंने सोचा कि मैं गरीबों को प्यार करता हूँ, अपने को उनका प्रतिनिधि या सेवक कहता हूँ और उनकी यह हालत ! हाय ! उनके पास बदलने को चिथड़ा भी नहीं है ! कहते हैं कि बस उसी समय उन्होंने अपने उन कपड़ों का त्याग कर दिया और अधनंगा रूप धारण कर लिया। उनकी कच्छनुमा धोती की लंबाई ढाई गज और चौड़ाई लगभग एक गज होती।

सन् १९३० या '३२ में बापू प्रयाग में नेहरूजी के 'आनन्द-भवन' में टिके थे। जाड़े के दिन थे। उन दिनों उनके पास एक पतला ऊनी कम्बल था, जो घिसा हुआ (पुराना) था। सौराष्ट्र में बना कम्बल पुराना

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

होने पर भी गरमी देता है। नया कम्बल ग्रहण करने के आग्रह पर उन्होंने कहा था—अरे, गरीबों की ओर क्यों नहीं देखते, जो सारा जाड़ा चार हाथ के अँगोछे में काट देते हैं। मैं उन्हीं का प्रतिनिधि हूँ न ?

सन् १९३१ में गोलमेज-परिषद् में बापू लंदन गये तो सम्राट् पंचम जार्ज ने उनको मिलने के लिये आमंत्रित किया। जब वे उनके महल में जाने को निकले, तब पैरों में चप्पल, कमर में अँगोछा और कन्धे पर चादर ! अरे, इस पोशाक में सम्राट् के महल में उनसे मिलेंगे ? —ऐसा सोचा बहुतों ने, पर कहता कौन ? बापू की सुविधा पर नियुक्त अंग्रेज अफसर यह दृश्य देख तुरंत उठा, किन्तु उनसे कुछ कहना उसकी अधिकार-सीमा से बाहर था। फिर भी, संयत स्वर में उसने कहा— क्षमा कीजियेगा, क्या आप सोचते हैं कि आप बादशाह से मिलने योग्य पोशाक में जा रहे हैं ? बापू के निकट खड़े थे परिषद के एक दूसरे प्रतिनिधि, अंग्रेजी वेशभूषा से सजे-धजे, एकदम साहबबहादुर। उनकी तरफ देखकर बापू उस अफसर से बोले— आप चिन्ता न करें, बादशाह के पास हम दोनों के योग्य पोशाक होगी। जो पास खड़े थे, वे इतनी जोर से हँसे कि साहबबहादुर भी सकुचा गये और वह अफसर भी।

लौटने पर फिर किसी ने कहा— आप राजभवन में कम-से-कम अच्छा लिबास पहनकर गये होते ! बापू बोले— मेरे न सही, सम्राट् के शरीर पर तो हम दोनों के लिये पर्याप्त कपड़े थे न ?

नोबेल पुरस्कार प्राप्तकर्त्री प्रसिद्ध अमेरिकी लेखिका पर्ल एस० बक के ये शब्द यहाँ उल्लेख्य हैं कि लंदन-यात्रा के समय बापू

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अच्छी-से-अच्छी पोशाक पहन सकते थे, किन्तु यदि वे ऐसा करते तो उनके लोग उनमें संदेह कर सकते थे। उन्हें लगता कि कहीं अनजाने में यह आदमी अंग्रेजों के सामने झुक रहा है! उन्हें तो अपने अनुयायियों के साथ एकाकार होकर रहना था। यह उनकी सत्य-निष्ठा या उनके सत्य का आग्रह समझना चाहिए। इसी का परिणाम था कि वे कह सके कि मैं अकेला अपने देश के करोड़ों लोगों का प्रतिनिधित्त्व करता हूँ।

३० मार्च, सन् '४७ को बापू को पहले-पहल माउण्टबैटन से मिलने दिल्ली पहुँचना था। उनके आराम की दृष्टि से लार्ड माउण्टबैटन ने उनसे हवाई जहाज से पधारने का अनुरोध किया। उन्होंने यह कहकर उसे अस्वीकार कर दिया कि जिस वाहन में करोड़ों गरीब यात्रा नहीं कर सकते, उसमें भला वे किस तरह यात्रा कर सकते हैं! रेल से अपना काम चल जाने की बात उन्होंने कही। स्पेशल ट्रेन का अनुरोध भी उन्होंने यह कहकर टाल दिया कि उसके कारण कई ट्रेनों को रुकना पड़ेगा एवं हजारों रुपये बरबाद हो जायँगे। और, वे साधारण ट्रेन से दिल्ली गये। संयोगवश मनु बहन ने सुविधा की दृष्टि से उस ट्रेन में एक के बदले दो डिब्बे रोक लिये तो बापू बोले कि यह सैलून माँगने-जैसा है। और, उन्होंने स्टेशन मास्टर को बुलवाकर वह अतिरिक्त डिब्बा उनके जिम्मे कर दिया।

बापू गरीबों के प्रतिनिधि थे। उनको न मिलनेवाली सुविधा का लोभ स्वेच्छा से छोड़ देना वे अपना धर्म समझते। अपनी इसी प्रवृत्ति के अनुसार जब वे तीसरी श्रेणी में यात्रा कर रहे थे तो किसी ने उनसे पूछा—आप तीसरी श्रेणी में ही यात्रा क्यों करते हैं? बापू ने उत्तर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दिया– इसलिए कि चौथा दर्जा हमारी रेलों में नहीं होता। प्रश्नकर्त्ता महाशय उनकी तरफ भौंचक देखते रह गये।

स्वास्थ्य ठीक न रहने के कारण यदि कभी बापू तीसरी श्रेणी में यात्रा न कर पाते तो उन्हें बहुत दुःख होता। उन्होंने प्रसंगवश एक बार कहा था कि वे टेलीफोन नहीं चाहते थे, किन्तु घनश्यामदासजी बिड़ला ने लगवा दिया। उनकी दृष्टि में वर्धा से सेवाग्राम तक सड़क की आवश्यकता भी नहीं थी, लेकिन मध्य प्रदेश सरकार ने बनवा दी। मोटर भी वे नहीं चाहते थे, परंतु जमनालालजी बजाज नहीं मानते थे। लोग प्रेम से सुविधाएँ दे देते थे, तो वे स्वीकार कर लेते थे; किन्तु हवाई जहाज या स्पेशल ट्रेन तो वे अपने लिए हर्गिज सहन नहीं कर सकते थे। कहते कि आखिर यह सारा व्यय-भार गरीबों पर ही पड़नेवाला है न! एक दिन देर से पहुँचने से प्रलय तो हो नहीं जायगा! काल-प्रवाह इसी प्रकार चलता रहेगा, जिसे कोई कम-अधिक नहीं कर सकता। गति में वृद्धि हो जाने के कारण जगत् का कुछ लाभ हुआ हो, ऐसा नहीं और, ऐसे प्रस्तावों को वे एक नयी व्याधि की संज्ञा देते।

बापू की दैनंदिन उपयोग एवं आवश्यकता की वस्तुओं में से कुछ की चर्चा पिछले अध्याओं में आ चुकी है। शेष वस्तुओं में—लोहे की एक भी कील के बिना निर्मित एक छोटा-सा साधारण रेक या टेबुल रहता और उनकी गादी के पैरों की ओर छोटा-सा एक दूसरा टेबुल लालटेन रखने के लिये। छोटी-छोटी चीजें रखने के लिए थीं मिट्टी की दो डिबियाँ। जल की शीशी, कागजों को दबाये रखने के लिए छोटे-छोटे पत्थरों के बने 'पेपरवेट' और 'वानर त्रिमूर्ति'-सरीखी इनी-गिनी कुछ वस्तुएँ और भी थीं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बापू आश्रम में खड़ाऊँ और अन्यत्र मुर्दार चमड़े के मोटे चप्पल पहनते । नोवाखाली में वे 'करो या मरो' की प्रतिज्ञा पूर्ण करने के लिए नंगे पैरों चले । वहाँ वे नंगे पैर नहीं गये थे । वहाँ पहुँचने पर उनको प्रेरणा मिली और उन्होंने चप्पल पहनना छोड़ दिया । आभा बहन के आग्रह पर बापू बोले–अब तो यह मेरी यात्रा बन गयी है और यात्रा नंगे पैरों से ही हो सकती है । इसी प्रकार सन् '१८ में खेड़ा-सत्याग्रह के समय अप्रैल की कड़ाके की धूप में और पूर्ण तप्त जमीन पर, जहाँ किसी पेड़ की छाया भी सुलभ नहीं थी, वे नंगे पैरों चले । ऐसे थे बापू और ऐसी थी उनकी दिनचर्या, जीवनचर्या ! ●

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रार्थना

प्रातःकालीन प्रार्थना

१—बौद्ध मंत्र

नं म्यो हो रेंगे क्यो।

हरिः ॐ

२—उपनिषद्-मंत्र

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यांजगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः मा गृधः कस्यस्विद्धनम्॥

३—प्रातःस्मरण

प्रातः स्मरामि हृदि संस्फुरदात्मतत्त्वम्
सच्चित्सुखं परमहंसगतिं तुरीयम्।
यत्स्वप्नजागरसुषुप्तमवैति नित्यं
तद्ब्रह्म निष्कलमहं न च भूतसंघः॥१॥
प्रातर्भजामि मनसा वचसामगम्यं
वाचो विभान्ति निखिला यदनुग्रहेण।
यन्नेतिनेतिवचनैर्निगमा अवोचन्
तं देवदेवमजमच्युतमाहुरग्र्यम्॥२॥
प्रातर्नमामि तमसः परमर्कवर्णं
पूर्णं सनातनपदं पुरुषोत्तमाख्यम्।
यस्मिन्निदं जगदशेषमशेषमूर्त्तौ
रज्ज्वां भुजंगम इव प्रतिभासितं वै॥३॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

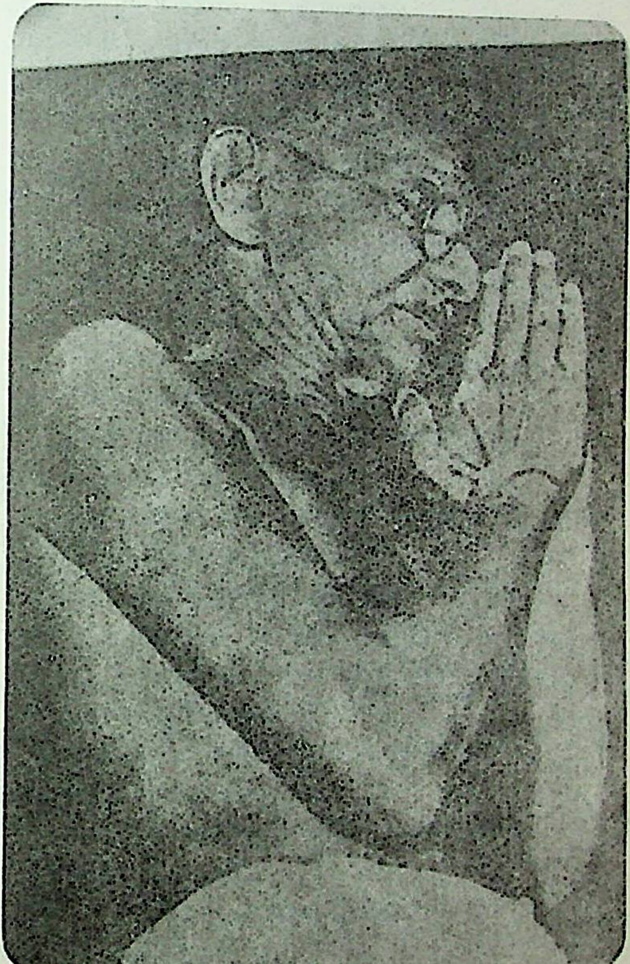

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

'सकल लोक माँ सहुने वंदे ...

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समुद्रवसने ! देवि ! पर्वतस्तनमण्डले ! ।
विष्णुपत्नि ! नमस्तुभ्यं पादस्पर्शं क्षमस्व मे ॥४॥
या कुन्देन्दुतुषारहारधवला या शुभ्रवस्त्रावृता
या वीणावरदण्डमण्डितकरा या श्वेतपद्मासना ।
या ब्रह्माच्युतशङ्करप्रभृतिभिर्देवैः सदा वन्दिता
सा मां पातु सरस्वती भगवती निःशेषजाड्यापहा ॥५॥
वक्रतुण्ड ! महाकाय ! सूर्यकोटिसमप्रभ ! ।
निर्विघ्नं कुरु मे देव ! सर्वकार्येषु सर्वदा ॥६॥
गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः ।
गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नमः ॥७॥
शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशम्
विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभाङ्गम् ।
लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यम्
वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम् ॥८॥
करचरणकृतं वाक्कायजं कर्मजं वा
श्रवणनयनजं वा मानसंवाऽपराधम् ।
विहितमविहितं वा सर्वमेतत् क्षमस्व
जय जय करुणाब्धे ! श्रीमहादेव शम्भो ! ॥९॥
नत्वहं कामये राज्यं न स्वर्गं नापुनर्भवम् ।
कामये दुःखतप्तानां प्राणिनामार्तिनाशनम् ॥१०॥
स्वस्ति प्रजाभ्यः परिपालयन्तां
न्याय्येन मार्गेण महीं महीशाः ।
गोब्राह्मणेभ्यः शुभमस्तु नित्यं
लोकाः समस्ताः सुखिनो भवन्तु ॥११॥
नमस्ते सते ते जगत्कारणाय
नमंस्ते चिते सर्वलोकाश्रयाय
नमोऽद्वैततत्वाय मुक्तिप्रदाय
नमो ब्रह्मणे व्यापिने शाश्वताय ॥१२॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

त्वमेकं शरण्यं त्वमेकं वरेण्यम्
त्वमेकं जगत्पालकं स्वप्रकाशम् ।
त्वमेकं जगत्कर्तृपातृ प्रहर्तृ
त्वमेकं परं निश्चलं निर्विकल्पम् ॥१३॥
भयानां भयं भीषणं भीषणानां
गतिः प्राणिनां पावनं पावनानाम् ।
महोच्चैः पदानां नियन्तृ त्वमेकं
परेषां परं रक्षणं रक्षणानाम् ॥१४॥
वयं त्वां स्मरामो वयं त्वां भजामो
वयं त्वां जगत्साक्षिरूपं नमामः ।
सदेकं निधानं निरालम्बमीशं
भवाम्भोधिपोतं शरण्यं व्रजामः ॥१५॥

४—एकादश व्रत

अहिंसा सत्य अस्तेय ब्रह्मचर्य असंग्रह ।
शरीरश्रम अस्वाद सर्वत्र भयवर्जन ॥
सर्व धर्मी समानत्त्व स्वदेशी स्पर्शभावना ।
हीं एकादश सेवावी नम्रत्वे व्रतनिश्चये ॥

५—कुरान की आयतें

पनाह

अऊजुबिल्लाहि मिनश् शैतानिर् रजीम् ।

अल् फातिहा

बिस्मिल्लाहिर् रहमानिर् रहीम ।
अल् हम्दु लिल्लाहि रब्बिल् आलमीन ।
अर् रहमानिर् रहीम, मालिकि यौमिद् दीन ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ईयाकं नअबुदु व ईयाक नस्तईन।
इह्दिनस् सिरातल् मुस्तकीम।
सिरातल् लजीन अन् अम्त अलैहिम;
गैरिल मगजबे अलैहिम व लज्ञुआल्लीन॥

आमीन।

सूरत-इ-इखलास

बिस्मिल्लाहिर् रह्मानिर् रहीम।
कुल हुवल्लाहु अहद। अल्लाहुस्समद्।
लम् यलिद्, वलम् यूलद्;
व लम् यकुल्लहू कुफवन् अहद्॥

६— जरथोस्ती गाथा

मजदा अत मोइ वहिश्ता
स्रबा ओस्चा श्योथनाचा वओचा।
ता—तू वहू मनंधहा
अशाचा इषुदेम स्तुतो
क्षमा का श्रथा अहूरा फेरषेम्
वस्ना हइ श्येम् दाओ अहूम्॥

७—भजन

८—धुन

९— गीता-पाठ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सायंकालीन प्रार्थना

१– बौद्ध मंत्र
२–ध्यान
३– उपनिषद्-मंत्र

यं ब्रह्मा वरुणेन्द्ररुद्रमरुतः स्तुन्वन्ति दिव्यैः स्तवै–
वेंदैः साङ्गपदक्रमोपनिषदैर्गायन्ति यं सामगाः ।
ध्यानावस्थिततद्गतेन मनसा पश्यन्ति यं योगिनो
यस्यान्तं न विदुः सुरासुरगणा देवाय तस्मै नमः ॥

४–स्थितप्रज्ञ के लक्षण

अर्जुन उवाच :

स्थितप्रज्ञस्य का भाषा समाधिस्थस्य केशव !
स्थितधीः किं प्रभाषेत किमासीत व्रजेत किम ॥१॥

श्रीभगवान् उवाच :

प्रजहाति यदा कामान् सर्वान्पार्थ ! मनोगतान् ।
आत्मन्येवात्मना तुष्टः स्थिप्रज्ञस्तदोच्यते ॥२॥
दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः ।
वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनि रुच्यते ॥३॥
यः सर्वत्रानभिस्नेहस्त तत्प्राप्य शुभाशुभम् ।
नाभिनन्दति न द्वेष्टि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥४॥
यदा संहरते चायं कूर्मोऽङ्गानीव सर्वशः ।
इन्द्रीयाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥५॥
विषया विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिनः ।
रसवर्जं रसोऽप्यस्य परं द्रष्ट्वा निवर्तते ॥६॥
यततो ह्यपि कौन्तेय ! पुरुषस्य विपश्चितः ।
इन्द्रियाणि प्रमाथीनि हरन्ति प्रसभं मनः ॥७॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तानि सर्वाणि संयम्य युक्त आसीत मत्परः।
वशे हि यस्येन्द्रियाणि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥८॥
ध्यायतो विषयान्पुंसः संगस्तेषूपजायते।
संगात्संजायते कामः कामात्क्रोधोऽभिजायते ॥९॥
क्रोधाद्भवति संमोहः संमोहात्स्मृतिविभ्रमः।
स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति ॥१०॥
रागद्वेषवियुक्तैस्तु विषयानिन्द्रियैश्चरन्।
आत्मवश्यैर्विधेयात्मा प्रसादमधिगच्छति ॥११॥
प्रसादे सर्व दुःखानां हानिरस्योपजायते।
प्रसन्नचेतसो ह्याशु बुद्धिः पर्यवतिष्ठते ॥१२॥
नास्ति बुद्धिरयुक्तस्य न चायुक्तस्य भावना।
न चाभावयतः शान्तिर्शान्तस्य कुतः सुखम् ॥१३॥
इन्द्रियाणां हि चरतां यन्मनोऽनुविधीयते।
तदस्य हरति प्रज्ञां वायुर्नावमिवाम्भसि ॥१४॥
तस्माद्यस्य महाबाहो! निगृहीतानि सर्वशः।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥१५॥
या निशा सर्व भूतानां तस्यां जागर्ति संयमी।
यस्यां जाग्रति भूतानि सा निशा पश्यतो मुनेः॥१६॥
आपूर्यमाणमचलप्रतिष्ठं
समुद्रमापः प्रविशन्ति यद्वत्।
तद्वत्कामायं प्रविशन्ति सर्वे
स शान्तिमाप्नोति न कामकामी ॥१७॥
विहाय कामान्यः सर्वान्पुमांश्चरति निःस्पृहः।
निर्ममो निरहङ्कारः स शान्तिमधिगच्छति ॥१८॥
एषा ब्राह्मी स्थितिः पार्थ! नैनां प्राप्य विमुह्यति।
स्थित्वाऽस्यामन्तकालेऽपि ब्रह्मनिर्वाणमृच्छति॥१९॥

५– एकादश व्रत ६–कुरान की आयतें ७–जरथोस्ती गाथा
८– भजन ९–धुन। ●

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रिय भजन

: १ :

वैष्णवजन तो तेने कहीए जे पीड पराई जाणे रे ;
परदुःखे उपकार करे तोये, मन अभिमान न आणे रे।
सकळ लोकमां सहुने वंदे, निन्दा न करे केनी रे ;
वाच काछ मन निश्चळ राखे, धन-धन जननी तेनी रे।
समदृष्टि ने तृष्णा त्यागी, परस्त्री जेने मात रे ;
जिह्वा थकी असत्य न बोले, परधन नव झाले हाथ रे।
मोह माया व्यापे नहिं जेने, दृढ़ वैराग्य जेना मनमां रे ;
रामनाम शुं ताळी लागी, सकळ तीरथ तेना तनमां रे।
वण लोभी ने कपटरहित छे, काम क्रोध निवार्‍या रे ;
भणे नरसैयो तेनुं दरसन करतां कुळ एकोतेर तार्‍यां रे।

: २ :

रघुवर! तुमको मेरी लाज!
सदा-सदा मैं सरन तिहारी, तुम बड़े गरीबनिवाज॥
पतित-उधारन बिरुद तिहारो, स्रवनन सुनी अवाज।
हौं तो पतित पुरातन कहिये, पार उतारो जहाज॥
अघ-खण्डन, दुःख-भंजन जन के यही तिहारो काज।
तुलसिदास पर किरपा करिये भक्ति-दान देहु आज॥

: ३ :

वृक्षन से मत ले, मन तू वक्षन से मत ले !
काटे वाको क्रोध न करहीं, सिंचत न करहिं नेह॥ मन तू...
धूप सहत अपने सिर ऊपर, और को छाँह करेत।
जो वाही को पथर चलावे, ताही को फल देत॥ मन तू...
धन्य-धन्य जे पर उपकारी, वृथा मनुज की देह।
सूरदास प्रभु कहँ लगि बरनौं, हरिजन की मत ले॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

: ४ :

हरि ! तुम हरो जन की भीर !
द्रौपदी की लाज राखी, तुम बढ़ायो चीर।
भक्त कारन रूप नरहरि, धर्‌यो आप शरीर।
हरिनकश्यप मार लीन्हों, धर्‌यो नाहिन धीर।
बूड़ते गजराज राख्यो, कियो बाहर नीर।
दास मीरा लाल गिरधर, दुःख जहाँ तहँ पीर॥

: ५ :

उठ जाग मुसाफिर भोर भई, अब रैन कहाँ जो सोवत है ?
जो जागत है सो पावत है, जो सोवत है सो खोवत है।
टुक नींद से अँखियाँ खोल जरा, ओ गाफिल रब से ध्यान लगा।
यह प्रीत करन की रीत नहीं, रब जागत है तू सोवत है।
अय जान, भुगत करनी अपनी, ओ पापी ! पाप में चैन कहाँ ?
जब पाप की गठरी सीस धरी, फिर सीस पकड़ क्यों रोवत है ?
जो काल करे सो आज करले, जो आज करे सो अब कर ले।
जब चिड़ियन खेती चुगि डाली, फिर पछताए क्या होवत है ?

: धुन :

रघुपति राघव राजाराम ;
पतित पावन सीताराम।...
सीताराम, सीताराम ;
भज प्यारे तू सीताराम।
ईश्वर- अल्लाह तेरे नाम ;
सबको सन्मति दे भगवान्।
रघुपति राघव राजाराम ;
पतित पावन सीताराम।...

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एकादश व्रत

१. सत्य– सत्य ही परमेश्वर है। सत्य आग्रह, सत्य विचार, सत्य वाणी और सत्य कर्म–ये सब उसके अंग हैं। जहाँ सत्य है, वहाँ शुद्ध ज्ञान है और जहाँ शुद्ध ज्ञान है, वहाँ आनन्द ही हो सकता है।

२. अहिंसा–सत्य ही परमेश्वर है। उसके साक्षात्कार का एक ही मार्ग, एक ही साधन है–अहिंसा। बगैर अहिंसा के सत्य की खोज असंभव है।

३. ब्रह्मचर्य–ब्रह्मचर्य का अर्थ है–ब्रह्म की–सत्य की खोजकी चर्या, अर्थात् उससे संबंध रखने वाला आचार। इस मूल अर्थ में से सर्वेन्द्रिय संयम का विशेष अर्थ निकलता है। केवल जननेन्द्रिय-संयम के अधूरे अर्थ को हमें भूल जाना चाहिए।

४. अस्वाद–मनुष्य जब तक जीभ के रसों को न जीते, तब तक ब्रह्मचर्य का पालन अति कठिन है। भोजन केवल शरीर-पोषण के लिए हो, स्वाद या भोग के लिए नहीं।

५. अस्तेय– दूसरे की चीज को उसकी इजाजत के बिना लेना तो चोरी है ही ; लेकिन मनुष्य अपनी कम-से-कम जरूरत के अलावा जो कुछ लेता या संग्रह करता है, वह भी चोरी ही है।

६. अपरिग्रह–सच्चे सुधार की निशानी परिग्रह-वृद्धि नहीं, बल्कि विचार और इच्छापूर्वक उसे कम करना है। ज्यों-ज्यों परिग्रह कम होता है, सुख और सच्चा संतोष बढ़ता है, सेवा-शक्ति बढ़ती है।

७. अभय–जो सत्यपरायण रहना चाहे, वह न तो जाति-बिरादरी से डरे, न सरकार से, न चोर से, न बीमारी या मौत से और न किसी के बुरा मानने से।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

८. अस्पृश्यता-निवारण—छुआछूत हिंदू-धर्म का अंग नहीं। इतना ही नहीं, बल्कि उसमें घुसी हुई सड़न है, बहम है, पाप है और उसका निवारण करना प्रत्येक हिंदू का धर्म है, कर्त्तव्य है।

९. शरीर-श्रम—जिनका शरीर काम कर सकता है, उन स्त्री-पुरुषों को अपना रोजमर्रा का सभी काम, जो खुद कर लेने लायक हो, खुद कर लेना चाहिए और बिना कारण दूसरों से सेवा नहीं लेनी चाहिए। जो खुद मेहनत न करें, उन्हें खाने का हक ही क्या?

१०. सर्व धर्म समभाव—जितनी इज्ज़त हम अपने धर्म की करते हैं, उतनी ही इज्ज़त हमें दूसरों के धर्म की करनी चाहिए। जहाँ यह वृत्ति रहती है, वहाँ एक दूसरे के धर्म का विरोध हो ही नहीं सकता, न परधर्मी को अपने धर्म में लाने की कोशिश हो सकती है; बल्कि हमेशा प्रार्थना यही की जानी चाहिए कि सब धर्मों में पाए जाने वाले दोष दूर हों।

११. स्वदेशी—अपने आसपास रहने वालों की सेवा में ओत-प्रोत हो जाना स्वदेशी-धर्म है। जो निकट वालों की सेवा छोड़कर दूर वालों की सेवा करने दौड़ता है, वह स्वदेशी का भंग करता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जीवन-क्रम

१८६९ – २ अक्तूबर को पोरबन्दर में जन्म।

१८७६ – राजकोट में प्रारम्भिक शिक्षा।

१८८३ – कस्तूरबा से विवाह।

१८८८ – ४ सितम्बर को शिक्षा के लिए विलायत प्रस्थान।

१८८९ – विलायत के निरामिषाहारियों की सभा में प्रथम सार्वजनिक भाषण।

१८९१ – १० जून को बैरिस्टर हुए ; ७ जुलाई को बम्बई पहुँचे ; मातृवियोग का संवाद।

१८९२ – राजकोट तथा बम्बई में वकालत।

१८९३ – अप्रैल में वकालत के लिए दक्षिण अफ्रीका रवाना।

१८९५ – नेटाल भारतीय कांग्रेस का संगठन।

१८९६ – स्वदेश वापस ; लोकमान्य तिलक तथा गोखले आदि नेताओं से भेंट ; २८ नवम्बर को सपरिवार पुनः अफ्रीका यात्रा।

१८९९ – बोअर-युद्ध में अंग्रेजों की सहायता।

१९०१ – पुनः भारत-आगमन ; कलकत्ता-कांग्रेस में सम्मिलित ; बर्मा-यात्रा; तीसरे दर्जे में भारत-प्रवास।

१९०२ – मार्च में बंबई में कार्यालय; तीन महीने बाद दक्षिण अफ्रीका के लिए पुनः प्रस्थान।

१९०३ – ट्रांसवाल ब्रिटिश इंडियन एसोसियेशन की स्थापना।

१९०४ – गीताध्ययन ; 'इंडियन ओपीनियन' का सम्पादन ; 'आरोग्य विषयक सामान्य ज्ञान' पुस्तक लिखी ; रस्किन के 'अंटु दिस लास्ट' (सर्वोदय) को पढ़कर जीवन में क्रान्तिकारी परिवर्तन। 'फिनिक्स आश्रम' की स्थापना।

१९०६ – जुलू-विद्रोह ; घायलों की सेवा ; पूर्ण ब्रह्मचर्य की प्रतिज्ञा ; 'सत्याग्रह' शब्द का आविष्कार।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१९०७ – शिष्टमंडल के साथ विलायत-यात्रा ; खूनी कानून के विरुद्ध सत्याग्रह।

१९०८– अन्तरिम समझौता ; पठान-द्वारा आक्रमण ; सत्याग्रह पुनः प्रारम्भ; गिरफ्तारी।

१९०९– टालस्टाय को प्रथम पत्र: शिष्टमंडल में विलायत रवाना; द० अफ्रीका लौटते समय 'हिन्द स्वराज्य' लिखा।

१९१०– जोहांसबर्ग में 'टालस्टाय फार्म' की स्थापना।

१९१२– गोखलेजी की दक्षिण अफ्रीका यात्रा ; 'नीति-धर्म' प्रकाशित।

१९१३– सत्याग्रह पुनः प्रारम्भ ; गिरफ्तारी व रिहाई ; सात दिन का उपवास तथा साढ़े चार मास तक एक समय भोजन।

१९१४– द० अफ्रीका का सदा के लिए त्यागकर भारत आगमन।

१९१५– अहमदाबाद के निकट 'सत्याग्रह आश्रम' स्थापित।

१९१७– चम्पारण – सत्याग्रह का सफल नेतृत्त्व।

१९१८– खेड़ा-सत्याग्रह ; अंग्रेजी साप्ताहिक 'यंग इंडिया' तथा गुजराती साप्ताहिक 'नवजीवन' का सम्पादन।

१९२०– भारतीय स्वराज्य लीग के अध्यक्ष निर्वाचित।

१९२१– खादी और चरखा-प्रचार आरंभ।

१९२२– चौरीचौरा – काण्ड के कारण सत्याग्रह स्थगित ; यरवदा जेलयात्रा ; छह साल की सजा।

१९२८– साइमन कमीशन ; बारडोली सत्याग्रह ; नेहरू-रिपोर्ट ; कलकत्ता-कांग्रेस।

१९२९– लाहौर-कांग्रेस में पूर्ण स्वाधीनता का प्रस्ताव।

१९३०– २६ जनवरी को पूर्ण स्वाधीनता की प्रतिज्ञा ; १२ मार्च को नमक कानून तोड़ने के लिए दाण्डी-यात्रा; गिरफ्तारी।

१९३१– २५ जनवरी को रिहाई ; ४ मार्च को बापू-इरविन-समझौता ; कराँची-कांग्रेस ; द्वितीय गोलमेज परिषद् में भारत के एकमात्र प्रतिनिधि निर्वाचित।

१९३२– सत्याग्रह पुनः प्रारम्भ ; कांग्रेस गैरकानूनी घोषित ; ४ जनवरी को गिरफ्तारी ; 'नवजीवन' 'यंग इण्डिया' पत्र बन्द ; २० सितम्बर से हरिजनों को अलग मताधिकार के कारण आमरण अनशन ; २४ सितम्बर :-यरवदा-समझौता।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१९३३– ८ मई से २१ दिन का उपवास ; 'हरिजन' पत्रों का प्रारम्भ ; रिहाई, फिर गिरफ्तारी ; एक वर्ष की सजा ; १६ अगस्त को आमरण उपवास ; २३ अगस्त को रिहाई; साबरमती-आश्रम का त्याग ; ७ नवम्बर से हरिजन-यात्रा।

१९३४– ७ अगस्त को सत्याग्रह स्थगित ; सात दिन का उपवास ; बंबई कांग्रेस ; २६ अक्तूबर को 'ग्रामोद्योग-संघ' की स्थापना।

१९३६– 'सेवाग्राम - आश्रम' की स्थापना।

१९३७– जुलाई में कांग्रेस-पदग्रहण ; नई तालीम शुरू।

१९३९– राजकोट में आमरण अनशन ; ८ नवम्बर को प्रान्तों में कांग्रेस-सरकारों-द्वारा पद-त्याग।

१९४०– ११ अक्तूबर से व्यक्तिगत सत्याग्रह—विनोबाजी प्रथम सत्याग्रही ; 'हरिजन' पत्रों पर रोक।

१९४१– कांग्रेस के नेतृत्त्व से मुक्ति।

१९४२– कांग्रेस का पुनः नेतृत्व ; क्रिप्स-मिशन ; ८ अगस्त को 'भारत छोड़ो' प्रस्ताव ; नेताओं की गिरफ्तारी ; १५ अगस्त को पूना के आगाखाँ-महल में महादेव भाई देसाई का देहांत।

१९४३– आगाखाँ महल में इक्कीस दिन का उपवास।

१९४४– २२ फरवरी को राष्ट्रमाता कस्तूरबा की मृत्यु ; ६ मई को जेल से रिहाई ; बापू-जिन्ना वार्त्ता।

१९४५– पहला शिमला-सम्मेलन।

१९४६– कैबिनेट-मिशन ; मुस्लिम लीग द्वारा १६ अगस्त को प्रत्यक्ष कार्रवाई दिवस ; साम्प्रदायिक दंगे।

१९४७– नोवाखाली की पद-यात्रा।

१९४८– दिल्ली में आमरण उपवास, जो पाँच दिन चला ; ३० जनवरी को महाप्रयाण।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

डॉ० गौरीशंकर गुप्त

जन्म : प्रतिष्ठित मारवाड़ी अग्रवाल परिवार में २९ सितम्बर १९३२।

लेखन : सन् १९४४ से, प्रथम पुस्तक सन् १९४७ में प्रकाशित, वरिष्ठ साहित्यकार, कवि और स्वतंत्र पत्रकार, देश की शीर्षस्थ पत्र-पत्रिकाओं में अनेक रचनाएँ प्रकाशित तथा आकाशवाणी द्वारा वार्त्ताओं, परिचर्चाओं और राष्ट्रीय कविताओं का प्रसारण।

कृतियाँ : 'बापू और उनकी दिनचर्या', 'पत्रकार बृहत्त्रयी', 'गीतोपदेश', 'गांधीत्रयी', 'स्मृतिचित्र', 'पत्रांजलि', 'सुखी गृहस्थ', 'जय राष्ट्र!' (कविता संग्रह), 'स्वतंत्र पत्रकारिता', 'कहावतों में स्वास्थ्य', 'प्राकृतिक चिकित्सा', 'नींबू और स्वास्थ्य', 'चना और स्वास्थ्य', 'स्वास्थ्य-प्रवेशिका', 'प्रारंभिक स्वास्थ्य' तथा 'ऋतु और स्वास्थ्य'।

सम्मान : 'राष्ट्रमुकुटमणि', 'राष्ट्रश्री' तथा 'विद्यावाचस्पति' आदि मानद उपाधियाँ तथा मानपत्र। राष्ट्रनिर्माताओं तथा मूर्धन्य साहित्यकारों, पत्रकारों एवं कवियों से निकट-सम्पर्क।

स्वत्वाधिकारी : 'राष्ट्रपिता प्रकाशन' एवं 'श्यामसुंदर रसायनशाला प्रकाशन'।

प्रधान मंत्री : राष्ट्रकवि परिषद्

सम्पर्क-सूत्र : के० १/९–ए०, गायघाट, वाराणसी-२२१००१

दूरभाष : ३३४१२२

राष्ट्रपिता प्रकाशन
वाराणसी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri